अंतिम विजय

अंतिम विजय

(सामाजिक उपन्यास)

रघुवीर

वितरक

सस्ता साहित्य भण्डार

जामा मस्जिद डिस्पेंसरी दिल्ली-११०००६.

अप्रैल मास की एक उदास सध्या-अस्ताचलगामी भगवान भास्कर, इस समय अपने किरण जाल को समेट रहे थे। बिदाई के समय उन्होंने एक पल अनुराग भरी सृष्टि से दृष्टि को देख स्वर्ण वृष्टि की और रजनी रानी के पर्यंक मे विश्राम के लिये चल दिये। ईर्षालु मानव समुदाय को यह बात अच्छी न लगी। उसने सूर्य के सखा रजनीश के उदय होने से पूर्व ही स्वय निर्मित प्रकाश से सृष्टि का शृंगार किया।

और फिर कनाटप्लेस का गोलाकार पार्क सहसा ही विद्युत प्रकाश से जगमगा उठा। मानो की प्रतिस्पर्धा और भी तीव्र हो गई। पक्षीगण इधर उधर से आकर पार्क के वृक्षो पर आश्रय खोजने लगे। परन्तु रजनी और राजेश अब भी पार्क मे ही बैठे थे। ये दोनो सह-पाठी प्रेमसूत्र मे बँध चुके थे। यह स्थान उनके लिये नवीन नही था। तीन वर्ष से ये निरन्तर इसी पार्क और इसी हरी-हरी घास पर आकर बैठते रहे थे। यहाँ इन्होने सदैव अपने भावी जीवन की गुत्थी सुलझाई और वह उलझती ही गई। उन्होने उलझन मे भी एक नवीनता पाई जो आज न थी। रजनी को लग रहा था—जैसे उसका भाग्य भास्कर अभी अस्त हो रहा है। वह दृष्टि झुकाये घास के तिनको से खेल रही थी। उसके मन की उदासी मुखाकृति पर अकित थी। कातर वाणी मे उसने राजेश से कहा।

"आप विश्वास करे, मनुष्य परिस्थिति का दास है।"

राजेश ने रजनी के मुख पर आँखे गडाते हुए उत्तर दिया—

"मुझे तुम्हारी प्रत्येक बात पर विश्वास है रजनी! साथ ही तुम्हे भी विश्वास करना चाहिये कि सबल व्यक्तित्व की परिस्थिति दासी होती है। क्या तुमने तीन वर्ष की सहशिक्षा मे भी मुझे नही पहचाना? मेरे विचार मे यह हमारी वियोग वेला न होकर सदैव के लिये स्थिर

मिलन की पृष्ठभूमि मात्र है। इसीलिये अविश्वास को मन मे स्थान न दो। दो आत्माओ के इस मिलन को ससार की कोई शक्ति पृथक नही कर सकती। यह प्रेम की अग्नि परीक्षा की बेला है। इस समय तुम साहस का परिचय देना चाहिए।"

"साहस हो तो साहस का परिचय दूँ राजेश। आप से छुपा तो कुछ भी नही है। भारत विभाजन के समय ही मै पगु बन चुकी थी। किशोर अवस्था मे जिसके माता-पिता साम्प्रदायिक दगो के शिकार हो गये हो, उसमे आप ही बताये, साहस आयेगा कहाँ से ?"

"देखो रजनी! कुसमय मे अतीत को जितना भी सम्भव हो शीघ्र भूल जाना चाहिए। मेरी दृष्टि मे तो जीवन छोटी-बडी कडियो की एक ऐसी अद्भुत शृ खला है, जिसमे न चाहने पर भी प्रत्येक प्राणी को बधना पडता है। विश्वास करो, अब तुम भी बध चुकी हो।"

"लता का बल वृक्ष का आश्रय होता है राजेश। नियति की उपेक्षा और मानवी प्रहार ने मुझे इतना दुर्बल बना दिया है, कि अब जीवन पथ मे एक छोटी सी रोडी भी पर्वत की बाधा बन कर खडी हो जाती है। सच मानिए आपको पाकर मै सब कुछ भूल चुकी थी। तीन वर्ष तक जिस कल्पवृक्ष के नीचे स्वर्गिक आनन्द पा चुकी हूँ, भला उससे दूर होने पर अब कैसे जी सकूँगी ?"

यह कहते हुए रजनी की आँखो में आँसू छलक आये।

राजेश ने जेब से रूमाल निकाल रजनी के अश्रुमुक्ताओ को जीवन निधि जानकर जेब मे रख लिया। रजनी ने भी अपने दोनो हाथ राजेश के पगो पर टिका दिये। मानो वह अपने अतीत के धुँधले चित्रो को नेत्र जल से धोने का प्रयत्न कर रही हो। उसी समय राजेश ने रजनी के हाथो को अपने हाथो मे लेकर हार्दिक प्रेम को मूक रूप से व्यक्त किया। गम्भीर भाव से वह बोला—

"समर्पण मे विश्वास की महिमा को न भूलो रजनी! मैने तुम्हारे सर्वस्व को ग्रहण करते समय भावी परिस्थिति पर भली प्रकार विचार

"ठीक है राजेश। साथ ही यह भी सत्य है— प्रेम सम्बन्ध के सूत्र को इस समाज के कठोर नियमो की कतरनी एक पल मे ही काट देती है। सत्य मानो, मुझे इस कतरनी से बहुत डर लगता है।"

"कैसी बाते कर रही हो रजनी। मुझे पिता जी पर पूर्ण विश्वास है। मेरी प्रसन्नता के लिये वे आज तक सब कुछ करते आ रहे है। मै उन्हे विवाह के लिए भी विवश कर दूँगा। आधुनिक समाज की वैवाहिक नियमावली मेरे लक्ष्य की बाधक नही बन पायेगी।"

"आपके इस कथन की सभ्यता का समय ही साक्षी होगा।"

रजनी जैसे विश्वास के सोपान से फिसल पडी हो।

"समय के साथ ही साक्षी के लिए क्या यह हरी घास पर्याप्त नही है। इसी के वक्ष पर तो हमने सर्वोत्तम सम्बन्ध वेदी के प्रथम मत्रो का तीन वर्ष उच्चारण किया है।"

"आप कुछ भी कहें। सत्य तो यह है. मै अब आपके बिना रह ही नही सकती। मुझे तो अब आप यह बताये कि हमारा स्थाई मिलन कितने दिनो मे सम्भव है।"

"मेरी रजनी। अधीर न हो। घर जाते ही सर्वप्रथम कुशल-पत्र लिखूंगा। पन्द्रह दिन मे विवाह का निर्णय पत्र तुम्हारे पास आ जाएगा इसके पश्चात् एक मास के भीतर तुम्हारा राजेश भी तुम्हारे पास आकर रहेगा। इन दिनो मे वियोग की ज्वाला को दूरी की वायु जब भी भडकाए तुम्हे विश्वास के जल से बुझाना ही होगा।"

"इस समय मुझे स्मृति-चिन्ह भी तो चाहिए।"

"और मुझे स्मृति-अवलम्बन।"

कहते हुए राजेश ने रजनी के कपोल पर धीमी सी चपत लगा दी। रजनी ने जैसे तीन लोक के बिखरे सुख को अपनी झोली मे सचित कर कर लिया हो। उसका मुख ऐसे ही खिल गया, जैसे प्रथम किरण मे कमल खिल उठता है।

"कहो कैसा रहा स्मृति चिन्ह ?" राजेश ने पूछा।

रजनी कुछ न बोली। उसकी दृष्टि वसुन्धरा के हरे वक्ष पर गढी हुई थी। राजेश का मन मधुकर इस समय उसकी अलको मे उलझ रहा था। कुछ देर मौन रहकर रजनी बोली—

"पत्र लिखने मे देरी न करना।"

"अब तुम मुझे मेरे कर्त्तव्य का पाठ न पढाओ।"

"क्यो न पढाऊँ ? इस समय आप भाव लोक से कर्म लौक मे जा रहे है। इसीलिए नारी होने के नाते मेरा यह धर्म समुचित है। कृपया माता जी और पिताजी के मेरी ओर से चरण छूना न भूलना।"

"मेरे कर्त्तव्य की प्रेरणा और भावना की अवलम्बन रजनी, मुझे क्या करना होगा, यह थोडा मै भी जानता हू।"

"मैं क्या करूँ मेरे राजेश। यह सम्बन्ध ही कुछ ऐसा है। यहाँ जिसको हम जानते है—उसी की पुनरावृत्ति आनन्ददायी सिद्ध होती है।"

रजनी के मुख पर इस समय हल्की मुस्कान खेल रही थी।

' मेरे विचार से तो तुम्हे भी मेरे साथ ही चलना चाहिए।"

"राजेश ने रजनी की आँखो मे दृष्टि गढाते हुए कहा।

"अरे! आप तो अभी भावसागर मे डूब गए। साथ तो अब मैं एक ही बार चलूँगी। याद रखो ऐसी चलूँगी जो कभी फिर लौटकर ही न आऊँ।"

रजनी के स्वर मे अमिट विश्वास झलक रहा था।

तो फिर यह बताओ, इस समय तुम कहाँ ठहरोगी!"

"आप मेरी ओर से कोई चिन्ता न करे। मै सागर के तट पर पडी सीपी के समान अपने स्वाति मेघ की प्रतीक्षा करती रहूगी।"

"तब याद रखो, तुम्हारा मेघ वर्षा की झडी लगाता, हुआ, तुम्हारे पास आकर ही रहेगा।"

"यदि आप आज्ञा दे, तो राधा के पास ही ठहर जाऊँ।"

"कौन राधा ?"

"ओहो ! भूल भी गए अपने मन की मल्लिका को । वही तो राधा है । जिसको देखकर कभी आपकी कनौती खडी हो जाया करती थी ।"

रजनी के स्वर मे विनोद टपक रहा था ।

"देख लो । मुझे तो वह कुछ चचल दिखाई देती है ।"

राजेश ने रजनी के विनोद को गम्भीरता मे बदल दिया ।

"कुछ दिन ठहरने मे क्या बुराई है । अपने से तो बेचारी जब मिलती है, बडी ही उदारता का परिचय देती है ।"

"चलो फिर जैसा तुम उचित समझो । कहाँ रहती है वह ?"

"यही रोहतक रोड के पास क्वार्टर नम्बर तैतीस मे ।"

"और यदि कुछ दिन इसी कमरे मे रहो तो क्या बुराई है ।"

"इसको तो अब छोड ही दो । प्रथम तो मै इसमे अकेली रह ही नही सकती । दूसरे किराया भी अधिक है ।"

"तो फिर अब यह अन्तिम निश्चय हो गया न ?"

निश्चय की तो बात ही छोड दीजिए । मेरा कभी निश्चय था, कि सहशिक्षा मै कभी नही पढूंगी । और यही सह-शिक्षा मेरे जीवन का कितना बडा वरदान बनकर आई है । देख लीजिए न कभी-कभी निश्चय भग होने से भी जीवन मे कितना मौलिक परिवर्तन हो जाता है । मुझे तो लगता है सिद्धान्त और व्यवहार मे बहुत बडा भेद है ।"

"सिद्धान्त और व्यवहार के इस भेद को तो भविष्य मे जान लेगे देवी जी । इस समय तो सर्व प्रथम माता-पिता का आर्शीवाद प्राप्त करना है हम दोनो को ।"

"पिता का आशीर्वाद सुनते ही रजनी का हृदय धडकने लगा । वह विनम्र भाव से प्रार्थना करती हुई सी कहने लगी—"

"मेरे राजेश ! बुरा न मानना । पिताजी के आशीर्वाद की बात सुन कर ही मेरा दिल धडकने लगता है । आप सम्पन्न परिवार के

शिक्षित और सुन्दर युवक है । न जाने कितनी रगीन पखो वाली चिडिया आपके पथ सहगमन की प्रतिक्षा कर रही होगी । मुझे भय है कही मेरे जैसी असहाय युवती का मूक क्रन्दन नकारखाने मे तूती की आवाज न बन जाये ।"

रजनी की आँखे फिर गीली हो गई ।

"देखो रजनी ! तुम्हारी यह बढती हुई निराशा तो मुझे भी निराश बनाकर छोडेगी । मुझे दु ख है, तुमने आज तक मुझे तिल बराबर भी नही पहचाना । मै पूछता हू—तुम ने सन्देह और अविश्वास के हाथो से समर्पण की सगाई ही क्यो की है । फर्स्ट नो मी वैल दैन से एनीथिग ।"

"मैने आपको प्रत्येक दृष्टि से जान लिया है मेरे देवता । इस समय तो मैं केवल आपकी काया की छाया बनकर रहना चाहती हू ।"

"फिर वही मूर्खता । काया की छाया तो तुम अब बन चुकी हो । कचन जब आभूषण बन जाए, उसे आभूषण ही पुकारो ।"

"बन तो अवश्य चुकी हू राजेश ! किन्तु जब तक अन्धकार न हटे उस समय तक छाया विलीन ही रहती है ।"

"तुम्हे दुर्बल देखकर मुझे बहुत दु ख होता है ।"

"अच्छा अब मै सबल बनूंगी । इस समय आप मुझे एक आशीर्वाद देते जाओ ।"

कहते हुए रजनी ने दोनो हाथ राजेश के पगो पर टिका दिए ।

"सर्वस्व पाकर भी और क्या चाहती हो ? बोलो ।"

"मुझे पुत्रवती होने का आशीर्वाद चाहिए ।"

इस कथन को सुनकर राजेश की आकृति ऐसी ही बन गई जैसे वह अभी सोते से जागा हो । एक क्षण मौन रहकर वह बोला—

यह तो इस सम्बन्ध के प्रतिदान का फल है रजनी । समय पर यह तुमको ही नही बल्कि मुझे भी प्राप्त होगा । इस समय तो इस आशीर्वाद को नियति पर छोड दीजिए ।

"मैने इस आशीर्वाद की माँग अपनी नियति से ही की है।"

"ऐसा न कहो रजनी। मनुष्य को विधाता के पद पर आसीन करने की दुष्चेष्टा बहुत बुरी बात है।"

यह कहते हुए राजेश ने घडी देखी— आठ बज चुके थे। वह फिर धीमे स्वर मे बोला—

"अब यहाँ से उठना भी होगा रजनी।"

रजनी ने आह सी भरते हुए उत्तर दिया—

"ऐसी क्या जल्दी!"

"यदि न उठे तो कोई उठाने वाला आ जायेगा।"

"जीवन की यही तो विचित्र विडम्बना है राजेश। दो अतृप्त आत्माओ को यह दुनियाँ कुछ देर एक साथ बैठा भी तो नही देख सकती।"

"हाँ रजनी।" कहते हुए राजेश ने रजनी के दोनो हाथो को अपने हाथो मे लेकर उसे ऊपर उठाया। रजनी जैसे फिसल पडी हो। धुधले प्रकाश मे उसने इधर-उधर देखा—और फिर राजेश के चरणो मे पड गई। रजनी की दोनो चोटियाँ राजेश के पगो के दोनो ओर इसी प्रकार पडी थी जैसे वह भावी जीवन की सम्बन्ध बेडियो का प्रथम सकेत कर रही हो। राजेश ने तुरन्त रजनी को उठाकर अपने हृदय से लगा लिया वह भूल ही गया कि इस समय पार्क मे खडा है। रजनी की आखो मे इस समय अश्रु निर्झरणी फूट रही थी। रजनी की इस दशा को देख राजेश की आँखे भी गीली हो गई। वह कुछ कर्कश स्वर मे बोला—

"क्या कर रही हो रजनी? सरिता की एक धारा को यदि कोई टापू कुछ देर के लिए दो बना दे तो क्या धाराये दो ही हो जायेगी।"

दोनो फिर मन्थर गति से बाते करते हुए पार्क से निकल ओडियन के सम्मुख आये और स्कूटर लेकर अपने लक्ष्य की ओर चल दिये।

२

सम्भावित आशकाये कभी-कभी कितना सत्य रूप धारण करके आती है, राजेश को गाँव जाकर इस सत्य का बोध हो गया। उसे विश्वास था—पिताजी उसके निश्चय का समर्थन करेगे। हुआ इसके विपरीत। वह पहले ही किसी लडकी वाले से वचन-बद्ध हो चुके थे। राजेश के पिता आस-पास के गाँवो के सम्मानित व्यक्ति थे। इसीलिए उनके लडके के साथ सम्बन्ध के लिए वर्षो से लडकी वाले आ रहे थे। इस सिर दर्दी से छुटकारे के लिए अन्त मे उन्होने समीप के गाव की एक देखी भाली लडकी के पिता को अन्तिम वचन दे दिया। उन्होने विवाह की आरम्भिक तैयारी भी कर ली थी।

राजेश को दिल्ली से आये आज तीसरा दिन था। उसे अपनी माता रामप्यारी से कल ही अपने विवाह के विषय मे सम्पूर्ण विवरण प्राप्त हुआ था। प्रात काल जब उसके पिता रामनाथ दूध पीकर खेतो पर जाने लगे, उसी समय अवसर पाकर राजेश बोला—

"मेरा विचार तो अभी आगे पढने का है पिताजी।"

'क्यो नही! अवश्य पढो। हमने मना कब किया है।"

"माता जी से पता चला है कि आप मेरे विवाह का निश्चय कर चुके है।"

"तो फिर इसमे तुम्हारी क्या हानि है। विवाह के दो वर्ष बाद गौना होगा। इतने तुम एम ए कर ही लोगे।"

"मुझे तो लगता है आप इस निश्चय मे शीघ्रता कर गये है।"

उसी समय रामप्यारी वहाँ आ गई। वह बोली—

"असली बात क्यो छिपा रहे हो राजेश । जो मुझसे कहा है वह अपने पिता जी से भी कह दो ।

वह फिर अपने पति को सम्बोधित कर कहने लगी—

"आप बैठ जाएँ। बात कुछ देर की है ।"

रामनाथ जी दालान मे पडी चारपाई पर बैठ गए। राजेश खडा रहा और रामप्यारी नीचे पडे आसन पर बैठ गई। रामनाथ ने पूछा —"

"क्या बात है आखिर ? कुछ पता भी तो चले ।"

"बात ही क्या है। यह तो राजेश से पूछो। मै तो इतना जानती हू कि इसके साथ कोई लडकी दिल्ली पढ रही है। यह उसी के साथ विवाह करना चाहता है ।"

"क्या मतलब ? हमने तो इसको दिल्ली मे पढने के लिए भेजा था लडकी ढूंढने के लिए तो इससे एक शब्द भी नही कहा ।"

राजेश जो अभी दृष्टि झुकाये खडा था कहने लगा —

"ठीक है पिताजी । हो सकता है मैने भूल की हो। फिर भी माता जी ने जो कुछ कहा है वह सत्य है ।"

"देखो राजेश ! मै यह मानता हूँ कि तुमने शब्द मुझसे ज्यादा पढ़े है। इसके साथ ही तुम यह न भूलो कि मेरा अनुभव तुमसे कही अधिक है। प्रत्येक मनुष्य के आयु और सम्बन्ध के अनुसार कर्म निश्चित होते है। तुम्हारी इस समय की गतिविधियो के हम समर्थक नही, आलोचक है।"

"ठीक है पिताजी ! फिर भी मेरे विचार से आपको विवाह का निश्चय करने से पूर्व मुझसे पूछना अवश्य चाहिए था ।"

"इसका दूसरा अर्थ यह भी है कि तुम्हे हमारे निश्चय पर विश्वास नही ! देखो राजेश तुम न भूलना—बेटा चाहे कितना ही बडा क्यो न हो, पिता से बडा किसी दशा मे भी नही हो सकता । पर्वत की सबसे ऊँची चोटी भी आकाश के नीचे ही होती है ।"

"आपका कथन सर्वांश सत्य है पिताजी। और साथ ही मेरे लिए शिरोधार्य भी है, फिर भी मै इतना अवश्य कहूँगा कि दुनियाँ मे प्रतिस्पर्धा की दौड मे पिता ही पुत्र को अपने से आगे देखता है। आप विश्वास करें, इस समय मै ऐसी स्थिति मे हूँ, यदि आपने मेरी इच्छा के विपरीत मेरा विवाह किया तो मैं भावी जीवन की प्रगति को खोकर अपने जीवन को अपने ही लिए एक पहेली बना बैठूँगा।"

"कुछ भी राजेश! मैने जो कुछ निश्चय किया है, सोच-समझ कर किया है। मै अपने कर्त्तव्य को भली प्रकार जानता हूँ।"

"आप उसकी पूरी बात तो सुने। जाना कुछ भी नही है, बस अपनी जबान की दुहाई दिए जा रहे हो।" रामप्यारी का मौन भग हुआ।

"मैने सब सुन लिया है। बुद्धिमान सकेत से ही सत्य को जान लेते है। मै जानता हूँ, कोई पढी लिखी लडकी होगी। देखने मे सुन्दर होगी और बताओ, जानने के लिए क्या है?"

"जब सारी बाते अच्छी हो, तो विवाह मे बुराई क्या है?"

"जिस विषय मे तुम सोच ही नही सकती, उसमे व्यर्थ क्यो टाँग अडा रही हो? क्या मैने विवाह का वचन देते हुए तुम से नही पूछा था?"

"तो अभी क्या बिगड गया? अभी तो बेटी बाप के ही घर है। कह देगे—हमारा लडका विवाह करना ही नही चाहता।"

"मुझे तो लगता है तुमने आज तक घास ही खाई है। उस दिन को भूल गई, जब कूद कर लडकी देखने गई थी। पुरुष की जबान हाथी के दाँत होते है, कछुवे की गर्दन नही। जानती हो, वचन देकर पीछे हटने से बदनामी होगी।"

"एक बात पर यदि आप ध्यान दें तो कहूँ।"

ये शब्द राजेश के थे।

"बात तुम एक नही अनेक कहो। निश्चय हमारा एक ही रहेगा।

वचन भग कर मैं बदनामी का सेहरा सिर पर नही बाँध सकता ।"

निश्चय आपका जो भी हो, मै इतना अवश्य कहूँगा—

"महान से महान मनुष्य का निश्चय भी कभी असत्य हो सकता है। आप जानते ही है, यह युग नित्य नवीनताओ को कार्यान्वित करने का है। पुरानी रूढीवादी शृ खलाये आज टूटती चली जा रही है। विवाह के क्षेत्र मे भी अब नए आदर्श जन्म पा गये है। अब वह समय गया जब वर-वधु एक-दूसरे के लिए गुप-चुप की पुडिया हुआ करते थे।"

"तो मै समझ लूँ, तुम दिल्ली से सामाजिक क्रान्ति का ठेका लेकर आये हो। क्या तुम्हे माता-पिता के सम्मुख इस प्रकार मुँह खोलते शर्म नही आ रही है।"

"क्रान्ति तो होनी ही चाहिए पिताजी। पुरुष चाहे तो अनेक विवाह करे और विधवा स्त्री विवाह के नाम पर भरे यौवन काल मे कलकित हो जाय। यही तो है पुरानी मान्यताये।"

"इस कथन का दूसरा अर्थ यह भी है कि जिस युवती से तुम विवाह करना चाहते हो, वह विधवा है।"

"जी हाँ! विधवा के साथ ही वह अनुन्नत जाति की भी है।"

रामप्यारी जो अब तक शान्त थी बीच मे ही बोल पडी—

"यह तो कभी नही हो सकता बेटा! एक तो विधवा और दूसरे जाति-पाति का पता नही। मै तो कभी नही मान सकती। एक तो बेटा और वह भी ऐसा विवाह करे। अच्छी रही।"

"देख लो अपने बेटे को। विधवाओ का उद्धार करने जा रहे है।"

"आप कुछ भी कहे पिताजी, मै तो यह जानता हूँ कि विवाह का सम्बन्ध जाति और धन का समर्थन कभी नही चाहता। मेरी दृष्टि मे तो विवाह दो सत्य आत्माओ के स्थायी मिलन की प्रथम विधिवत् क्रिया के अतिरिक्त और कुछ भी नही है।"

"ठीक है राजेश। इस समय तुम अपनी इस शिक्षा को उस समय तक के लिए सुरक्षित रख दो, जब तक बाप बनो। हमे तुम्हारी शिक्षा की आवश्यकता नही है।"

इस कथन को सुनकर राजेश बाहर चला गया। उसके जाते ही रामनाथ अपनी पत्नी से कहने लगे—

"देख लिया अपने बेटे का चाल चलन। इससे तो यह बिना पढा ही अच्छा था। इसके लिए तो हमारे पास जमीन भी बहुत थी। बेकार मे दिल्ली भेज कर बिगाड लिया।"

"कम से कम एक बार उस लडकी को देख तो लो।"

"तुम्हारी तो बुद्धि को ही कीडा खा गया है राजेश की माँ। क्या देख लूँ उसको? पढी लिखी लडकी बाहर से टीप-टाप करके जो रहती है, इसीलिए अच्छी लगती है। क्या तुम बिना पढी नही हो। बताओ हमने कभी कोई भूल की है? पिताजी ने जहाँ वि'ाह किया, वही स्वीकार कर लिया।"

"मै पढी नही तो क्या है। मेरे वाप ने दहेज भी तो कितना दिया था। एक बार तो घर ही भर गया था। इतना दहेज तो तुम्हारे बेटे के विवाह मे भी नही आयेगा।"

"दहेज की बात छोडो। यहाँ तो प्रश्न वचन का है। आज वचन से गिर जाने पर कल कोई हम पर विश्वास ही नही करेगा। आज तो आस-पास तूती बोल रही है। छोटे बडे कार्यो मे सब पूछते है। कल हमे कुत्ता भी न पूछेगा। चारो ओर आगे और पीछे काना-फूसी आरम्भ हो जायेगी।"

"वचन की बात तो जाने आप। मै तो चाहती हूँ, कोई ऐसी बहू आये, जो घर को भरती ही चली आये।"

"छपकली की दौड तो छत तक ही होती है। तुम दहेज के अति-रिक्त कुछ और सोच ही नही सकती।"

"तो क्या मे आपकी दृष्टि मे छपकली हूँ?"

"और क्या कहूँ? जब तुम बार बार दहेज की बात को ही लेकर बैठ जाती हो, तो फिर यही कहना पडता है। तुम ही बताओ, जब शर्मा जी का घर भी अच्छा है, लडकी स्वस्थ और सुन्दर है। फि

विवाह मे बुराई क्या है। जो बन पडेगा, बेचारा दहेज भी देगा।"

"तो ठीक है। अब तो मै दिल्ली की लडकी से विवाह होने ही नही दूंगी। मै तो उसे कोई बडे घर की बेटी समझती थी।

"विवाह नही होने दोगी—तुम तो ऐसे कह रही हो, जैसे मै कर ही रहा हूँ। तुम नही जानती। यह तो थोडी देर की जवानी का जोश है। कुछ दिनो मे निकल जायेगा। अभी बिछुड कर आया है, इसीलिए इतना उदास रहता है।"

"कही जवानी मे आपको भी तो ऐसी ही उदासी न हो गई थी।

"तुम भी कैसी मूर्खता भरी बाते करती हो। हमने कौन से कालेज मे पढाई की थी जो ऐसा होता।"

"बातें तो कुछ अनुभव की सी ही कर रहे हो।"

"हमे पता है राजेश की माँ—आजकल की शिक्षा ने युवक और युवतियो के चाल-चलन को बिल्कुल ही बिगाड दिया है। मै जब घी लेकर जाता था, तो वहाँ पर लडकियो को देखकर भौचक्का रह जाता था। शर्म तो जैसे उन्होने पानी मे बहा दी है।"

"हमे तो कभी नही बताया दिल्ली से आकर।"

,'बताना ही क्या है, चाहो तो घर मे ही लाकर देख लो। हाथ कगन को आरसी क्या। बेटे का विवाह दिल्ली से कर लो।"

"छोडो जी! नई बहू का मुँह देख कर सब भूल जायेगे।"

"मेरे विचार से अब इसका विवाह जल्दी ही कर दें।"

"जितनी जल्दी करो, उतना ही अच्छा है।"

"अब तुम इस विषय मे इससे बात ही न करना।"

रामनाथ जी इतना कहकर खेतो पर चले गये। उनके जाते ही रामप्यारी भी अपने घर के कार्य मे जुट गई।

३

मनुष्य जब तक जीता है—उसे जीवन से अनुराग है। रजनी इस सत्य को जानती है। फिर भी वह इस विषय मे सोचती रहती है। मैं क्यो जी रही हूँ? उत्तर मिलता है, तुम किसी की हो—और कोई तुम्हारा है, जीना ही चाहिए। फिर वह सोचती है—क्या मेरा सचित अनुराग तद्रूप मेरे सम्मुख आएगा। उसे राधा के पास एक सप्ताह हो गया था। राजेश का उसे कुशल पत्र मिल चुका था। वह उसके आने की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी। इस समय उसको एक पल युग बना हुआ था।

कुसमय मे मनुष्य का सहयोगी कौन बन जाय—रजनी यह भी सोचती रहती। राधा के विषय मे वह सब कुछ जानती थी। उसके विचार राधा से नही मिलते। छह मास पूर्व राधा जब उसकी विद्यालय मे सहपाठिन थी, सिर का दर्द बनी हुई थी। राधा के कालेज छोडते समय रजनी मन ही मन प्रसन्न हुई थी। राधा सदैव रजनी और राजेश के मध्य बाधा सी बनी। रजनी अब उसी राधा के पास समय बिता रही है। राजेश पर पूर्वासक्त राधा सोचती है—रजनी के यहाँ ठहरने से राजेश यहाँ अवश्य आयेगा। वह इसीलिए रजनी के प्रति उदार है।

रात रजनी जब सोने लगी, राधा उसकी चारपाई पर जम गई। वह सोती एक ही कमरे मे है फिर भी उनकी खुल कर कभी बातें नही हुईं। आज राधा ने निश्चय कर लिया—रजनी के जीवन का रहस्य जानना ही चाहिए। राधा का बहन भाई कोई नही है। केवल माता-पिता है सो दूसरे कमरे मे सो रहे है। आज वैसे भी शनिवार है।

राधा ने खुलकर बातें करने का यही उचित अवसर पा लिया। उसने रात भर बाते करने का निश्चय कर वार्तालाप की शृ खला जोडी—

"कहो बहन रजनी ! क्या समाचार है ?"

"ठीक है राधा ! जीवन बीत ही रहा है ।"

"क्या दूसरा पत्र नही आया राजेश का ?"

"अभी तो नही आया ।"

"तभी तो इतनी उदास दिखाई दे रही हो ।"

"उदासी तो अपने जीवन का आभूषण है राधा ।"

"ऐसा न कहो रजनी । बी० ए० का परिणाम आते ही कोई नौकरी कर लेना। परीक्षा में तुम सफल हो ही जाओगी ।"

"जब तक मनुष्य जीवन की परीक्षा मे असफल है, उस समय तक इन परीक्षाओ का मूल्य ही क्या है राधा ।"

"वर्तमान से भयभीत होकर भविष्य की आशाये नही छोडनी चाहिएँ रजनी । कौन जानता है जीवन मे कब कैसा मोड आ जाए ।"

"अतीत के पच्चीस वर्षो ने जो कुछ दिया है, उसके आधार पर तो भविष्य से आशावादी होना असम्भव है राधा बहन ।"

"अतीत को तो मै कुछ नही जानती । हाँ, वर्तमान से भविष्य का अनुमान कर सकती हूँ । तुम्हारा भविष्य बहुत उज्जवल है ।"

"जीवन की यही तो विडम्बना है मेरी बहन । अतीत से गठबन्धन के बिना भविष्य की आशायें खडी ही नही होती ।"

"तो फिर आज अपने अतीत का ही थोडा परिचय दे दो ।"

"क्या करोगी जानकर ? जो घाव भरने लगे है वह भी हरे हो जायेंगे। रजनी के स्वर मे आह स्पष्ट झलक रही थी ।

"आज तो मैंने तुम्हारी जीवन पुस्तक के प्रत्येक पाठ को पढने का निश्चय कर लिया है रजनी ।"

"नही मानती तो सुनो—भारत विभाजन के समय मैं दस वर्ष की अशिक्षित और साथ ही विवाहित किशोरी थी । साम्प्रदायिक दगो मे

माता-पिता और पति सब की मृत्यु हो गई। मै एक सिन्धी रैगड जाति की लडकी हूँ। जातीय परम्परा से मेरा विवाह उस आयु मे हुआ जब मै विवाह शब्द का अर्थ भी नही जानती थी। विभाजन के समय मै वृद्ध मामा के साथ भारत आई। किन्तु उनको भी विधाता ने कई वर्ष पूर्व मुझसे छीन लिया।"

कहते हुए रजनी का गला भर आया। वह जब चुप हो गई तो राधा बोली—

"इतनी अधीर न हो बहन! दुनियाँ मे एक से अधिक एक दुखिया पडा हुआ है और फिर यह तो समय ही कुछ ऐसा था। इस समय तो न जाने कितनो का जीवन एक जटिल समस्या बन कर रह गया है। कितनी ही जीवन कलिकाये तो खिलने से पूर्व ही मुरझा गईं।"

कुछ देर दोनो मौन बैठी रही। राधा ने फिर मौनता भग की—

"तो फिर आज तक जीवन कैसे बीता है, रजनी?

"क्या करोगी सब जानकर? मै तो एक रोडा हूँ रोडा। जिस ने ठुकरा कर जहाँ डाल दिया, वही पडी रही। कुछ दिन कैम्प मे रही जहाँ पढना आरम्भ किया। शिक्षा के लिए सेठ 'आसूमल' से दस रुपए छात्र वृत्ति मिली, तो मैट्रिक पास किया। मैट्रिक करने के पश्चात् मुझे एक कॉंग्रेसी की कृपा से उच्चशिक्षा के लिए पन्द्रह रुपए छात्रवृत्ति सेठ करोडी मल से मिली। इन्ही कृपाओ के फलस्वरूप मै आज यहाँ तक आ सकी हूँ।"

रजनी इतना कहते हुए फिर चुप हो गई। इस बार वह भाव-मग्न न होकर चिन्तातुर थी।

"कुछ हरिजन फड से भी तो मिला होगा आपको?"

"कुछ न पूछो राधा! इस अल्प जीवन में न जाने कितनी करुणा का अवलम्बन बन चुकी हूँ मै।"

"इतने दिनो रहती कहाँ रही आप?"

"कभी कैम्प और कभी विधवा आश्रम, समय बीत ही गया।"

"सचमुच रज ! तुम्हारा जीवन तो विचित्र प्रकार की कडियो की बडी ही अद्भुत शृ खला है।"

"अभी कुछ और भी है राधा। भेड जहाँ जाती है, वही पर कैंची लिए मूडने वाले भी तो बैठे रहते है। इस समय मे एक दो भूखी आत्माये भी तो मिली है। किसी ने गुप्त सम्बन्ध को विवश किया तो कोई प्रणय पोथी को ही खोल बैठा। एक नेता जी तो विवाह के लिए ही मचल पडे। सत्य मानो बडी कठिनाई से सुरक्षा करने मे आज तक समर्थ हो पाई हूँ।"

"यह सब किस समय की बाते है?"

"कुछ वर्ष पूर्व की। इस समय तो मै राजेश के साथ ही रहती थी।"

राधा इस कथन को सुनकर कुछ देर मौन मनन सा करती रही। फिर वह व्यवस्थित सी हो सयत स्वर मे बोली—

"तब तो आपने जीवन का नया मोंड पा लिया है। स्वागत करो बहन इस मोड का। राजेश के पास रहने से पूर्व कुछ निश्चय भी तो किया ही होगा। अब कुछ इसका भी परिचय दे दो।"

"निश्चय तो बहुत कुछ किया है राधा। किन्तु अन्धी का भाई जब तक गोद मे न आ जाए, उसे आया हुआ कैसे जानूँ। कार्यान्वित होने से पूर्व निश्चय का मूल्य ही क्या है।"

राधा ने विषय को मार्मिकता से विनोद की ओर मोडने के लिए कुछ मुस्कान सी बिखेरते हुए कहा—

"तब तो इन दिनो गाडी लाइन पर चढ गई होगी रजनी। सच-मुच तुम बडी ही भाग्यशाली हो। अब तक तुम्हारी करुणा कहानी सुनकर जितनी सवेदना जाग्रत हुई थी, उतनी ही अब तुम्हारे सौभाग्य से ईर्ष्या भी हो रही है। सत्य मानो रजनी, राजेश जैसा सर्वगुण सम्पन्न युवक जिस युवती के हृदय का हार बन जाये, उससे बडी सौभाग्यवती और कोई नही हो सकती।"

कुछ समय पूर्व वेदना के सागर मे डूबी हुई रजनी राधा के इस कथन को सुनकर मन ही मन फूल गई। स्त्री के सच्चे प्रेमी की जब कोई अन्य स्त्री प्रशसा करे, उसके लिये इससे बडी प्रसन्नता का जीवन मे कोई अवसर ही नही होता। मन के उल्लास का दमन कर वह बोली—

"राजेश को पाने का जिस दिन अन्तिम विश्वास हो जायेगा राधा, उस दिन ये पाव पृथ्वी पर नही पडेगे।"

"जिनको तुम मन रूप मे पा चुकी हो, यदि वह तन रूप मे न भी मिले तो क्या बात है रजनी ?

"इन थोथे आदर्शों पर मुझे अधिक विश्वास नही है राधा। मेरे विचार से तो नारी पुरुष के मन से भी अधिक तन की भूखी है। मन तो नारी को एक प्रौढ पुरुष भी दान कर सकता है। फिर बताओ नव-युवक पर ही नारी क्यो मिटती पाई जाती है।"

"मैने कही पढा है, कभी-कभी कुछ पाने के लिए सर्वस्व को भी खोना पड जाता है। क्या यह सत्य है।"

"अक्षरश सत्य है राधा। मै भी उनको पाने के लिये सर्वस्व खोने का निश्चय कर चुकी हूँ। सत्य मानो, यदि इस बार मुझे जीवन मे निराशा मिली तो मै जीवन से मोह ही छोड़ दूँगी।"

"मुझे तो ऐसा लगता है, जैसे तुम कुछ जल्दी कर गई हो। मेरे विचार से तो जीवन के किसी पथ मे भी बुद्धि का सन्तुलन नही खोना चाहिए। जिस पथ मे आँखे नही, वहाँ ठोकर अवश्य लगेगी। इतिहास के पन्नो को देखो—कितनी नारियो ने इस पथ मे अन्धी होकर अपना जीवन अपने ही लिये पहेली बना लिया है।"

"कथन तुम्हारा भी सत्य है राधा। किन्तु मेरे विचार से जहाँ तर्क विधायनी बुद्धि अपना कार्य करती रहती है, वहाँ प्रेम न होकर केवल निर्वाह ही होता है। प्रणय की तो महिमा ही यह है कि वहाँ प्राणी थोडी देर के लिये अन्धा सा हो जाये।"

राधा ने घडी देखी, बारह बज चुके थे। उसे कुछ नीद की जम्हाई सी आ गई। वह उठी, और अपनी चारपाई पर लेट गई। रजनी को अभी भी नीद नही आ रही थी। उसने कुछ देर शान्त भाव से मनन सा किया, और फिर पत्र लिखने बैठ गई।

प्रिय राजेश !

आप सकुशल घर पहुच गये है। इस समाचार का पत्र मुझे मिल चुका है। अब मै राधा के यहाँ दूसरे पत्र की प्रतीक्षा कर रही हूँ। आशा है आपने भावी जीवन के लिए माता-पिता का आशीर्वाद प्राप्त कर लिया होगा। मेरी ओर से आप कोई चिन्ता न करे। पत्रोत्तर द्वारा सूचित करे कि आप दिल्ली कब आ रहे है ? शेष मिलने पर।

आपकी
रजनी

राधा चारपाई पर लेट अवश्य गई थी। उसे नीद नही आई। पत्र को लिखकर जब रजनी सोने की तैयारी करने लगी, राधा चारपाई से उठकर उससे कहने लगी—

"क्या लिखा है। पत्र मे रजनी ?"

"लिखना क्या है राधा। थोडा मन का भार कम कर लिया है। न जाने आज मेरा मन कुछ भारीपन क्यो अनुभव कर रहा है।

"प्रणय पथ मे पग बढाने से पूर्व ही शान्ति रहती है रजनी। मैं तो कहती हूँ भगवान किसी को इस पथ पर न बढाये। मेरी मानो तो अब भाव लोक से कर्म लोक मे आ जाओ। सुखमय जीवन बिताने के लिये अर्थ के पक्ष मे बढो मेरी बहन। मुझे एक प्रार्थना-पत्र लिख कर दे दो, मैं सेठ करोडीमल के मिल मे ही तुम्हारे लिये किसी उपयुक्त कार्य की व्यवस्था करा दू गी। बडे अच्छे है मिल के व्यवस्थापक। मेरी बात मान लेंगे।"

"अच्छा बहन राधा ! कल लिखूंगी। अब तो सिर मे दर्द हो रहा रहा है। चलो अब सो जायें। रात बहुत हो गई है।

और फिर दोनो शान्त भाव से अपने-अपने बिस्तर पर पड गई।

४

उस रात को राजेश न जाने कब तक जागता रहा। प्रात वह दस बजे तक बिस्तर से न उठ पाया। रमानाथ खेतो की देखभाल के लिये चले गये थे। राम प्यारी खाना बना रही थी। उसी समय किसी बच्चे ने उनको बन्द लिफाफा दिया। पत्रवाहक लिफाफा बच्चे को दे गया था। राम प्यारी ने लिफाफा लेकर राजेश को जगाया। वह आँख मलता हुआ उठा और पत्र को तुरन्त खोल कर पढने लगा। एक ही दृष्टि मे वह सारे पत्र को पढ गया। राम प्यारी उस समय राजेश के मुख पर आँखे गडाये थी, जैसे वह उसके मुख को ही पढ रही हो। जब राजेश ने पत्र पढ लिया तो राम प्यारी बोली—

"किसका पत्र है बेटा ?"

"क्या करोगी जानकर माता जी ?"

"अपनी माँ से भी कुछ छिपाना चाहते हो।"

"नही, माता जी। आप से क्या छिपाना है। उसी लडकी का पत्र है। दिल्ली से आया है।"

"क्या लिखा है पत्र मे ?"

"आप और पिताजी को चरण स्पर्श।"

"बस इतना ही था और कुछ ? पत्र तो बहुत बडा है।"

"और सबको जान कर आप क्या करेगी ?"

कहता हुआ राजेश बिस्तर से खडा हुआ और तुरन्त बाहर चला गया। वह सोचता हुआ जा रहा था—पिताजी को अपनी वचन बद्धता

से प्यार है। माता जी को बहु रानी का दहेज चाहिए। और मै क्या चाहता हूँ ? इस पर वह विचार करने के लिए ही तत्पर नही थे।

विचारो मे खोया राजेश, अपने खेतो का एक चक्कर लगाकर गाँव से कुछ दूर नदी के तट पर बैठ गया। वहाँ वह प्रतिदिन ही प्रात. या सध्या अवश्य आता है। आज वह समय से कुछ पिछड कर आया है। उसे आज सरिता के तट की शोभा मे वह उन्माद दिखाई नही दिया। वह सोच रहा था—यह वही प्रतिदिन वाली सरिता और उसका तट है किन्तु आज कुछ उदास है यहाँ का वातावरण। वह फिर तट पर बैठ कर पत्र को पढने लगा। पत्र को कुछ पढ उसने एक दृष्टि सरिता के प्रवाह पर डाली। उसने देखा—

सरिता के दोनो तटो को हठीली धारा निकट आने ही नही देती। उसे लगा— सचमुच यह दृश्य उसी के जीवन का प्रतिबिम्ब है। क्या रजनी से उसका शाश्वत सयोग सम्भव है। विचार करते ही उसे एक धक्का सा लगा। वह कुछ सचेत सा हो फिर पत्र को पढने लगा। पत्र पढकर उसकी दृष्टि सरिता की लहरों पर पडी। वह अबोध बालक के समान भयभीत हो गया। साहस सा बटोर वह स्वय से बोला—

"जो पथिक सरिता की लहरो के उत्थान पतन से भयभीत हो गया, वह पार जा ही नही सकता। पुष्पो को हृदय का हार बनाने वाला व्यक्ति काँटो से भयभीत होकर क्या पायेगा ? जीवन का कौन-सा पथ है जहाँ काँटे नही बिछे। रजनी इन्ही काँटो से भयभीत थी। वह नारी है, मै पुरुष हूँ। मुझे पुरुषत्व का परिचय देना ही चाहिए। अपनत्व की सुरक्षा साहस के अभाव मे सम्भव नही है। रजनी के अन्तिम शब्द कितने मूल्यवान थे—"मुझे पुत्रवती होने का आशीर्वाद चाहिए।" इस एक वाक्य मे सृष्टि का विकास और विनाश दोनो ही निहित है।

अब मुझे क्या करना चाहिए ? राजेश सोच ही नही पा रहा है। वह फिर खडा हुआ और धारा के प्रवाह के साथ-साथ चलने लगा। इस प्रकार चलने मे उसे कुछ सुखाभास हुआ। वह सोच रहा था—

अविराम गति से प्रवाहित यह धारा एक दिन सागर मे मिल कर

अचल हो जायेगी। यही है जीवन की गति का रूपक। सागर मिलन तक न जाने कितनी बार इस धारा को मुडना होगा। मुडने से इसकी गति मे कोई अन्तर नही आयेगा। मुझे भी जीवन पथ मे मुड कर मार्ग बनाना चाहिए।

विचार करते ही राजेश को एक झटका लगा। वह सिर को दोनो हाथो से दबा कर तट पर बैठ गया। इस समय रजनी की लुभावनी आकृति उसकी आँखो के सामने नाच रही थी। उसे लगा—रजनी कह रही है—

"मुझे भूलना नही राजेश। मै तुम्हारी हूँ, केवल तुम्हारी। तुमने एक मुरझाई कलिका को खिलाया है और प्रतिदान मे कलिका ने भी अपनी सम्पूर्ण सौरभ को तुम पर लुटा दिया है। अब कही ऐसा न हो जाय कि उसकी पत्तियाँ ही उडती फिरे।"

साहस सा बटोर राजेश फिर खडा हो गया। वह बडबडाने लगा-—कुछ भी हो, मै अपने निश्चय पर अडिग रहूँगा। किसी के विश्वास को भग करने से अच्छा है, उसे विष देकर मार देना।

यूँ ही बडबडाता हुआ राजेश वहाँ से चलकर अपने बाग मे आ गया। वहाँ वह एक पेड के नीचे आँखो पर हाथ रख कर बैठ गया। उसका विचार प्रवाह बदला—जिस लडकी से पिता जी मेरा सम्बन्ध निश्चित कर चुके है, क्यो न उसे देखा जाय ? गाँव की लडकियाँ अनपढ होकर भी स्वाभाविक सौन्दर्य की समष्टि होती है। विचार करते ही उसके हृदय से हूक सी उठी। उसने तुरन्त अपने मुँह पर तमाचा लगाया। मै क्या सोचने लगा। जिस सौन्दर्य को देखने के लिए मै तत्पर हुआ, वह केवल गर्मी की धूप है। दृष्टि जिस सौन्दर्य का समर्थन करती है, वह उसी को चकाचौध कर देता है। आन्तरिक सौन्दर्य सावन की वृष्टि है, जिसके लिये एक वर्ष का समय तो अवश्य चाहिए। रजनी को तो मै कई वर्ष प्रत्येक दृष्टि से देख चुका हूँ।

स्वय ही तर्क-वितर्क करता हुआ-राजेश जब वहाँ से उठा—एक

बज चुका था। वह फिर सीधा घर आ गया। उसके पिता उस समय उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वह राजेश के आते ही बोले—

"कहाँ चले गए थे राजेश ? सवेरे से कुछ खाया भी नही। आओ अब मेरे साथ बैठ कर खाना खाओ।"

"क्या आपने अभी खाना नही खाया ?"

"नही, मैने सोचा—साथ ही खायेगे।"

राजेश को लगा—सचमुच माता-पिता का प्यार ही जीवन की सर्वोत्तम निधि है। मै कितना अभागा हूँ जो इससे वचित होना चाहता हूँ।" मन ही मन सोचता हुआ वह चुपचाप पिता के पास बैठ गया। और फिर उसके पिता राजेश को दुधमुँहा बच्चा समझ कर उसके सिर पर हाथ फेरते हुए धीमे स्वर मे बोले—

"आज कोई पत्र आया है क्या ?"

"जी हाँ, पिताजी!"

"यदि चाहो, तो अपनी होने वाली पुत्रवधु को दिखा दूं। सत्य मानो बेटा! शर्मा जी की लडकी साक्षात् लक्ष्मी है लक्ष्मी। मनुष्य को कभी भी छोटी भावनाओ का दास बनकर बडी भूल नही करनी चाहिए।"

"आप भोजन तो कर लें पिता जी! इन बातो पर फिर विचार कर लेना। हमारे कारण तो माता जी भी अभी भूखी है।"

"कोई बात नही बेटा! तुम हसते रहा करो। जब से तुम दिल्ली से आये हो, हमारा तो यूँ ही पेट सा भरा रहता है।"

कहते हुए राम प्यारी ने दो थाली लगा कर तख्त पर रख दी।

"अरे! ये दो थाली क्यो लाई हो ?" राजेश भी तो खायेगा।"

"हम तो दोनो एक ही थाली मे खा लेगे।"

रामप्यारी फिर एक थाली को रसोई मे ले गई। राजेश और उसके पिता खाना खाने लग गये। राजेश अन्यमनस्य भाव से भोजन भी कर रहा था और साथ ही सोच रहा था—"श्रवण कुमार ने अपने

माता-पिता को बहँगी मे बिठा कर तीर्थ यात्रा कराई थी। मैं समझता हूँ, वह इस प्रकार सेवा करके भी माता-पिता के ऋण भार से मुक्ति न पा सका होगा। कितना अभागा है वह व्यक्ति जिसने माँ-बाप के स्नेह भरे हाथ की छत्रछाया नही पाई।"

राजेश को विचार मग्न देख रमानाथ ने मुँह के कौर को निगल एक गिलास पानी पिया और फिर बोले—

"क्या सोच रहे हो बेटा ?"

"कुछ नही पिताजी।"

"कुछ कैसे नहीं राजेश ! जानता मै भी कुछ हूँ। तुम एक बात कभी मत भूलना। माता पिता के जहाँ सन्तान के प्रति अनेक कर्त्तव्य है, वही पर कुछ अधिकार भी है। यह आज नही तो कल पिता बन कर तुम जान ही जाओगे। तुम्हे विश्वास करना चाहिए कि हमने जो निश्चय किया है, वह सर्वथा उचित है और यदि कही त्रुटि भी रह गई है तो वह भी तुम्हे वरदान ही सिद्ध होगी।"

"ठीक है पिताजी। जो आप उचित समझे करें।" कहता हुआ राजेश पानी पीकर चुपचाप उठा, बैठक मे जाकर चारपाई पर लेट गया। वह इस समय भी सोच रहा था—

"अच्छा होता, यदि मै गाँव का एक अशिक्षित युवक ही होता। कितने भोले है ये ग्रामीण अनपढ युवक ? माता-पिता ने जिस युवती से एक बार सम्बन्ध शृ खलाओ मे बाँध दिया, जीवन भर बँधे रहते है। लडते झगडते और कभी हँसते और खेलते जीवन को बिता ही देते है। यह जानते ही नही कि नारी और पुरुष के आकर्षण मे मन का क्या महत्व है। अच्छा हो, मैने जो कुछ पढा है सब भूल जाऊँ। दिल्ली की जगमगाती सडको ने मेरे नयनो मे जिस प्रकाश को जन्म दिया है, उस से तो यह गॉव का अन्धकार कही अच्छा है। जिस कोलाहल ने मेरे मन मे खलबली को जन्म दिया है, उससे तो मेरा शान्त मन कही अच्छा होता।"

राजेश की चेतना दिल्ली पहुँची—रजनी ! सचमुच तुम कितनी

महान हो। तुम मुझे सम्पूर्ण रूप से जानती हो, यही मेरा सौभाग्य है। क्या हमारा अतीत अब लौट कर आयेगा। आशा धूमिल सी होती जा रही है। अब यदि प्यार की भित्तियो पर निर्मित होने वाले अत्याचार के भवन मे, मै तुमसे पृथक रहने लगू, तो क्या तुम मुझे क्षमा कर पाओगी। नही, कभी नही। तुम्हे क्षमा करना ही नही चाहिए।"

निरन्तर चिन्तन के भार से दबा हुआ राजेश थोडा हल्का होने के लिये खडा हुआ और बैठक से बाहर आ गया। उसे बाहर आते ही अपनी एक दूर के रिश्ते की भाभी मिल गई। वह पानी के दो घडो को सिर पर रख कर मस्त हाथी के समान झूमती जा रही थी। राजेश को देखते ही वह बोली—

"अब मिठाई कब खिलाओगे लाला जी ?"

राजेश समझ गया—यह विवाह की मिठाई की माँग है। उसने बलपूर्वक मुख पर मुस्कान को समेट कर उत्तर दिया—

"जब चाहो भाभी जी।"

"हमने तो सुना है लाला! शहरो मे बडी ही रग-बिरगी औरते होती है।"

"सच सुना है भाभी। वहाँ तो सब कुछ ही होता है।"

"तो फिर तुम्हे हमारी जैसी गाँव की क्यो भाएगी।"

राजेश ने बात को टाल दिया। वह बोला—

"ये घडे तो रख आओ भाभी। शाम को घर आऊँगा। वही पर खुलकर बाते कर लेना।"

राजेश फिर खेतो की ओर भ्रमण के लिये निकल गया।

५

सेठ करोडी मल के भारत मे कई मिल है। दिल्ली मे भी उनका एक कपडा मिल है। उनके सम्पूर्ण व्यवसायिक केन्द्रो मे लगभग पन्द्रह हजार श्रमजीवी कार्य करते होगे। भारत के प्रत्येक प्रमुख नगर मे जहाँ उनके व्यवसाय चल रहे है, वही पर सभी शहरो मे उनकी कोठियाँ है। सेठ जी रहते अधिकतर नई दिल्ली मे ही है। यही पर रहते हुए, वे सारे भारत के उद्योगो पर नियत्रण रखते है। दिल्ली का कपडा मिल उनके व्यवसायिक केन्द्रो मे सबसे महत्वपूर्ण है। इसके व्यवस्थापक देवदत्त जी है। इनका प्रसिद्ध नाम है धर्मार्थी। सेठ जी धर्म खाते मे वर्ष मे जो भी दान करते है। उसका नियन्त्रण उत्तरदायित्व देवदत्त पर ही है। इसीलिए वह धर्मार्थी जी प्रसिद्ध है। भगवान की ओर से जैसे धर्मराज प्रत्येक प्राणी के स्वर्ग नरक अधिकार पर विचार करते है। इसी प्रकार धर्मार्थी जी भी सेठ जी की ओर से दान-पात्र की पहचान करते है।

उस दिन रजनी और राधा जब सवा दस बजे धर्मार्थी जी के कार्यालय मे पहुची वह उपस्थित थे। कार्यालय मे उनका आने और मिलने का कोई निश्चित समय नही था। राधा रजनी को लेकर निर्भीकता से अन्दर चली गई। राधा ने अन्दर पहुच सबसे पहले मुस्कराते हुए प्रणाम किया और फिर रजनी का परिचय देकर वह कुर्सी पर बैठ गई। धर्मार्थी जी ने हाथ जोडकर राधा के प्रणाम का उत्तर दिया, और फिर उनकी दृष्टि रजनी पर जम गई। रजनी इस समय दृष्टि झुकाये राधा की कुर्सी के पास खडी थी। धर्मार्थी जी उससे मिले—

"आप बैठिये। खडी क्यो हो।"

रजनी धर्मार्थी जी के सामने वाली कुर्सी पर बैठ गई।"

"आपको तो हमारे यहाँ से छात्रवृत्ति भी मिलती रही है।"

"जी हाँ। मैं आपकी कृपा की आभारी हूँ।"

रजनी ने फिर प्रार्थना पत्र धर्मार्थी जी के हाथ मे थमा दिया। धर्मार्थी जी प्रार्थना पत्र पर विहगम दृष्टि डाल रजनी की ओर देखने लगे। रजनी ने दृष्टि नीचे झुका ली। फिर वह राधा से बोले—

"इनका परीक्षा परिणाम तो अभी आया नही है। फिर भी इनको साधारण सा कार्य अभी दे देते है। ये मजदूरो के क्वार्टरो मे जाकर धार्मिक प्रचार करे। इस कार्य के लिए इनको डेढ सौ रुपये मासिक दे देगे। यदि ये चाहे तो यही पर इन्हे एक कमरा भी रहने के लिए दे दिया जायेगा।"

राधा ने सहर्ष स्वीकृति दे दी। रजनी ने भी आन्तरिक आशका का गला घोट कर धीरे से कहा—

"मुझे यह सेवा स्वीकार है। कृपया यह और बता दीजिए, यह नियुक्ति कब से होगी ?"

"आज से ही समझ लीजिये।"

धर्मार्थी जी ने घटी बजाई। घटी बजते ही चपरासी अन्दर आकर चुपचाप खडा हो गया। वह उससे बोले—

"बडे बाबू को बुलाओ।"

कुछ ही क्षणो मे बडे बाबू वहाँ आ गए। धर्मार्थी उनसे बोले—

"इनके लिए तुरन्त एक कमरे की व्यवस्था कर दो। आज से इनकी क्वार्टरो मे धर्म प्रचार के लिए नियुक्ति की गई है।

"जी श्रीमान् जी !" कहकर बडे बाबू वहाँ से चल पडे। उनके साथ ही राधा और रजनी की भी खडी हो गई। धर्मार्थी ने उसी समय रजनी को रोकते हुए कहा—

"आप अभी ठहरे। कुछ विशेष बाते करनी है।"

न चाहने पर भी रजनी रुककर बोली—

"कहिए ! क्या आज्ञा है।"

"आप पहले भी तो एक दो बार यहाँ आई है।"

"जी नही। आपने कही और देखा होगा।"

"अभी आप कहाँ ठहरी हुई है।"

"राधा बहन के पास ही ठहरी हूँ अभी तो।"

"मजदूरो के मध्य रहने मे कोई आपत्ति तो नही है आपको ?"

"जी, नही।"

"यदि वेतन कम हो, तो बढाया भी जा सकता है।"

"जी नही प्रर्याप्त है।"

"राधा जी से आप का परिचय कैसे हुआ ?"

"यह मेरी परीक्षा काल की सखी है।"

"शायद आप सहशिक्षा मे पढती रही है।"

"जी हाँ !"

"तो फिर आपका कोई सखा भी अवश्य होगा।"

"यह आप क्या कह रहे है ? ऐसे शब्द आपके मुख से शोभा नहीं देते।"

"क्षमा करना ! इस सत्य को जानने मे कोई दोष ही नही समझते।"

"आप मुझसे बडे है और साथ ही योग्य भी। क्या कह सकती हूँ मै आपके सम्मुख। मेरी दृष्टि मे तो व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित प्रश्न करना सर्वथा अनुचित है।"

"इस अनुचित और उचित के विवाद ने ही तो भारत की यह दशा बनाई है रजनी ! दूसरे देशो की ओर थोडा आँख उठाकर देखो वहाँ मनुष्यो को जीवन से कितना अनुराग है। यह तो केवल हमारा ही देश है जहाँ पाप और पुण्य की अनेक परिभाषाओ ने मानव-जीवन को निर्जीव बनाकर छोड दिया है।"

"मै आपके पास याचना लेकर आई हूँ, तर्क करने नहीं ।"

"और मेरे विचार से यहाँ आपको सर्वस्व लेकर आना चाहिए था ।"

रजनी कुछ कहना ही चाहती थी, कि बडे बाबू वहाँ आ गए । वह बोले— "चलिए बहिन जी ! आपको क्वार्टर दिखा दूँ ।"

रजनी जैसे कारावास स मुक्त हुई हो । बडे बाबू के साथ चल पडी । अखड सौन्दर्य की एकाधिकारिणी रजनी के विषय मे धर्मार्थी जी सोचते ही रह गए—कितना आकर्षक व्यक्तित्व है इस युवती का ।"

जो कमरा बडे बाबू ने दिखाया, रजनी को पसन्द आ गया । वह फिर राधा के पास आकर बैठ गई । वे दोनो कुछ देर इधर-उधर की बाते करती रही । उनकी बातचीत के समय वहाँ चपरासी आया और राधा को बुलाकर ले गया । राधा के कमरे मे प्रवेश करते ही धर्मार्थी जी से प्रश्न किया—

"तुम्हारी सखी तो कुछ रूखी सी दिखाई देती है ।"

"रूखी सी नही बल्कि सूखी सी कहिए ।"

"क्या कह रही हो राधा ? क्या फँस चुकी है किसी के जाल मे ।"

"आपको इतनी भी पहचान नही है ।"

"तो क्या मै विदेश मे यही पढ़ने गया था ।"

"सुना है, विदेशी लडकियाँ सब कुछ सिखा देती है ।"

"ठीक है किन्तु भारतीय लडकी से पढना बहुत कठिन है ।"

"तो समझ लीजिए देवी जी किसी की स्मृतियो मे खोई हुई है ।"

"कौन है वह सौभाग्यशाली ?"

'इसी का एक सहपाठी युवक ।"

"तब तो यह बडी ही उलझी हुई गुत्थी है ।"

"प्रयत्न करोगे तो सुलझ जायेगी ।"

"तो फिर सुलझाते समय एक सिरा तुम्हे पकडना होगा ।"

"मुझे पकडना न होता तो यहाँ लाती ही क्यो ?"

"क्या तुमने इसके प्रेमी युवक को देखा है ?"

"एक बार नही, अनेक बार।"

"बडा लक्की है, वह युवक।"

राधा फूट पडी—"लक्की ही नही बल्कि सुन्दर और स्वस्थ भी है। लाखो मे एक है श्रीमान् जी।"

"तो क्या तुम्हारे भी मन का मन्थन किया है उसने !"

"नारी के मन का मन्थन तो ब्रह्मा भी नही कर पाये है जनाब।"

"ठीक है। फिर भी हम इसका मन्थन अवश्य करेंगे।"

"यह पहले ही सोच लीजिए कि मन्थन करके पाना क्या है।"

"अमृत न सही मदिरा ही सही। कुछ तो मिलेगा ही।"

"यह भी सम्भव है इन दोनो के स्थान पर केवल विष ही मिले।"

"तुम तो पहले ही ज्योतिषी बन बैठी।"

"मेरे विचार से तो आप किसी मनभावती युवती से विवाह कर लें। इस प्रकार जीवन कब तक चलता रहेगा।"

"विवाह के पश्चात् आदमी केवल कर्तव्यो के लिये ही जीता है।

"और मेरे विचार से कर्त्तव्य पालन ही जीवन की सत्यता है।"

"तो फिर तुम आज तक विवाह के बन्धन से मुक्त क्यो ?"

"यह तो आप पहले ही जान चुके है। धन के अभाव मे माता-पिता अच्छा लडका पा नही सकते। और जिसको पाकर खिलाना पडे, उससे तो अविवाहित रहकर माँ-बाप की सेवा कही उत्तम है।"

"छोडो इन व्यर्थ की बातो को। अपनी सखी को बुलाओ। एक बज गया है। साथ बैठकर चाय पियेगे।"

"मै अभी बुलाकर लाती हूँ। आप चाय मगा ले।"

कहती हुई राधा बाहर चली गई। कुछ देर मे जब वह रजनी सहित वहाँ आई, चाय आ चुकी थीं। राधा ने आते ही चाय तैयार की और तीनो पीने लगे। धर्मार्थी जी ने बात की श्रृखला जोडी—

"हम चाहते है—हमारे मजदूरो का प्रत्येक क्वार्टर एक मन्दिर बन

जाये। घर-घर मे कीर्तन हो और प्रत्येक मजदूर भगवान का भक्त हो।"

रजनी इस कथन को सुनकर मन ही मन मुस्कराई। कितना आ-डम्बर है इस व्यक्ति के जीवन मे। एक ओर धर्म की दुहाई देता है और दूसरी ओर अधर्म से धर्म समझकर खिलवाड करता है। उससे चुप न रहा गया। वह बोली—

"मजदूरो के घरो को मन्दिर बनाने का उत्तरदायित्व आप मुझ पर छोड दे। इस कार्य के लिये मै दिन रात एक कर दूँगी। आप केवल उनकी आर्थिक समस्याओ को ही सुलझाते रहे।"

"ठीक है। भविष्य मे आप मजदूरो के कल्याण के लिये आप जो उचित समझे, मुझे सूचित करे। मै उनकी कठिनाइयो पर विचार करूँगा। मै तो उनको अपना भाई समझता हूँ। आप देखेगी—भारत के प्रत्येक मिल मे मजदूरो की यूनियन है। केवल यही एक मिल है, जहाँ के श्रमजीवियो ने कोई सगठन बनाने की बात ही नही सोची। मै चाहता हूँ—भविष्य मे भी यह समय न आये।"

तीनो ने अपनी-अपनी चाय समाप्त कर प्यालियो को मेज पर रख दिया। अवसर की नाडी पहचान राधा बोली—

"आपकी उदारता को यहाँ कौन नही जानता। रजनी बहन भी भविष्य मे परिचित हो जायेगी।"

राधा फिर कुर्सी से खडी हो गई। वह बोली—

"अब आज्ञा दीजिये। आज मै रजनी के साथ ही जाना चाहती हूँ। कल इनका सामान भी यहाँ लिवा कर लाना है।"

राधा के इस कथन के साथ ही रजनी भी खडी हुई और हाथ जोड प्रणाम कर चल पडी।

धर्मार्थी जी ने प्रणाम का कोई उत्तर नही दिया। वह न जाने उस समय कौन सी कल्पनाओ मे खोये हुए थे।

दोनो फिर वहाँ से मुक्त सी हो, सीधी घर आ गई।

६

रात्री के आठ बजे होगे। रमानाथ जी भोजन से निवृत्त हो बैठक मे नही गये। वे दालान मे पडी चारपाई पर लेट गये। वे अपनी पत्नी रामप्यारी से राजेश के विवाह के विषय मे परामर्श कर कोई अन्तिम निर्णय करना चाहते थे। चारपाई पर लेटे हुए ही वे बोले—

"मुझे तो समझ ही नही आता कि इस राजेश को क्या हो गया है। सुई खाया सा होता जा रहा है।

"न पेट भर खाना और न पूरी नीद सोना। फिर भला कमजोर क्यो नही होगा। यह तो कुछ पागल सा होता जा रहा है।"

"अब भोजन कर लिया है उसने ?"

"अभी तो आया ही नही है। कही फिरता होगा धक्के खाता।"

"इससे तो यह अनपढ ही अच्छा था।"

"तो फिर मुझसे क्या कह रहे हो। पढाया तो आपने ही है।"

"तुम तो हर बात पर उबल पडती हो। कौन है जो अपने बच्चों को पढाना नही चाहता। फिर मैने कौन सी भूल कर दी। अब नही तो विवाह के बाद आप ही ठीक हो जायेगा।"

"जब यह जानते हो तो दुबला होने की बात ही क्यो करते हो?" कहती हुई रामप्यारी रसोई से दूध का गिलास हाथ मे लिये रमानाथ के पास बरामदे मे आकर आसन पर बैठ गई।

"यह दूध क्यो ले आई ? राजेश को तो आ जाने दो।"

उसी समय राजेश ने दालान मे प्रवेश किया । वह छुप कर माता-पिता की बाते सुन रहा था । दोनो की बात-चीत से उसके हृदय मे इस समय उनके प्रति श्रद्धा भाव की गगा उमड रही थी ।

"अभी तुमने खाना भी नही खाया है बेटा कहाँ थे ?" रमानाथ बोले ।

"मुझे भूख नही है पिताजी ।"

"तो फिर दूध ही पी लो ।" रमानाथ ने दूध का गिलास राजेश के हाथ मे थमा दिया । रामप्यारी उठी और रसोई से दूसरा दूध का गिलास ले आई । राजेश ने खडे-खडे ही दूध पी लिया । वह फिर वहाँ से चुपचाप बैठक मे चला गया । उसके जाते ही रमानाथ रामप्यारी से बोले—

"सचमुच राजेश बहुत उदास रहता है ।"

"तो फिर कर दो, उसकी मन चहेती से उसका विवाह ।"

"मेरी तो समझ मे एक बात नही आतो । आखिर यह नारी क्या बला है ? महान से महान पुरुष को पल भर मे ही पागल बना देती है । विचित्र है यह वशीकरण मत्र । इसके वशीभूत मानव, परिवार, जाति, देश, धर्म आदि सब ही को भूलता चला जाता है ।"

"आज तो आप बडी अनुभव की सी बाते कर रहे है । ऐसा जान पडता है, जैसे सब कुछ देख चुके हो ।"

"हम कौन सा लडकियो के साथ पढे है ।"

"तो क्या स्त्रियाँ कालेजो मे ही मिलती है ?"

"व्यर्थ की बाते छोड अब विवाह की तैयारी मे जुट जाओ । मै शर्मा जी से कह देता हूँ कि एक महीने मे विवाह अवश्य करना है । वह भी तैयारी कर लेगे ।

"विवाह से इसका मन थोडे ही बदल जायेगा ।"

"बिलकुल बदल जायेगा । लोहे को लोहा ही काटता है । नारी के वियोग मे व्याकुल व्यक्ति का सीधा उपाय है रिक्त स्थान की पूर्ति ।

विवाह के बाद तो यह दिल्ली की ओर मुँह भी न उठायेगा।"

"आप ही जाने आदमियो के मन की बात। मै तो यह जानती हूँ, यदि शर्मा जी की लडकी उस लडकी से सुन्दर हुई तो ही यह उसको भूल सकता है।"

"जवानी मे तो सब ही स्त्रियाँ सुन्दर होती है रानी जी। जवानी अपने आप मे एक सुन्दरता है। यौवन की आँधी जब आती है, पाँव उखाडे बिना नही रहती। और जब यह आँधी जाती है, अपने पीछे एक अचल शान्ति छोड जाती है।"

"तो क्या यह आँधी आपके भी पाँव उखाड चुकी है?"

"मेरे ही नही, साथ मे तुम्हारे भी। भूल गई वह दिन जब राजेश का जन्म भी नही हुआ था, एक पल को भी अलग नही होती थी।"

"छोडो इन बातो को। बैठक मे जाओ। लडका अकेला होगा। उसको समझा बुझाकर विवाह के लिये तैयार कर लो। अच्छा यही है, साँप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे।"

"इस समय तो तुम बडी अच्छी लग रही हो।"

"तो क्या मै कभी बुरी भी लगती हूँ?"

"उसी समय जब मुँह देखी बाते करती हो। हमारे सामने हमारी सी और बेटे के सामने बेटे की सी बाते करना मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"देखो जी! बूढे पति और जवान बेटा—दोनो को प्रसन्न रखना नारी का पहला धर्म है।"

"तो क्या तुम्हारे विचार से हम बूढे हो गये है। खबरदार कभी फिर ऐसी बाते की तो। अभी तो हम जवान है जवान। जानती हो साठा पुरुष ही पाठा कहा जाता है और फिर हमारी तो उम्र भी अभी पचास वर्ष ही तो है। तुमने बूढा ही कहना आरम्भ कर दिया।"

"अपनी जवानी की बाते छोडकर पहले बेटे की जवानी को तो सभाल लो।"

"अच्छा एक बात मानो। हमारी जवानी को तुम सभालो और हम तुम्हारे बेटे की जवानी का प्रबन्ध करते है।"

रामप्यारी कुछ लजाकर रसोई मे चली गई। वह वही मे बोली—

"बैठक मे जाओ। यहाँ क्या कर रहे हो ?"

"जा रहे है श्रीमती जी।"

कहते हुए रमानाथ बैठक मे चले गये। राजेश उस समय बिस्तर पर बैठा था। वह पिता को देखते ही खडा हो गया। रमानाथ बोले—

"बैठो बेटा ! खडे क्यो हो ? रमानाथ अपने बिस्तर पर बैठ गये।

राजेश भी अपने बिस्तर पर बैठ, पिताजी से बोला—

"मै कल दिल्ली जाना चाहता हूँ ! पिताजी।"

"क्यो ? क्या कोई विशेष कार्य है ?"

"कुछ मित्रो से मिलना है और एक दो पुस्तक भी लानी है।"

"चले जाना। यह बताओ लौटोगे कब ?"

"तीसरे दिन लौट आऊँगा।"

"ध्यान से सुनो तो एक बात कहूँ बेटा ! मनुष्य कितना ही महान क्यो न हो, उसके जीवन की एक परिधि अवश्य है। उससे बाहर जाकर वह एक ओर अपने से शत्रुता करता है और दूसरी ओर वह सामाजिक सहानुभूति से वचित हो जाता है मनुष्य स्वतत्र होकर भी उद्दण्ड नही हो सकता। सभबहीन स्वेच्छाचारी मानव तो केवल पशु है पशु।"

"यदि आप नही चाहते, तो मै दिल्ली नही जाऊँगा।"

"दिल्ली जाने या न जाने की बात छोडो। मूल बात यह है कि तुम्हे हमारे निश्चय का विरोध नही करना चाहिए। क्या तुम हमारी प्रसन्नता के लिये अपनी भावनाओ का बलिदान नही कर सकते ? सत्य मानो तुम्हारी जगह यदि मै होता, प्रथम बार ही पिता के निश्चय का समर्थन कर देता। मुझे दुःख है कि तुम अपने धर्म को भूल गये हो।"

"मैंने आपके निश्चय का विरोध न किया है और न ही भविष्य

मे करूँगा। फ़िर भी मेरी एक प्रार्थना है। वह यही है कि आपकी वचनबद्धता मुझे दुनियाँ का सबसे विश्वासघाती बना देगी। इसीलिए उचित समझो तो विचार कर देख लो।"

"मै तुम से बलिदान चाहता हूँ बेटा।"

"यह मेरा बलिदान न होकर किसी अबला का बलिदान हैं। पिताजी। अच्छा होता यदि आप मेरी इस जीवन की सबसे बडी भूल का समर्थन कर देते।"

"और इससे भी अच्छा यह होगा कि तुम हमारे निर्णय को सहर्ष स्वीकार कर लो।"

"मुझे आपका आदेश शिरोधार्य है। राजेश ने इस कथन के साथ हृदय को पाषाण तो बना लिया था। किन्तु वह फिर भी धडकने लगा। उसके मुख पर असीम उदासी छा गई।"

"मेरी आत्मा सन्तुष्ट हुई बेटा।"

इस कथन के पश्चात् सन्तोष की साँस लेकर रमानाथ चुपचाप बिस्तर पर लेट गये। राजेश भी मलमल की चादर तानकर मौन मनन करने लगा—'कल दिल्ली जाकर रजनी से क्या कहूँगा ? मै कितना आगे बढ-कर पीछे हट रहा हूँ। एक सत्य आत्मा के प्रति विश्वासघात से बडा पाप क्या दुनिया मे कोई और हो सकता है। कितना अच्छा हो—आने वाली प्रात की प्रथम रश्मि मेरे शव का आलिगन करे। पाप के भार को वहन करने के लिए क्या करूँगा जी कर ? किन्तु क्या करूँ माँगने पर मौत भी तो नही मिलती।"

विचारो की बहुमुखी दौड के पश्चात् राजेश ने निश्चय किया—"जीवन मे प्रेयसी और पत्नी दोनो का स्थान पृथक है। रजनी प्रेयसी है और विवाह सम्बन्ध मे बँधने वाली स्त्री पत्नी। मेरा जीवन उस जलपात के समान है, जिसको जल, पवन और किरण सब ही की आवश्यकता है। माता-पिता यदि जल है तो पत्नी पवन और प्रेयसी रजनी प्रात काल की प्रथम किरण।"

राजेश को घण्टो पडा रहने पर भी नीद नही आई। उसने दियासलाई जलाकर घडी देखी—बारह बज चुके थे। वह फिर बिस्तर से उठकर गली मे आ गया। रात्री का सन्नाटा था। केवल झीगुरो की आवाज राजेश की श्रुतियों को स्पर्श कर रही थी। उसको गली मे देख एक कुत्ता भौकने लगा। फिर क्या था सारे गाँव के छोटे-बडे कुत्ते कर्णकटु आवाज मे अपने साथी के अनुयायी बन गये। धुँधली चाँदनी मे राजेश गली मे यूँ ही चलता चला गया। उसका कोई लक्ष्य बिन्दु न था, फिर भी वह गाँव से बाहर आ गया। रुका वह अब भी नही। विचारो मे खोया राजेश नदी के तट पर पहुच गया। उसे यहाँ रुकना पडा। उसी समय उसके मन मे एक विचार उठा—

जीवन के प्रत्येक पथ का अन्तिम छोर अवश्य है वहाँ से आगे कहाँ बढा जाये ? जब वह खडा हुआ सोच रहा था, उसकी आँखो के सामने से गीदडो की एक जोडी दौडती हुई निकल गई। उसने दृष्टि दूसरी ओर मोडी। देखा तो एक मृग दम्पत्ति का जोडा प्रेम-क्रीडा कर रहा था। इधर से दृष्टि मोड उसने नदी के पार देखा तो उसे सारस की एक जोडी खेत मे चुपचाप खडी हुई दिखाई दी। उसने सोचा—

"यही वह जोडी है जिसका प्रेम के पथ मे साहित्यकारो ने आदर्श प्रस्तुत किया है। सचमुच मानव जीवन की अपेक्षा पशु-पक्षियो मे कुछ मर्यादाये अवश्य पाई जाती है। जीवन को विकासोन्मुखी मानने वाले दार्शनिको पर राजेश को कुछ क्रोध सा आ गया। सभ्यता की दुहाई देने वाले केवल जीवन की यथार्थता को ढाँपे हुए है जीवन वास्तव मे उस ढोल के समान है जिसकी ध्वनि तो है किन्तु अन्दर से पूर्णतयारिक्त।"

झुरमुट मे बोलने वाले किसी पक्षी ने राजेश का विचार भग किया। उसकी दृष्टि जल प्रवाह पर पडी। उसने देखा—निष्ठुर जल मछलियो को छोडकर बहता जा रहा है। कितनी महान है ये मछली जो एक पल के वियोग मे ही प्राण दे देती है। राजेश को यह सब अपने जीवन का रूपक सा दिखाई दिया। वह फिर भारी पगो से घर लौट आया। उसे बिस्तर पर पड़ते ही नीद आ गई।

प्रात. जब वह उठा नौ बज चुके थे।

७

धर्मार्थी जी एक ओर मिल के व्यवस्थापक है—और दूसरी ओर सेठ करोडीमल के चहेते पुत्र समतुल्य । इस पुत्र स्नेह का एक विशेष कारण है । जब सेठजी युवा थे, उसी समय की घटना है। एक बार मेठजी एक पाठशाला के वार्षिक उत्सव मे सम्मिलित हुए । इस पाठ-शाला की प्रधानाध्यापिका थी धर्मार्थी जी की विधवा माता । उनसे सेठ का प्रथम परिचय निरन्तर निकटता का कारण बनता चला गया । वह की व्यवहार कुशल और सुन्दर । सेठजी उनकी उगलियो पर नाचने लगे । धर्मार्थी उस समय एक वर्ष का बच्चा था । आगे चलकर उसकी शिक्षा-दीक्षा का सम्पूर्ण भार सेठ जी ने ही उठाया । विदेश से जब धर्मार्थी शिक्षा समाप्त करके आये, तो उन्हे आते ही मिल का व्यवस्थापक बना दिया गया ।

सेठ जी के दो पुत्र और है । किन्तु वह अपना बडा पुत्र धर्मार्थी को ही मानते है । सध्या को धर्मार्थी जी सीधे सेठ जी के पास आते है और फिर अपनी कोठी मे विश्राम करते है आज जब धर्मार्थी जी सध्या को सेठ के पास पहुचे वह फोन कर रहे थे । धर्मार्थी जी चुपचाप खडे हो गये । जब सेठ जी ने फोन करके चोगा रखा, तो धर्मार्थी जी ने हाथ जोड कर प्रणाम किया । सेठ जी प्रणाम का उत्तर दिये बिना ही बोले—

''और सब काम धाम तो ठीक चल रहा है ।''

''जी हाँ । सब ठीक है । कुछ ऐसा अवश्य जान पडता है, जैसे मजदूरो मे कुछ साम्यवादी घुस आये हो ।''

"अँ !" सेठ जी सुनते ही चौक पडे—"इस बात की ओर खास ध्यान रखना। भगवान बचाये इन साम्यवादियो से। कहते हे अपने को साम्यवादी और होते है पक्के ढोगी और मक्कार। इनको तो आतकवादी ही कहना चाहिए। उखाड-पछाड के अतिरिक्त जेंग इन्हे कोई काम ही नही है। भोले मजदूरो की भलाई की आड मे इन्हे अपना उल्लू सीधा करना खूब आता है। एक ओर धन कमाते हे, और दूसरी ओर मजदूरो के लिये नेता बन जाते है।"

"आप चिन्ता न करे। मै इनको मिल मे पनपने ही नही दूँगा।"

"मिल मे ही क्या, मेरा बस चले तो इन्हे दुनियाँ मे ही निकाल कर फेक दूँ। कोई इनका धर्म नही। ईश्वर पर विश्वास नही। न सिर पर टोपी होती है और न पैरो मे जूती। फिर भी हर बात मे अपनी टाँग जरूर अडाते है।"

"मै भली प्रकार समझता हूँ इनकी गतिविधियो को। मैने मिल क्वार्टरो मे धर्म प्रचार की और व्यवस्था बढा दी है। हमारे मिल मे पजाबी, पुरबिये और पहाडी तीन वर्ग के मजदूर अधिक है। मे तीनो वर्गों की धर्म कीर्तन मडली के लिए बाजे ढोलक आदि का मिल की ओर से प्रबन्ध कर रहा हूँ। प्रत्येक मजदूर से भाईचारा बढाऊँगा। प्रत्येक के घर पर समय के अनुसार जाता रहूँगा। अब मै साम्यवादियो की बाते सुनने का मजदूरो को अवसर ही न दूँगा।"

"ठीक है, इस जमाने मे मजदूर भय से नही, प्यार से ही चलाये जा सकते है। जब तुम्हे कार मे जाते कोई मजदूर मिले, उसे तुरन्त कार रोक कर बिठा लो। उनसे प्यार बढाओ और उनमे भाग्यवाद का प्रचार कराओ। आवश्यक समझो तो कोई धर्म प्रचारक रख लो। मै तो चाहता हूँ, हमारे प्रत्येक मिल मे ही एक धर्म प्रचारक होना चाहिए।"

"आवश्यकता हुई तो ऐसा ही करूँगा।"

"करूँगा नही बल्कि कर दो। मेरा तो विचार है कि एक ऐसा मन्दिर बनवाऊँ जिससे विश्व मे ही धर्म की जाग्रति हो। उसमे प्रत्येक

देवी देवता की मूर्ति हो । सब उसके दर्शन के लिए आयें । इससे एक ओर धर्म की जाग्रति होगी और दूसरी ओर विश्व मे हमारा नाम भी होगा ।"

"यह विचार तो आपका बहुत उत्तम है । यदि हम धर्म के नाम पर प्रत्येक मजदूर से चार आने प्रति मास भी ले, तो भी पचासो हजार की प्रतिवर्ष धनराशि एकत्र हो सकती है । इसके अतिरिक्त अन्य साधनो से भी धन जुटाया जा सकता है । एक ओर अपने धर्म खाते का सारा धन वहॉ लगाएगे और दूसरी ओर चन्दा भी एकत्र करेगे ।"

"तुम तो बहुत समझदार हो गये हो अब ।"

"सब आप की कृपा का ही फल है सेठ जी । आपकी कृपा न होती तो हम किसी पाठशाला मे बच्चो की नाक ही साफ करते होते ।"

"क्या मतलब है तुम्हारा ? मै समझा नहीं ?"

"मतलब यही कि एक अध्यापिका का बेटा अध्यापक ही तो होता । न ऊँची शिक्षा मिलती और न उठ पाते ।"

"तुम्हे यह पता ही नही है कि मै तुम्हे अपना बडा बेटा समझता हूँ । इस नाते पढाना तो मेरा धर्म था ।"

"मुझे पता है आप मुझे पुत्र से भी अधिक प्यार करते है । आपके उपकार को तो मै आजीवन नही भूल सकता ।"

"अच्छा अब इस मन्दिर के निर्माण की तैयारी करो ।"

"आप चिन्ता न करे । मै कुछ पडितो और कलाकारो से मिलकर ही इसकी योजना बनाऊँगा ।"

"मन्दिर के निर्माण की सफलता के लिए कुछ नेताओ से भी तो मिलना होगा तुम्हे । परमिट का काम तो इनसे ही निकलना है ।"

"यह सब भी आप मुझ पर ही छोड दीजिये ।"

"अच्छा ठीक है कल फिर विचार करेगे ।"

कहते हुए सेठ जी कोठी के अन्दर चले गये । धर्मार्थी जी कुछ देर वही बैठे विचारो मे खोये रहे । उनकी उपस्थिति मे ही वहॉ अकस्मात्

रजनी का प्रवेश हुआ। उसको देख धमार्थी जी के मन मे उथल-पुथल सी मच गई। उन्हे आशका हुई—"कही रजनी का सेठ जी से विशेष परिचय तो नही है। यह कही मेरे विषय मे उलटी-सीधी बाते न कर दे। कुछ नही तो सेठ जी शकित अवश्य हो जाएगे। हो सकता है, वह फिर हमे धर्मार्थी न समझ कर क्रूर-कर्मार्थी ही समझ ले। बडे आदमियो की आँखें नही होती, केवल कान होते है।"

रजनी को धर्मार्थी जी ने प्रणाम का अवसर ही नही दिया। वह दोनो हाथ जोड प्रणाम कर बोले—

"आइये रजनी देवी। कहो कैसे आई ?"

रजनी ने गर्दन झुकाए हाथ जोडकर उत्तर दिया—

"मुझे आप केवल रजनी कहे तो उत्तम है।"

"क्यो ? ऐसी क्या बात है ?"

"यही कि मै केवल रजनी हूँ—देवी नही।"

रजनी अभी तक खडी थी। धर्मार्थी जी बोले—

"आप बैठ क्यो नही जाती, रजनी रानी ?"

"मै रानी भी नही हूँ महोदय !"

कहती हुई रजनी कुर्सी पर बैठ गई।

"बडी विचित्र है आप तो। आदर सूचक सम्बोधन से क्या आपको कोई चिढ है ?"

"चिढ नही है श्रीमान् जी ! आप मुझ से प्रत्येक दृष्टि से बडे है। इसीलिए आपका स्नेह सूचक सम्बोधन ही मुझे प्रिय है।"

धर्मार्थी जी सोचने लगे—विचित्र है यह युवती ! अनुपम सुन्दरी होकर भी कितनी व्यवहार कटु है पीठ पर हाथ ही नही रखने देती। पानी डालो तो गीली होने के स्थान पर और भी सूख जाती है।" प्रत्यक्ष रूप मे वह बोले—

"आप आई किसलिए है इस समय ?"

"सेठ जी और आपको धन्यवाद देने।"

"धन्यवाद किस बात का ?"

"यह तो विदित ही है आप महानुभावो का कुछ मेरा अतीत आभारी है और कुछ भविष्य आशा लगाए बैठा है।"

"सेठ जी तो अब मिलेगे नही। अन्दर चले गये है।"

"चलिए फिर कभी सही।" रजनी कुर्सी से खडी हो गई।

"ठहरो रजनी! हम भी चलते है। यदि उचित समझो तो कल पाच बजे हमारे साथ ही यहाँ आ जाना।"

"धन्यवाद।" कहती हुई रजनी चल पडी।

"ठहरो रजनी। इतनी जल्दी क्यो कर रही हो। इस समय बसो मे तो भीड होगी। जहाँ कहो हम गाडी से छोड देगे।"

"कृपा है आपकी।" कहती हुई वह कमरे से बाहर आ गई।

धर्मार्थी जी ने मन मे सोचा—कहाँ तक बचोगी देवी जी। आखिर आना तो हमारी ही गली मे है। प्रत्यक्ष मे वह बोले—

"अरे ठहरो भी रजनी! बडी रूक्षता है तुम्हारे व्यवहार मे।"

रजनी ने कमरे से बाहर रुककर उत्तर दिया—

'क्षमा करना मै अभी व्यवहार कुशलता मे दक्ष नही हूँ।"

इस कथन के पश्चात् रजनी वहाँ न रुकी। धर्मार्थी जी कुछ देर वही खडे हुए विचार मग्न रहे। फिर वह कुछ निश्चय सा कर, गाडी स्टार्ट कर, वहाँ से चल पडे। जब वह ओडियन बस स्टैंड पर पहुँचे तो उन्होने रजनी को वहाँ खडा देख गाडी रोक ली। उन्होने रजनी को सकेत से बुलाया और वह गाडी के पास आ गई।

"कहिए क्या आज्ञा है?" रजनी ने धीरे से पूछा।

"यहाँ भीड मे क्यो खडी हो? गाडी मे बैठ जाओ।"

"आप कष्ट न करे। मै चली जाऊँगी।"

धर्मार्थी जी अपना सा मुँह लेकर कार स्टार्ट कर वहाँ से चल पडे। रजनी इतनी देर मे ही बस की पक्ति मे सबसे पीछे रह गई। वह फिर इसी विषय मे सोचने लगी—

"भली लाइन में खड़ी थी। न जाने कहाँ से आ गया यह मनचला मधुकर, जो सूखे सुमन से सौरभ की माँग कर रहा है, यह भी नही जानता कि दियासलाई की तिल्ली से पत्थर नही पिघलता। कही ऐसा तो न हो, यह अद्भुत कृपालु धर्मार्थी मुझे जीवन की पंक्ति से भी इसी प्रकार अलग न कर दे।"

रजनी फिर ओडियन मे मद्रास होटल के लिए चल पडी। उसने सत्ताइस नम्बर बस से रोहतक रोड जाने का निश्चय किया। जब वह कनाट प्लेस के पार्क को पार कर रही थी, उसे दस दिन पूर्व की घटना स्मरण हो उठी—"यह वही पार्क है जहा प्रेमोन्माद की अनेक शुभ-घडियो ने जन्म लिया है और आज यह सब उजाड सा दिखाई दे रहा है उस समय यहाँ की प्रत्येक वस्तु नृत्य करती थी। और आज जैसे थक कर सब कुछ सो गया है।

रजनी फिर तीव्र गति से पार्क को पार करने लगी। उसने मद्रास होटल पहुँच कर बस की लम्बी पंक्ति देखी। वह पंक्ति मे खडी हो गई। लगभग आठ बजे बस आई और रजनी को बस मे स्थान मिल गया। वह पौने नौ बजे राधा के पास पहुँची। राधा ने उसको सर्व-प्रथम राजेश का एक पत्र दिया। रजनी पत्र को पाते ही खाना-पीना सब कुछ भूल गई। उसने पत्र को कई बार पढा। उसमे केवल कल राजेश के दिल्ली पहुँचने की सूचना थी। रजनी को कुछ शका अवश्य हुई, किन्तु मिलन के उन्माद मे वह सब कुछ भूल गई। उस रात रजनी हर्षातिरेक के कारण सो भी नही पाई।

८

दूसरे दिन रजनी राधा के साथ मिल मे नही गई। राधा ने भी विशेष हट न की। वह जानती थी इन्द्रासन को भी इस समय रजनी छोड सकती है। राधा जब चलने लगी, रजनी ने इतना ही कहा --

"धर्मार्थी जी से मेरी ओर से प्रार्थना कर देना, मे कल आऊँगी।"

राधा के चले जाने पर रजनी स्टेशन जाने की तैयारी करने लगी। यह यूँ तो इस समय आशा-निराशा के भूले मे भूल रही थी। फिर भी उसके पॉव धरती पर नही पड रहे थे। कई दिन से चला आ रहा उसका सिरदर्द दुम दबाकर भाग गया था। शरीर मे नवस्फूर्ति का सचार था। उसकी ऑखो मे अनुराग की रेखा उभर आई थी। भुजाएँ आलिगन के लिए उतावली थी। पूर्णिमा के चॉद से जैसे निशा का अन्धकार विलीन हो जाय रजनी की सम्पूर्ण निराशा, चिन्ता और सवेदना इसी प्रकार समाप्त हो गई। उसका मन मेघमाला का मयूर बन गया।

रजनी की वेषभूषा दर्शनीय है। शुभ्र वसना रजनी के भाल पर बिन्दी और मॉग मे सिन्दूर है। पॉवो मे सादी सी चप्पल है। गाडी साढे बारह बजे आयेगी और रजनी एक घण्टा पूर्व ही स्टेशन पहुँच गई। प्रतीक्षा की घडी जितनी असह्य है उतनी ही मधुर थी। रजनी ने जाते ही प्लेटफार्म टिकट ले लिया। वह फिर यात्रियो की चहल-पहल देखने लगी। वह कभी स्टेशन की ओर कभी अपनी घडी को

बार-बार देखती रही। उसे लग रहा था—जैसे घड़ियाँ आज कुछ धीमी गति से चल रही हैं।

रजनी ने निश्चय किया—आज जी भर कर उपालम्भ दूँगी। वह इसके लिए भाषा की खोज करने लगी। राजेश के समान शिक्षित होकर भी बात करते समय उससे भयभीत सी हुआ करती है। स्वयँ को राजेश के सम्मुख अयोग्य सा सिद्ध करने मे उसे कुछ अच्छा भी लगता है आज वह जैसे सब कुछ कहना चाहती है। वह बैंच पर बैठी जब विचार मग्न थी, उसने सुना—

"आज गाडी आधा घन्टा लेट है।"

रजनी को कहने वाले पर मन ही मन क्रोध आ गया। उसने स्टेशन मास्टर से पूछा। पता चला,—"गाडी ठीक आ रही है।"

ठीक बारह बजे रजनी प्लेटफार्म पर पहुँच गई। वहाँ पर स्नेही जनो के स्वागत करने वालो की भीड लगी हुई थी।

कुछ स्त्री-पुरुष पुष्पमालाये भी लिये हुए थे। रजनी को लगा—

"यह सब प्रदर्शन मात्र है। सच्ची माला तो हृदय की भाव-मणियो से गूँथी जाती है। उसने आँखे फाडकर गाडी को देखा वह आती हुई दिखाई न दी। उसे फिर क्रोध सा आ गया। किस पर ?—यह वह स्वयँ भी नही जानती। वह उस ओर देखती ही रही। उसी समय सिगनल हुआ। स्वागत करने वाले जन समुदाय मे कोलाहल मच गया। सबने तैयारी पूर्ण की और रजनी ने रेलगाडी की पटरी पर आँखे बिछा दी।

रात्री के वियोगी को जैसे मुर्गे की बाँग या मुल्ला की अजान सुख की सदेश वाहिका बनती है। रजनी के लिए गाडी की सीटी वही सुख का सन्देश लेकर आई। गाडी के रुकते ही रजनी हजार आँखो से उसे देखने लगी। वह द्रुत गति से एक बार तो सारी गाडी के समानान्तर रेखा सी खीचती चली गई। भीड मे राजेश को न पाकर अन्त मे वह बाहर जाने वाले द्वार पर खडी हो गई। वह राजेश को देखते ही पुकार पडी—

"प्रिय राजेश !"

भीड से अलग होकर राजेश भी पुकार उठा—

"प्रिय रजनी !"

दोनो कुछ देर के लिये अवाक् से हो गये। जैसे एक दूसरे की आकृति को पढ रहे हो। दोनो फिर बाहर आ गये। रजनी ने एक टैक्सी को आवाज दी। उसने निश्चय किया—नई दिल्ली के किसी होटल मे चाय पीते हुए ही खुलकर बाते करेगे।"

टैक्सी मे बैठते ही बात-चीत की शृ खला जुड गई।

"घर पर तो सब ठीक है न।"

"सब सकुशल है। राजेश ने धीमे स्वर मे उत्तर दिया।"

रजनी ने कुछ मुख पर पढा, और कुछ धीमे स्वर से अनुमान लगाया। दाल मे कुछ काला है।" वह फिर धीमे स्वर मे ही बोली—

"आप कुछ बदले से दिखाई दे रहे हैं।"

"क्या कह रही हो रजनी ! बदलने पर मेरे यहाँ आने का प्रश्न ही नही उठता। इतने दिनो मे बदलने वाले निश्चय भी कोई निश्चय होते है।"

"तो फिर क्या हो गया है आपके उल्लास और उन्माद को ?"

"हुआ कुछ नही, सब वैसे ही है। टैक्सी से उतरने दो, सब बता दूँगा"

"क्या कोई विशेष बात है ?"

"विशेष यही कि मै तुम से क्षमा माँगने आया हूँ।"

रजनी ने ज्वालामुखी के विस्फोट का सकेत पा लिया। वह स्वयँ को सभाल कर बोली—

"वह कौन सी भूल है आपकी, जिसके लिये दासी से क्षमा माँग रहे हो ."

"यही कि माता-पिता की प्रसन्नता के लिए मुझे सामाजिक विवाह करना ही पडेगा रजनी। तुम्हारी सहमति चाहिए।"

पुष्पित लतिका पर जैसे तुषारापात हो जाय। सागर को तैरकर पार करने वाला तट को छू कर जैसे डूब जाय। यही दशा राजेश के इस कथन से रजनी की हुई। एक मिनट मौन रहकर वह बोली—

"समर्थ को जब सब कुछ करने का अधिकार है, तो फिर वह असमर्थ से समर्थन क्यो चाहता है।"

टैक्सी ओडियन पर पहुँच गई। राजेश उत्तर दिये बिना ही टैक्सी से ही उतर गया। उसने टैक्सी ड्राइवर को पैसे देकर रजनी का हाथ पकडकर नीचे उतारा। दोनो फिर उसी ओर चल दिए, जहाँ उनकी भावनाये लम्बे समय की तुला मे तुलती आ रही थी। राजेश ने पार्क मे बैठते हुए उत्तर दिया—

समर्थ की सामर्थ्य का निर्माता जहाँ असमर्थ हो, वहाँ समर्थन के बिना कार्य चल ही नही सकता। समझ गई न।"

"अब तो कह दो मेरी शकाये सत्य थी।"

रजनी की आँखे अतीत के समान गीली हो गई।

"अरे! तुम रो रही हो। अभी तो मै तुम्हारे ही पास हूँ। तुम्हारी सहमती के बिना तो कुछ भी नही हो सकता। जिस विवाह की मै बाते कर रहा हूँ, वह तो एक सामाजिक प्रदर्शन मात्र है। अधीर न हो।"

"विवाह का सम्बन्ध तो सामाजिक प्रदर्शन से है। अब यह और बताओ, आने वाली बहन का सम्बन्ध किससे होगा? यथार्थ पर आदर्श की कलई न करो राजेश। आपकी विवशता का दूसरा अर्थ ही विवाह की स्वीकृति है।

"तुम मुझे क्षमा न करोगी रजनी।"

"देखो राजेश! अनेक बार एक ही बात की पुनरावृत्ति न करो। नारी का तो जीवन ही पुरुष के लिये कन्दुक-क्रीडा के समान है। इस मे भी विशेपकर विधवा नारी का। वह तो हवन की ऐसी क्षार है, जिसको एक ओर पवित्र कहकर सब अपने अगो मे लगाना चाहते है। और फिर स्नान कर धो -डालना चाहते है, गोपन क्रियाये न पाप हैं

और न ही पुण्य । आप जानते है, मेरे और आपके पर्दे के पीछे वाले जीवन के इस दुनियाँ ने दर्शन ही नही किये । इसीलिये यह दुनियाँ हमे दडित भी नही कर सकती । जहाँ तक मेरा प्रश्न है, उसका कोई महत्त्व ही नही है । मेरा तो अस्तित्त्व ही आपके मनियारे की कॉच की चूडियो के समान है । आप एक डडा लगा दीजिए समाप्त हो जायेगा । उगता सूर्य नही देखता कि उसकी प्रखर किरणो से कितने ओस के बिन्दु धराशायी हो गए है । क्षमा तो आप मुझे ही कर दे । कितनी भूल है मेरी । नियति की प्रतिकूलता पाकर भी मै मानव की सहानुभूति की अधिकारिणी बन जीवन जुटाने लग गई ।

राजेश ! रजनी की बातो को चेतना शून्य सा बैठा हुआ सुनता रहा । उसकी वाणी को जैसे लकुआ मार गया हो। बहुत कुछ विचार के पश्चात् वह बोला—

"विश्वास करो रजनी ! मेरा मन, हृदय और आत्मा आजीवन तुम्हारे ही रहेगे ।"

"मन, हृदय और आत्मा की शान्ति के लिए तो कई पथ चुने जा सकते है राजेश ! यदि कुछ नही तो भगवान की ओर ही इन्हे लगाया जा सकता है । मुझे तो आप यह बताये, भोग की भावना का अवलम्बन किसको बनाऊँ । मन, हृदय और आत्मा की शान्ति के ये थोथे आदर्श मेरी दृष्टि मे केवल एक भुलावा है आप जानते ही है, मुझे इन सबसे पहले आपके शरीर की भूख अधिक है और विवाह के पश्चात् इस पर अधिकार होगा आने वाली बहन का । इसके साथ ही यह न भूलो , यदि आपका मन मेरे पास रहा, तो उस बेचारी को कितना कष्ट होगा, जिसके सुहाग का मैने प्रथम स्पर्श करने की अनाधिकार चेष्टा की है ।"

इस कथन के साथ ही रजनी की ऑखे भीगी और गला भर आया ।

"ऑसुओ के अमरकोष को रिक्त न करो रजनी ।" राजेश बोला ।

"आँसू रोकने और लाने की वस्तु नही है मेरे देवता। यह आँखे तो अब आपको साक्षात् नही तो स्वप्न मे जीवन भर ही रोती हुई दिखाई देगी। यहाँ तक आते हुए मैने अनेक ठोकर खाई। मै सदैव साहस बटोरकर सभली और चल पडी। किन्तु यह ठोकर ऐसी है, जिसने मेरी सम्पूर्ण गति को ही छीन लिया है। अब एक पग भी आगे नही बढ सकती। जहा तक पीछे हटने का प्रश्न है वह मेरी दृष्टि मे केवल कायरता है।"

"तुम्हारे कथनो का अन्तिम निचोड यही है कि मै माता-पिता की इच्छा को अन्तिम रूप मे ठुकरा दूँ। चलो फिर यही होगा।"

"यह आपकी सबसे बडी भूल होगी। मै जानती हूँ भविष्य मे आपकी दुनियाँ मुझे आपके निकट नही आने देगी। और निकटता के बिना मुझे शान्ति नही है। इसलिए विवाह करने और न करने से स्थिति मे कोई अन्तर नही पडता। फिर मै माता-पिता के कोप का भाजन ही आपको क्यो बनाऊँ। आप इस स्थिति मे विवाह करे, यही उत्तम है।"

"एक ओर व्यग और उपालम्भो की बौछार और दूसरी ओर विवाह न करने के निश्चय का विरोध—आखिर तुम चाहती क्या हो? सचमुच मै तो चौराहे के उस सिपाही के समान बन गया हूँ, जो देखता चारो ओर है और चल किसी ओर भी नही पाता।"

"सिपाही का कर्तव्य केवल दूसरो को मार्ग दिखाना है राजेश कृपया आप मुझे ही बताये—किस ओर जाऊँ?"

"और यदि इस दुनियाँ मे मै ही न रहूँ, तो फिर मार्ग कौन बतायेगा? उलझे जीवन को सुलझाने का एक उपाय आत्म हत्या भी तो है"

"कायरो जैसा आचरण करने से पूर्व मुझे विष दे देना राजेश! मैंने पुरुष को सर्वस्व दिया है। किसी स्त्री को नही। स्मरण रखो—अपनी होने वाली बहन को सौभाग्यवती होने का प्रथम आशीर्वाद मेरा ही होगा। आप विवाह करे, और मुझे केवल अपनी सहानुभूति की ही

अधिकारिणी रहने दें। आपकी काया की छाया रजनी जीवन भर आपके साथ रहेगी। हाँ दिवस न होने से दुनियाँ उसे देख नही पायेगी।"

इस कथन को सुन राजेश का हाथ रजनी के पगो पर टिक गया उसके मुख से निकल पडा —

"देवी! तुम कितनी महान् हो।"

"कितना अच्छा हो, आप मुझे सदैव ही महान् समझे।"

राजेश गद्‌गद् हो गया। बोला—

"तुम कुछ भी कहो, मै विवाह नही करूँगा।"

"आप जानते है, हमारी सस्कृति मे पुनर्जन्म की कल्पना की गई है।"

"यह भी कोई पूछने की बात है। कौन नही जानता।"

"तो फिर मुझे पुनर्जन्म मे मिलने के लिए इस जन्म मे भगवान से प्रार्थना ही करने दो। प्रेम तो दो जन्म की साधना है राजेश।"

"तुम भी तो जानती हो, हमारे यहाँ बहुपत्नी प्रथा चली आ रही है।"

"यह सब भविष्य पर छोड दो राजेश।"

कहते हुए रजनी ने हाथ की अगूठी निकाल राजेश को दे दा।

'यह मेरी होने वाली बहन के लिए प्रेम की भेट है।"

इस समय राजेश प्रयत्न करके भी आँसुओ को न रोक पाया—रूँधे कठ से वह चीख पडा—"यह तुम क्या कर रही हो रजनी?"

"और आप यह क्या कर रहे हो? पुरुष होकर भी नारी जैसा आचरण।"

"मै क्या कर रहा हूँ, यह अपने हृदय से पूछ लो।"

"मैंने पूछ लिया है, अब हृदय को पाषाण बनाना ही होगा।"

"चलो फिर, अब यहाँ से उठे। छह बज गये है। रग-बिरगे रसिक जोडो के आगमन का भी समय हो गया है।"

कहते हुए राजेश खडा हो गया। रजनी भी मन मार कर खडी हुई और फिर दोनो बाते करते हुए मद्रास होटल की ओर चल पडे। मार्ग मे राजेश ने पूछा—

"यहाँ तुम्हारे ठहरने का प्रबन्ध कैसा है?"

"सब ठीक है, जो नही है, वह हो जाएगा।"

रजनी ने राधा के व्यवहार और मिल मे नौकरी की सारी बात राजेश को बता दी। धर्मार्थी के व्यवहार के विषय मे कुछ नही कहा। वह जानती है—कार्य-क्षेत्र मे नारी का दुर्बल मनोवृत्ति वाले पुरुषो से पाला अवश्य पडता है। अपना मन वश मे हो तो सब ही जगह गगा बहती है। व्यर्थ मे राजेश का सिर दर्द क्यो करूँ।

बस द्वारा जब रजनी और राजेश राधा के घर पहुँचे वह वही पर थी। उसने राजेश को हाथ जोड प्रणाम किया। प्रणाम का उत्तर दे राजेश कुर्सी पर बैठ गया। रजनी चाय बनाने लगी और राधा राजेश से बाते करने मे लग गई। चाय तैयार हुई और सबने एक साथ पी। चाय पीकर राजेश किसी मित्र के पास ठहरने चला गया।

९

धर्म के नाम पर भारत मे धन एकत्र करना आँधी के आमो जैसा है। सेठ करोडी मल ने यहाँ मन्दिर निर्माण की जो योजना बनाई है, उसके लिए धन इसी प्रकार एकत्र किया जा रहा है। सेठ के उद्योग-केन्द्रो मे श्रमिको से चन्दा लिया जा रहा है मजदूरो का बहुमत उदारता से दान दे रहा है। जिसने विरोध किया, उसकी आवाज नकारखाने की तूती बन गई। क्यो न बने। धर्म के कामो मे सब का ही तो सह-

योग होना चाहिए। छोटे पैसे से हजार तक जिससे जो मिला, वही लिया गया है। सारी व्यवस्था धर्मार्थी के हाथो मे है।

देश के बडे-बडे दानी सेठ उदारता से दान दे रहे है। सब का विचार है—धर्म किसी की निजी सम्पत्ति नही है। नाम चाहे सेठ करोडी मल का ही हो, शान्ति तो सबको ही मिलनी चाहिए। धन एकत्र करने के सारे स्रोत खोज लिए गए है। अब केवल सरकारी कर्म-चारियो का सहयोग चाहिए। धर्मार्थी जी कुछ अधिकारियो से मिल चुके है, सहयोग का वचन तो उन्हे सब देते है किन्तु सहयोग कोई नही देता। अभी तक स्थान की व्यवस्था भी नही हो पाई है। धमार्थी जी सदैव सध्या को सेठ जी से मिलते है। किन्तु वह मन्दिर की निर्माण-गति को धीमी देख, आज सेठ जी से विशेष बात चीत करने के लिए प्रात नौ बजे ही उनके पास आ गये। धर्मार्थी जी को देखते ही सेठ जी ने प्रश्न किया—

"आज इस समय कैसे आये हो तुम ?"

"यूँ ही कुछ बातचीत करनी थी।"

"कहो क्या बात है ?" सेठ जी आराम कुर्सी पर टिक गये।

"बडे अधिकारी तो काम ही नही करते। टालते रहते है अभी तक मन्दिर के लिए स्थान की व्यवस्था भी नही हो पाई है।"

"तुम काम लेना ही नही जानते। बडे अधिकारी काम करते हैं चाट-पानी से, या फिर बडें नेताओ के दबाव से। बताओ तुमने इन दोनो मे से कौन सा उपाय किया है ?"

"नेताओ से मिलना तो और भी कठिन कार्य है।"

"नेता कौन हे इनमे ? कल हमारे यहॉ चन्दा मागने के लिए सौ चक्कर लगाते थे। और आज बन गए है नेता। भूखे को तो पेट भर रोटी मिलते ही गर्मी आ जाती है।"

सेठ जी ने धर्मार्थी से कागज कलम लेकर तीन पर्चे लिखे। फिर वह पर्चो को धर्मार्थी के हाथ मे थमाते हुए बोले—

"इन तीनो मे से किसी एक को अपना बना लो। एक को अपना

कर सारे काम बनाये जा सकते है ।"

तीनो पर्चो को हाथ मे थमाते हुए धर्मार्थी जी बोले:—

"चन्दे के लिए तो नेतागरण आज भी हमे दुधारु गाय समझते है ।"

"दुधारू नही, कामधेनु कहो, कामधेनु । जब मन मे आया दूध निकालने के लिए चल पडे । हमारी बिल्ली और हम ही को म्याऊँ । हमारा ही खाते है और हम ही को गुर्राते है । कभी आय कर मे वृद्धि, कभी दान की प्रार्थना । दुनाली चलाते है दुनाली । फिर भी क्या करें । काम तो इन्ही दुष्टो से पडना है अब । हमे भी इनसे जितना हो सके लाभ उठाना ही चाहिए ।"

"मेरे विचार से तो अंग्रेज ही अच्छे थे सेठ जी ।"

"अच्छे नही, बहुत अच्छे । उन्होने अनेक कर लगा कर सेठो की कमर तो नही तोडी । कभी कुछ लिया तो सम्मान भी दिया । नाम के साथ आदर सूचक 'सर' लगा कर वह आदमी की पहचान करते थे । इन कमबख्तो से तो ये भी नही होता । ये तो वीरो, कलाकारो और पहलवानो का आदर जानते है किसी को कर्मवीर तो किसी को कला-वीर बनाना इन्हे खूब आता है । दानवीर जैसे इनके शत्रु है । सेना मे देखो—किसी को वीरचक्र तो किसी को कर्मवीर चक्र और कोई परम-वीर चक्र देकर बिठा दिया है । यदि हम धन न दे तो सारी नानी याद आ जाये । आज तो खाने को सिंह है, और कमाने को बेचारी बकरी ।"

"बिलकुल ठीक है सेठ जी । गुरु गुड थे और चेले शक्कर हो गए है । सचमुच ये तो अंग्रेजो के भी ताऊ है ।"

"छोडो इस सिर दर्द को । तुम मन्दिर की व्यवस्था करो । हमारा तो उससे भी नाम चल जाएगा ।"

सेठ जी उसी समय उटकर अन्दर चले गए । उनके उठते ही धर्मार्थी भी वहाँ से सीधे मिल पहुँच गए । जब वह साढे दस बजे मिल पहुँचे, रजनी उनकी प्रतीक्षा कर रही थी । वह उदास थी और इस समय उदासी ही उसका आभूषण बनी हुई थी । रजनी ने हाथ जोड धर्मार्थी को प्रणाम किया । धर्मार्थी जी एक गहरी दृष्टि से रजनी को

देख, सीधे कमरे मे चले गए। रजनी कुछ देर द्वार पर खडी रही और फिर साहस बटोर कर वह भी कमरे मे चली गई। धर्मार्थी जी ने रजनी को कुर्सी पर बैठने का सकेत करते हुए कहा—

"आप कल नही आई। हमने सोचा आपका विचार कार्य करने का नही है, इसीलिए और प्रवन्ध कर लिया है।"

रजनी चुपचाप प्रणाम कर वहाँ से चल पडी। धर्मार्थी जी शान्त बैठे रहे। जब वह कमरे से बाहर निकल गई तो धर्मार्थी जी ने घण्टी बजाई। चपरासी उपस्थित हुआ। वह उससे बोले—

"जो बहन जी अभी बाहर गई है, उनको बुलाओ।"

"चपरासी ने दौडकर रजनी को रोका। वह बोला—

"आपको अन्दर साहब बुला रहे है।"

रजनी लौटकर फिर अन्दर चली गई।

"अरे! आप तो एकदम चली ही गई। बैठिए।"

"आपके आदेश का पालन किया था मैने।"

"आपकी प्रकृति बडी ही विचित्र है।"

"आप समझते है ऐसा। अन्यथा मुझ मे तो कोई विचित्रता नही। आपने बुलाया तो मै तुरन्त आ गई।"

"तो क्या आपको कार्य नही चाहिए।"

"मेरे यहाँ आने का तो केवल उद्देश्य ही यह है।"

"तुमने अभी पृथ्वी देखी है, आकाश नही।"

"मैने जो कुछ देखा है, उसको छोड और कुछ नही चाहिए।"

"हमारा अभिप्राय आर्थिक जीवन से है।"

"देखिए महोदय! मै अर्थ के लिए जीना नही चाहती। मुझे तो केवल जीने के लिए अर्थ चाहिए। इसीलिए यहाँ आई हूँ।"

"हमे तो आप सेवा का अवसर ही नही देना चाहती।"

"सेवा मुझे करनी है आपको नही। अवसर दीजिए।"

"सेवा का अवसर तो एक साधारण सी बात है। आप चाहे तो

हम प्रत्येक अवसर दे सकते है। दु ख यही है आप अवसर का बिल्कुल भी सदुपयोग नही कर रही है।"

"जो आशा लेकर आई हूँ, मुझे उसके अतिरिक्त और कुछ नही चाहिए।"

"कही आप छली तो नही गई हो रजनी।"

"दूसरो को छलने वाला पहले स्वयँ को छलता है, महोदय!"

"यह थोथा आदर्श है रजनी।"

"पतनोन्मुख यथार्थ से कही अच्छा है यह थोथा आदर्श।"

धर्मार्थी जी को लगा—यहाँ बात बनने वाली नही। फिर भी इस को यहाँ रखने मे क्या बुराई है। तपन से तो लोहा भी पिघल जाता है। यह तो आखिर नारी है। निरन्तर निकटता से नारी समीप आये बिना नही रहती। कुछ देर मौन-मनन सा कर वह बोले—

"आप शिक्षित है। जीवन के विषय मे, आपका अपना निश्चय है। मै अधिक कुछ नही कहना चाहता। आप यहाँ कार्य करे। मै आप को कार्यविधि से अवगत कराता रहूँगा। आप मुझ से अवकाश मिलने पर मिलती भी रहा करे। क्वार्टर आपको मिल ही गया है।"

"आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। मै अपने कार्य का सुचारू रूप से पालन करूँगी। आप मेरी ओर से निश्चिन्त रहे।"

वह फिर खडी हो गई। धर्मार्थी जी ने उसे खडा होते ही फिर बिठा दिया। उन्होने निश्चय किया—उपकार के भार से दबी इस चिडिया को एक बार दाना डाल कर और देखूँ। हो सकता है जाल मे फँस ही जाए। वह बोले—

"आपने अपना जीवन परिचय बिलकुल नही दिया।"

"क्या करेगे जानकर? जितनी आवश्यकता है उतना आप जानते ही है और यदि नही मानते तो सुनो—मेरा जीवन पत्थर के उस रोडे के समान है जो आपत्तियो की सरिता के साथ बहता हुआ यहाँ तक आ गया है।"

इस कथन को सुनकर धर्मार्थी जी मन ही मन गद्गद् हो गये।

उनको लगा—आपत्तियो की मारी नारी की अनुकूलता पापड तोडने और केला काटने से भी सरल है। वह बोले—

"आपत्तियाँ कुछ आती हे और कुछ लाई भी जाती है। मुझे तो दया आती है उस बच्चे पर जो त्यौहार के दिन ही रूठ जाय। आश्चर्य तो यही है आप जानकर भी अनजान बनी हुई है।"

"इस समय तो मै आपकी इतनी ही कृपा की आभारी होना चाहती हूँ।" कहती हुई रजनी खडी हो गई।

"ठहरो रजनी! कुछ और बाते करनी है।"

रजनी ने समझ लिया—धर्मार्थी जी वाणी विलास के बहुत भूखे है। चलो फिर इसमे मेरी क्या हानि है। जिस कार्य मे अपनी हानि न हो और दूसरे को लाभ हो सके, वह पाप की सज्ञा नही पा सकता। वह विचार कर पुन बैठ गई।

"कहिए। क्या कहना है आपको?"

"कहना तो बहुत कुछ है रजनी! दुख तो यही है आप सुनने को तत्पर ही नही है। जिसको सुनकर भी तुम अनसुनी कर दो, उसके कहने से भी क्या लाभ?"

"आप अनेक बार तोड-मरोड कर एक ही प्रश्न उठा रहे है। थोडा सोचकर देखिए, मुझमे और आप मे कितनी विषमता है। आप पर्वत है तो मै रज कण। फिर बताइये मैं आपके किस अभाव का अवलम्बन बन सकती हूँ।"

"रज कण तो सारी सृष्टि का निर्माता है रजनी।"

"तर्क मे मै आपको परास्त कर ही नही सकती।"

"तो जिस प्रकार कर सकती हो, उसी प्रकार करो।"

"यह तभी सम्भव है जब आप मुझे बडे भाई का स्नेह दे और प्रतिदान मे, मै भी श्रद्धा की सरिता उमाडा दूँ।"

इस कथन को सुनकर धर्मार्थी जी हतवाक्य हो गए। चेतना का चपत लगते ही, उनकी जैसे आँखें खुल गई हो। कुछ देर तक शान्त रह कर वे कुछ संभल कर बोले—

"समाज के इन थोथे सम्बन्धो पर मुझे विश्वास नहीं है रजनी। इस युग के युवक और युवतियो ने इस सम्बन्ध को कितना कुलषित कर दिया है, यह शायद आप जानती ही नही है।"

"मेरी एक माँग पूरी करेगे आप ?"

"बोलो क्या चाहिए ?"

"मुझे यह अधिकार दे दीजिए कि मै जिस दृष्टि से भी चाहूँ, आप को देख सकूँ।"

आन्तरिक क्रोध का दमन कर वह बोले—

"अब कार्य आरम्भ करो। कल फिर मिलेंगे।"

इस कथन के साथ ही प्रणाम कर रजनी बाहर आ गई।

१०

अन्त मे राजेश की आहुति का समय आ ही गया। प्यार के अत्याचार की अन्तिम विजय हुई। स्नेह के कोमल मकडी जाल मे फॅसा राजेश मक्खी के समान उछला, तडपा, लाभ कुछ भी न हुआ। वह सुलझने के प्रयास मे उलझता ही गया। विवाह की आरम्भिक व्यवस्था पूर्ण हो गई है। सवेरे के आठ बजे है। बारात जाने मे अभी एक घन्टा शेष है। राजेश की ससुराल उसके गॉव रायपुर से केवल तीन मील है बारात को बारह बजे से पूर्व ही वहाँ पहुँचना है। इसीलिए प्रत्येक कार्य मे शीघ्रता की जा रही है। रमानाथ जी के सारे मेहमान बैठक मे बिराजमान है। आस-पास के गाँवो के परिचित व्यक्ति भी बारात के साथ जाने को एकत्र हो गये है। बारात मे लगभग ढाई सौ व्यक्ति है। अधिकतर बारात रथो मे जायेगी। आस-पास के सारे रथ ही बारात मे जा रहे है।

बाजे के साथ राजेश को ग्राम के चारो ओर घुमाया गया। ग्राम की युवास्त्रियौ ने राजेश की घोडी के पीछे गीत गाये। वृद्धा भी हॉफती दौडती उनका साथ देती रही। सबका प्रिय गीत है—ससुराल घर जइयो मेरा लाल बना।"

कुछ युवतियो ने राजेश के ऊपर चावल पुष्प और पैसो की वर्षा की। प्रत्येक प्राचीन रीति रिवाज का सुचारु रूप से पालन किया गया है। राजेश की अम्मा एक पनघट के कुएँ पर बैठी। राजेश से कहलाया गया—"घर चलो माँ, तुम्हारे लिए बहू लाऊँगा।"

राजेश को यह सब एक प्रदर्शन सा दिखाई दे रहा है। सब प्रसन्न है केवल राजेश ही उदासी की साक्षात् प्रतिमा बना हुआ है। उसकी आत्मा उसे धिक्कार रही है –' क्या विश्वासघात से भी बडा कोई पाप है। जिस पथ पर चलने का पगो मे बल न था, उस पर बढे ही क्यो ? अबला की आह वह चिंगारी है, जो भडक कर अत्याचारी को हवन की क्षार बनाए बिना नही छोडती।" वह आत्मा को उत्तर देता है—

"मैने रजनी की स्वीकृति ले ली है, मै निर्दोष हूँ।"

बारात रायपुर से दस बजे चली और बारह बजे तक पहुँच गई। दोपहर का बाग मे भोजन हुआ और सध्या तक वही विश्राम किया गया। सध्या को चढत के समय सारी बारात बन सॅवर कर रथ, तागो और कारो मे बैठ गई। बाजे की धूमधाम और आतिशबाजियो की चटापट के साथ बारात की शोभा मे चार चॉद लग गये। बारात से गॉव की तीनो चौपाल भर गई। सध्या के भोजन के तुरन्त बाद फेरो की शुभ घडी आई। वृद्धजन समुदाय के साथ राजेश पत्नी के घर गया। जब वह विवाह की वेदी के सम्मुख बैठ गया तो अन्दर से सिकुडी सिमटी उसकी पत्नी राजेश्वरी को लाया गया।

विवाह की सुदृढ शृ खला मे वर-वधु को बॉधने मे पण्डितो को लगभग दो घन्टे लगे। नारी-पुरुष के इस स्थाई सम्बन्ध की प्रथम शुभ घडी पर राजेश मूर्ति बना बैठा रहा। युवक स्वाभावानुकूल उसने

राजेश्वरी के साथ कोई छेड-छाड न की । पडित जो कहते गये, वह करता रहा । भावो को उत्तेजित करने वाले कई गीत गाये गये, किन्तु राजेश जैसे कर्ण-बधिर हो । उसे पता ही न था कि, यहाँ क्या हो रहा है । उसका तन यहाँ था, तो मन रजनी के पास । वह इस समय सुखद कल्पनाओ को भूल केवल दुखद आशकाओ पर ही विचार कर रहा था।

अन्त मे फेरो की सम्पूर्ण क्रियाये समाप्त हो गई ।

शर्मा जी ने राजेश्वरी के विवाह मे दिल खोलकर दहेज दिया । बारात के लिये भोजन की उत्तम व्यवस्था थी । सब उनकी मुक्तकठ से प्रशसा कर रहे है । रमानाथ जी का विवाह से पूर्ण सन्तुष्ट दिखाई दे रहे है । अपने विवाह के पश्चात्, उन्होने यही एक ऐसी घडी देखी है जिसको वह अपने जीवन की सबसे बडी कामना मानते थे ।

गॉव की युवा लडकियो को शर्मा जी ने विवाह से पहले ही एकत्र कर आदेश दे दिया था—"हमारे यहाँ जो लडका आ रहा है, वह दिल्ली का पढा-लिखा है। अधिक पढे-लिखे लडके विवाह मे गालियो को अच्छा नही मानते । इसीलिये कोई लडकी ऐसी वैसी गाली न दे । यह रिवाज अब पुराने हो गये है । ऐसा न हो कि लडका नाराज हो जाये ।"

लडकियो के सयम का बॉध विदाई के समय टूट गया । जब राजेश को टीके पर लाया गया, चारो ओर से गालियो की बौछार आरम्भ हो गई । राजेश की अम्मा का नाम लेकर न जाने कितना कुछ कहा गया । कुछ युवतियो के तो मन ही मचलते रह गये । कितना सुन्दर है राजेश्वरी का पति । कही यह हमारा होता ।" बेचारी सोचती ही रह गई ।

टीके की समाप्ति पर एक सुन्दर फूलो से सजा हुआ रथ शर्मा जी के द्वार पर आ गया । जब विदाई की सम्पूर्ण क्रियाये पूर्ण हो गई, तो बहू को रथ मे बिठाया गया । जब रथ नव-वधु को लेकर चला तो रमानाथ का मन प्रसन्नता से बल्लियो उछलने लगा । उन्होने रथ के ऊपर पचास रुपये के पैसो की बौछार कर दी ।

सम्पूर्ण बारात, वधु को विदाकर गाँव से बाहर कुछ देर के लिये रुकी। यही पर रमानाथ जी ने अपने एक युवा मित्र वैद्य से कहा— "राजेश को बहू वाले रथ मे ही बिठा देना।"

राजेश उस रथ मे नही बैठा। वह अपने कुछ मित्रो सहित कार मे ही गाँव लौट गया और दो बजे तक सारी बारात भी गाँव रामपुर आ गई। फिर क्या था। सारे गाँव की स्त्रियो का दल वधु का मुँह देखने के लिये उमड पडा। रामप्यारी इस समय फूली न समा रही थी। अन्त मे गठबन्धन के साथ बहू को उतार लिया गया।

जिस समय बहू ने अपने नव-द्वार मे प्रवेश किया, रमानाथ जी वही खडे थे। राजेश्वरी कुछ झुककर चल रही थी। वह पुकार पडे—"झुक-कर क्यो चल रही हो बेटी। मेरा बेटा कोई बौना थोडे ही है।"

यह सुन एक वृद्धा बोल पडी —

"तुम जाओ जी। नई बहू झुककर ही चलती है।"

रमानाथ मुस्कराते हुए वहाँ से मेहमानो के पास चले गये। राजेश भी कार्य निवृत्त हो बैठक की एक कोठरी मे आकर लेट गया।

"बहू तो अच्छी है रामप्यारी।" कलावती ने कहा।

धापो बोल पडी—"हमारा लडका राजेश क्या कम अच्छा है।"

"भगवान् की मिलाई जोडी है।" चमेली ने दोनो का समन्वय किया।

रामप्यारी डर रही थी – कही मेरी जोडी को नजर न लग जाये। राजेश्वरी घूँघट निकाले बैठी थी। वह न जाने कितनी सुखद कल्पनाओ मे खोई हुई थी। विपरीत उसके राजेश को लग रहा था—जैसे वह आकाश को छूकर पाताल से गिर गया है। उसके अरमान निर्जन मे मे पडी उस कब्र के समान है जहाँ कभी भी दीपक नही जलेगा। वह सोच रहा था—

"विचित्र है यह दुनियाँ जो चाँद को छुपाकर चकोर से कहती है— सचेत रहना। मीन को जल से पृथक् कर कहती है – जीवित रहो।

रजनी अब कहाँ होगी ? क्या कर रही होगी ? स्मरण करते ही राजेश की आँखो मे आँसू छलक आये। उसी समय उसके पिता ने पुकारा।

"वहाँ क्या कर रहे हो राजेश ? यहाँ आ जाओ।"

वह फिर घर चले गये, और एकान्त मे अपनी पत्नी से बोले—

"बहू को समझा देना। बुद्धू न बनी रहे।"

"मै सब जानती हूँ। मुझे क्यो बता रहे हो।"

"यूँ तो तुम खेली-खाई हो।"

"लडके का विवाह करके अब बुड्ढे बन जाओ।"

"जानती हो, बुड्डे और बच्चे का मन एक जैसा ही होती है।"

"ये बेकार की बात फिर कर लेना अब राजेश को घर भेज दो। भूखा होगा। इधर बहू भी उसके पीछे ही खाना खायेगी।"

"भई वाह। हमारी बातो को वेकार बता रही हो। हमारी बाते तो अभी वैसी ही चलेंगी। अपनी ढपली और अपना राग।"

"मैने सुन लिया सिर क्यो खा रहे हो। राजेश को भेज दो।"

"लो मै जा रहा हूँ।" कहकर हँसते हुए रमानाथ चले गये।

उनके जाते ही रामप्यारी बहू के पास आकर बोली—

"देखो बहू ! मेरा बेटा पढा-लिखा है और दिल्ली की हवा देख चुका है। तुम लजीली-शर्मीली-न बनी रहना। देखती हूँ तुम कितनी सम्भलकर चलती हो। बस मुट्ठी मे वन्द कर लो इसको।

उसी समय राजेश वहाँ आया, और रामप्यारी बाहर को खिसक गई। लज्जा के आवरण मे लिपटी राजेश्वरी सोच रही थी—

"एक बार घूँघट उठा कर तो देख लूँ।" उसने ऐसा नही किया। केवल अपने भाल को राजेश के पगो पर टिका दिया।"

राजेश खडा-खडा सोच रहा था—

"न जाने कितनी अभिलाषा लेकर आई है यह युवती यहाँ तक। कर्त्तव्य कहता है निर्वाह करो। भावना समर्थ नही करती। मन न जाने क्या चाहता है ? शरीर आत्मा के आदेश की प्रतीक्षा कर रहा है। इन सबसे पृथक्, इन्द्रियाँ भोग के लिये ही उतावली है।"

राजेश्वरी उसी समय उठी और डलिया से एक लड्डू उठाकर राजेश के मुँह की ओर बढाया। इस समय उसका घूंघट आधा खुला हुआ था। राजेश का मुँह अनायास खुल गया। लड्डू को खाकर वह बोला—

"अब तुम भोजन कर लेना।"

वह फिर एकान्त चिन्तन के लिये नदी के किनारे चला गया। सरिता के अविराम प्रवाह को देख वह सोचने लगा—

"कितनी उतावली है यह सरिता, सागर को पाने के लिये। नही जानती, इस दुष्ट ने कितनी ही सरिताओ के जल को खारा बना दिया है। कितना कठोर हो जाता है समर्पण को ग्रहण करने वाला।"

रात के नौ बजे जब राजेश लौट कर आया, उसकी प्रिय मडली ने उसे घेर लिया। हास्य और विनोद की फुलझडिया छूटी—

एक मित्र बोला—"आज तो पाँचो घी मे है।"

दूसरे ने कहा— 'मिठाई भी लेते जाना भाभी जी को।"

तीसरे ने चुटकी भरते हुए—"मन मे लड्डू फूट रहे होगे मित्र।"

चौथे ने निर्णय दिया—देर न करो भाभी जी प्रतीक्षा कर रही है।"

राजेश को हास्य रस इन पडितो की मडली मूर्ख मडली-सी दिखाई दे रही थी। वह सोच रहा था—

"कितने भोले है ये ग्रामीण युवक। इस विपय मे इतना ही तो जानते है। ठीक भी है, इन्होने कौन-सा फ्रायड को पढा है।

उसी समय राजेश के परिवार की एक भाभी ने कहा—

"लाला राजेश, घर आ जाओ।"

खिलखिलाती मित्रमडली को छोड राजेश फिर घर चला गया।

वही भाभी बोली—"यहाँ गर्मी बहुत है, आपकी चारपाई छत पर है।"

राजेश बोला—"मै तो बैठक मे सोना चाहता हूँ भाभी।"

"मन मन भाये, मुँडिया हिलाये।" कहती हुई भाभी वहाँ से चली गई।

और फिर राजेश भी चुपचाप छत पर चला गया। वही पर राजेश्वरी पलग के पास आसन पर बैठी थी। राजेश के पलग पर बैठते ही उसने दोनो हाथो से उसके चरण छुए।

सुहाग की रात्री मे धुँधली चाँदनी, सन्नाटा और तारिकाओ की अज्ञात छाया ने मिलकर राजेश्वरी के पक्ष का ही समर्थन किया।

११

धर्म के सुदृढ जाल को अब धर्मार्थी जी ने सारे क्वार्टरो मे लगा दिया है। घर-घर मे भजन-कीर्तन की महिमा का बखान होता है। ढोलक और बाजे का प्रबन्ध कर दिया गया है। धर्मार्थी जी प्रत्येक मजदूर के घर छोटे-बडे अवसरो पर अवश्य जाते है। उनके प्रति श्रमिको की श्रद्धा बढती जा रही है। आज भी किसी पुरविये मजदूर के घर मे सत्य नारायण की कथा है। धर्मार्थी जी जब दस बजे मिल मे आये, सीधे मजदूर के घर गये। उनको देखते ही वहाँ उपस्थित स्त्री-पुरष चुप-चाप खडे हो गये। सबके मुख ऐसे ही खिल उठे जैसे सत्य नारायण जी के उन्हे साक्षात् दर्शन हो गये हो। सबको एक दृष्टि से देख धर्मार्थी जी अन्त मे अपने लिये सुरक्षित आसन पर विराजमान हो गये।

कथा का श्री गरोश पहले ही हो चुका था। कुछ ही देर मे कथा समाप्त हुई, और मवने चरणामृत लिया। फिर सब धर्मार्थी जी की ओर देखने लगे। सब चाहते थे, धर्मार्थी जी कुछ बोले। वास्तव मे यह कथा धर्मार्थी जी को घर बुलाने का एक साधन थी। कथा के समय जो उपस्थिति थी, अव उसकी दस गुनी होती है। एक मजदूर ने धर्मार्थी जी

से प्रवचन के लिये आग्रह किया। धर्मार्थी जी ने उसकी प्रार्थना को स्वीकार कर भाषण आरम्भ कर दिया—

"भाइयो और बहनो। इस मिल मे मेरे हजारो छोटे भाई कार्य करते है। बडा होने के नाते मेरा धर्म है कि प्रत्येक की कटिनाई पर ध्यान दूँ। इसीलिये मेरी प्रार्थना है, आपको जब भी कोई कठिनाई हो आप सीधे मेरे पास चला आया करे। आधी रात को मै आपकी बात सुनूँगा। आप जिस भगवान के भक्त है मै भी उसी का सेवक हूँ। इसी लिये मुझे आपकी सेवा करने मे अतीव हर्ष होता है।

मुझे उस समय बडा दुख होता है, जब मै अपने परिचित भाइयो को पजाबी या पहाडियो के साथ देखता हूँ। मै चाहता हूँ, दूसरे आदमियो की आप पर छाया न पडे। आप जानते है इन पजाबियो को हमने नौकरी दी, क्वार्टर दिये और ये कभी हमारे न हुए। मुझे प्रसन्नता है। आप सदैव मेरे साथ रहते है, आप मेरे है, मै आपका हूँ। मैने आप लोगो के घरो और बच्चो की देखभाल के लिये यहाँ एक बहन जी को भी रख लिया है।

भाषरा को सक्षिप्त कर धर्मार्थी जी सबको हाथ जोड प्रणाम कर वहाँ से चल पडे। उनके साथ मजदूरो का जमघट कुछ दूर तक चलता ही रहा। क्वाटरो से बाहर चौडे मैदान मे जब धर्मार्थी मजदूरो के साथ चल रहे थे, जान पडता था, जैसे तारिकाओ का दल अन्धेरी रात मे चन्द्रमा को घेर कर चल रहा हो। उन्होने फिर मजदूरो से विदाई ली। और फिर वह सीधे रजनी के क्वार्टर पर पहुँच गये। रजनी उस समय तैयार हो क्वार्टरो मे भ्रमरा के लिए जाने वाली थी। धर्मार्थी जी को देखते ही उसने हाथ जोड प्रणाम किया और बाहर आ गई।

दोनो फिर बाते करते हुए मिल की ओर चल दिए—

"आप आज कथा मे नही आई। मैने आपका परिचय दे दिया है।"

"मेरी कुछ तबियत ठीक नही थी। परिचय के लिए धन्यवाद।"

"आप कुछ खोई-खोई सी रहती है।"

"यही तो जीवन है श्रीमान् जी।"

"हम, तो आज तक नही जाना इस जीवन को।"

"आपका क्षेत्र ही दूसरा है महोदय। आप अर्थ के द्विगणोत्तर सिद्धान्त के पडित है। और यह अच्छा भी है। इस क्षेत्र से बाहर नही जाओ तो अच्छा है। सच मानो, जीवन के इस पक्ष को जानने वाले का जीवन अपने लिए एक ऐसी पहेली बन जाती है, जो कभी सुलझ ही नही पाती।"

रजनी के इस कथन से धर्मार्थी जी ने जान लिया देवीजी ने कोई गहरी चोट खाई है। रजनी के व्यग की ओर उन्होने कोई ध्यान नही दिया।

दोनो फिर बाते करते हुए कार्यालय मे पहुँच गये। धर्मार्थी जी ने कुर्सी पर बैठते हुए रजनी को बैठने का सकेत कर कहा—

"देखो रजनी! तुम्हारे कथनानुसार हमारे क्षेत्र पृथक है मेरी इसीलिए प्रार्थना है कि या तो हमारे क्षेत्र मे आ जाओ और नही तो हमे अपने क्षेत्र मे बुला लो।"

"यदि आप ऐसे प्रश्न नही करे तो अच्छा है।"

"तुम जानती हो रजनी! पानी को देखकर प्यास बढ जाती है।"

"ठीक है आपका कथन! परन्तु पहले आप यह तो सोच ले जो जल आप देख रहे है। वह कितना खारा है।"

"तुम तर्क मे बेजोड हो रजनी!"

"आपके भ्रम का निर्वारण मेरा प्रथम धर्म है।"

"और हमारी भावना के विपय मे आपका क्या धर्म है।"

"यह तो मैं अपने विषय मे ही नही जान पाई।"

"मन की बात कुछ निराली ही होती है रजनी।"

"जब आप मन के निरालेपन को जानते है तो फिर मेरे म के प्रवाह को मोड़ने का प्रयत्न ही क्यों कर रहे है?"

"इसका यही अर्थ है कि आप मन का दान कर चुकी हैं।"

"यह तो आपको प्रथम परिचय पर ही जान लेना चाहिए था।"

उसी समय टेलीफोन की घण्टी बजी। सेठ जी का फोन था। चोगा उठाते ही आदेश मिला—"तुरन्त मेरे पास चले आओ।"

धर्मार्थी जी उसी समय जी हाँ! जी हाँ! अभी आया, कहते हुए खडे हो गये। रजनी ने तुरन्त चुटकी ली—

"यही है आपके मन की निराली दुनिया।"

"क्षमा करना रजनी! सेठ जी का फोन है।"

"मन के महत्व को जानने वाले तो भगवान को भी भूल जाते हैं धर्मार्थी जी। अर्थ और सम्मान की तो उन्हे कोई चिन्ता ही नही होती।"

धर्मार्थी जी ने चलते समय सुना सब, किन्तु उत्तर कुछ नही दिया। वह सीधे कार द्वारा सेठ जी के पास पहुँच गये। रजनी भी भारी पगो से उठी और क्वार्टरो मे भ्रमण के लिए चल दी।

धर्मार्थी जी को देखते ही सेठ जी आज्ञा भरे स्वर मे बोले—

"कोयले की समस्या सारे ही मिलो मे भयकर रूप धारण कर गई है। तुम दिल्ली मे रहते हो। बडे-बडे नेताओ से मिलकर परिचय क्यों नही बढाते। उस दिन तुम्हे पर्चे लिख कर दिये थे। क्या किया उनका? यदि सबसे नही सेवक चन्द से ही मेल-जोल बढा लो। पुराना कॉंग्रेसी है। पक्का घाघ है। सारे काम बना दिया करेगा।"

"मै उस दिन आपका पत्र लेकर उससे मिला था। वह मत्रियो का गुरु है। जाते ही हरिजन फड के लिये पाँच हजार रुपये की माँग कर बैठा। मै क्या करता? आपके ऊपर टाल कर चला आया। इस समय तो हम ही चन्दा कर रहे है।"

"यही तुम्हारी मूर्खता है। उसी समय पाँच हजार रुपये का चैक काट देना चाहिए था। वह पाँच हजार आज पाँच लाख बनकर आते। काम इसी प्रकार चलते है। मुझे देखो। बाप दादाओ ने गाँवो मे नमक

मिर्च बेचकर पेट पाला। हम जो कुछ है, आज सारा देश जानता है तुम भी समय की नाडी पकड कर चलो। केवल पढने से काम नही चलता। दुनियाँ की चाल सीखनी ही होगी।"

धर्मार्थी जी शिष्य बने चुपचाप सुनते रहे। कुछ देर मौन मगन सा कर वह बोले—

"अब आप चिन्ता न करे। सेवक चन्द को पक्का चेला बना लूँगा। आप के पास किसी कठिनाई को लेकर नही आऊँगा।"

"अच्छा अब जाओ।" कहकर सेठ जी पगडी उतार कर पलग पर इसी प्रकार पसर गये जैसे कीचड मे भैसा। धर्मार्थी जी वहाँ से सीधे सेवक चन्द जी के पास तीमारपुर पहुँच गये। वह उस समय कही जाने की तैयारी कर रहे थे। धर्मार्थी को देखते ही सेवक चन्द ने आगे बढकर हाथ मिलाया और दोनो कमरे मे बैठ गये।

"कहिये सेठ जी आज कैसे कष्ट किया।"

"हम सेठ जी नही है सेवक चन्द जी। हम तो आपके ही भाई है आप सुनाइये क्या समाचार है?"

"सब ठीक है।" कहते हुए सेवक चन्द जी उठे और नौकर को आवाज दी। नौकर दौडा हुआ आया। वह उससे बोले—

"दो गिलास शर्बत लाओ।" नौकर चला गया।

सेवक चन्द जी अब तख्त पर पद्मासन लगाकर बैठ गये। धर्मार्थी जी को शीघ्रता थी। वह बोले—

"मै कुछ आवश्यक कार्य को लेकर आया हूँ।"

"कहिए! मेरे योग्य क्या सेवा है।

"सारी सेवा का निचोड यही है कि आप हमारे और हम आपके दिल और जान से बन जाय।"

"बात तो बताओ। हम तो सदा ही आपके है।"

"बात यही है कि मन्त्रियो से हमारे कामो मे आप हमे सहयोग दे।"

"अवश्य। अपने तो सब ही कान पकडे चेले है। जो अधिकारी नही सुनते, उनके कान हम बडो से खिचवा देते है।"

धर्माथी जी ने अपने सम्पूर्ण कार्यों का ब्योरे वार परिचय दे दिया।

सब कुछ सुनकर सेवक चन्द बोले—

ये तो सब बांये हाथ का खेल है। आप चिन्ता न करे, थोडी दौड धूप करनी होगी। दाना डालते जायेगे और चिडिया फॅसती जायेगी।

"आप चिन्ता न करे। कुछ दिनो मे आपके लिए किसी प्रकार भी एक गाडी का प्रबन्ध अवश्य करेगे। हम जानते है —हाथ को हाथ धोता है। जब आप हमारे है तो हम भी आपके हे।

"तेल तो तिलो मे से ही निकलता है धर्मार्थी जी।"

उसी समय शर्बत के दो गिलास आ गये। दोनो ने जब शर्बत पी लिया तो सेवक चन्द जी बोले—

"अब आप किधर जायेगे?"

"जहॉ आप कहे। आपको छोडकर मिल चला जाऊँगा।"

'चलिये फिर मुझे नई दिल्ली छोडते जाना।"

कार द्वारा धर्मार्थी जी जब सेवक चन्द को नई दिल्ली छोड मिल पहुँचे तो पॉच बज चुके थे। उन्होने आधा घन्टे तक आवश्यक फाइलो को देखा। कुछ पत्रो पर हस्ताक्षर लिए। वह आज कुछ थके हुए से थे। कार्यालय से निकल वह क्वार्टरो मे भ्रमण के लिए चल दिये।

जब वह रजनी के क्वार्टर के पास पहुँच उनके पॉव ठिठक गये। उन्होने पास से जाते हुए एक मजदूर मे रजनी को बुलवाया। वह न चाहने पर भी बाहर आ गई।

रजनी को साथ लेकर धर्मार्थी जी ने क्वार्टरो का एक चक्कर लगाया। जिस समय रजनी उनके साथ चल रही थी। क्वार्टरो की स्त्रियॉ आपस चर्चा कर रही थी। पढ लिखकर स्त्रियॉ कितनी बेशर्म होती जा रही है। यह देखो—सिर खोल कर कैसी जा रही है। शर्म नही आती इसको। क्या लगता है यह इसका। ऑखे किस प्रकार मटकाती है। डूबके मर जाय ऐसी लडकी।

एक चक्कर लगाकर धर्मार्थी जी रजनी से विदा हो, फिर वहाँ से चले गये।

रजनी न जाने आज क्यो विशेष उदास थी।

१२

सेठ करोडीमल के कपडा मिल मे ग्राम रायपुर के कुछ जुलाहे जाति के मजदूर कार्य करते है। सर्वप्रथम गाँव से सूका भाग कर गया था। उसने मिल मे नौकरी कर कई युवको का हाथ पकडा। अब उसकी एक टोली सी बन गई है। सूका मिल के क्वार्टर मे सबके साथ रहता है। छुट्टियो मे सारे मजदूर गाँव अवश्य आते है। उनको सुविधा यह है कि गाँव आते समय टिकट नही लेना पडता। लुक छिप कर गाडी मे बिना टिकट ही यात्रा कर लेते हैं। बहुत हुआ तो शाहदरे तक का टिकट ले लिया। आते समय पैसे अवश्य देने पडते है।

उस दिन रविवार था। मजदूरो की यह अलबेली टोली गाँव आई हुई थी। प्रसन्न मन सबने सवेरे ही अपनी ड्रेसिग की और फिर गाँव मे एक चक्कर लगाना आरम्भ कर दिया। सबके मुँह मे बीडी है। बालो से तेल टपक रहा है। पीले बनियान मोटी मलमल के कुर्तों से दिखाई दे रहे हैं। जेबो मे रगीन रूमाल है, जो आधे दिखाई दे रहे है। खुले पायजामे, लाल जुराब और काले जूतो पर उनको विशेष गर्व है। क्यो न हो ? सूकर को पैंसठ और शेष चार साथियो को साठ-साठ रुपये जो मिलते है। गाँव मे तो घास खोद कर ही पेट पालते थे। दिल्ली मे नौकर है, इसलिए जहाँ जाते है, उनका सम्मान होता है।

यह टोली भ्रमण करती हुई राजेश की बैठक की ओर निकल गई। उस समय राजेश मूढा डाले बैठक के चबूतरे पर बैठा था। सबने राजेश को प्रणाम किया। राजेश ने प्रणाम का उत्तर देकर उनसे कहा—

"आओ भाई। कहो क्या समाचार है तुम्हारी दिल्ली के ?"

"सब ठीक है बाबूजी। आप कब से दिल्ली नही गये ?" सूका ने राजेश के प्रश्न का उत्तर देकर एक प्रश्न किया। और फिर सब चबूतरे पर बैठ गये। राजेश ने चारपाई पर बैठने की हठ की, परन्तु वह न माने। चबूतरे पर ही जम गये।"

"मुझे तो महीनो हो गये है दिल्ली गये।" राजेश ने उत्तर दिया।

"आप तो दिल्ली मे ही बडे बाबू बन जाये।"

ये शब्द सूका के थे। वह इस समय बहुत सँभल कर बोल रहा था। उसे पता है राजेश गॉव मे सबसे अधिक पढे लिखे है। उनका घर भी बडे घरो मे से एक है। सूका यह भी दिखाना चाहता है कि दिल्ली मे नौकरी करने से वह पढे लिखो से भी बाते कर सकता है।

"समय आने पर दिल्ली भी रहेगे सूका भाई।"

"हम तो चाहते है आप हमारे मिल के अफसर बन जाएँ।"

'अफसर' शब्द का उच्चारण सुनकर राजेश को मन ही मन हँसी आई। वह सोचने लगा—इस अशुद्ध उच्चारण के पीछे कितनी भोली भावना का वेग विद्यमान है। सचमुच पढे लिखो के पास भाव नही केवल शब्दो का जाल है। निःसन्देह मै भी उन्ही मे से एक हूँ।

"आप लोग करोडीमल के कपडा मिल मे कार्य करते है न ?"

"जी हॉ, वही पर करते है।"

"मिल के मैनेजर कौन है ?"

"पहले तो 'स्टाक' साहब थे। और अब एक बहुत अच्छे आदमी धर्मार्थी जी है। अब तो वही करते है बडे काम।"

"स्टाक नही भाई स्कोट साहब होगे।"

"जी हॉ। वह आधे अग्रेज थे और आधे हिन्दुस्तानी।"

सूका ने विशेष जानकारी देकर झेप सी उतारी।

"और यह धर्मार्थी क्या नाम है ?"

"नाम तो कुछ और है उनका। वह धर्म के कार्यक्रम मे अधिक लगे रहते है, इसीलिए सब उन्हे धर्मार्थी कहते है।"

"कैसे आदमी है धर्मार्थी जी ?"

"बहुत अच्छे है बाबूजी। मजदूरो के साथ भाई-चारे का बर्ताव करते है उनकी बात सुनते है। मजदूरो को कार तक मे बिठा लेते है। कोई कभी घर बुलाये तो आ जाते है।"

"तुम्हारे पास कुल कितने क्वार्टर है ?"

"हम तो आठ आदमी एक ही क्वार्टर मे रहते है।"

"कितना बडा क्वार्टर है तुम्हारा ?"

"एक कमरा है बाबूजी। उसी मे जमीन पर पड जाते है।"

"कम से कम दो कमरे तो आप लोगो को रखने ही चाहिएँ।"

"यह तो मुश्किल है बाबूजी। हमारे साथ चार तो अभी कच्ची नौकरी मे ही है। उनको तीन-तीन रुपए मिलते है। उनसे खाने का ही काम चलता है। किराया तो दे ही नही सकते। दूसरी बात यह है कि दो कमरे हमको मिल भी नही सकते।"

"यह कच्ची नौकरी कितने दिन की होती है ?"

"छह महीने तो जरूर ही होते है।"

"इन छह महीनो मे क्या सीखते है मजदूर ?"

"सीखना क्या है बाबूजी। धागे मे गाँठ लगानी है। वह तो छह सात दिन मे आ जाती है। बाकी तो 'प्रटिस' करते रहते है।

सूका को प्रटिस बोलता देख राजेश को फिर हँसी आई। उसने इस बार उच्चारण की शुद्धि नही की। वह बोला—

"कभी अवसर मिला तो आयेगे तुम्हारे मिल मे।"

"आइये, जरूर आइये। हमारे बच्चे यहाँ आपकी देख-भाल मे रहते है। कभी हमे भी तो सेवा का मौका दीजिए।"

"सबकी देख भाल करने वाला तो भगवान है सूका भाई।"

"बस इन्ही विचारो के है धर्मार्थी जी। अब तो वहाँ भजन कीर्तन कराने के लिए एक बहन जी भी रख दी गई है।"

"बहन जी भी अच्छे विचारो की ही होगी।"

"हमारे लिए तो अच्छी ही है बेचारी। वैसे क्वार्टरो मे तो उल्टी सीधी बाते हुआ ही करती है।"

"क्या मतलब ? म समझा नही।"

"बात कुछ नही है बाबूजी। मजदूरो की औरते जब बहन जी को धर्मार्थी जी के साथ देखती है, यूँ ही बेकार बाते करती है।"

"यह तो दुनियाँ है भाई। किसी का मुँह थोडे ही पकडा जाता है।"

सूका के एक साथी ने जेब से बीडी का बडल और दियासलाई निकालकर तीन बीडी एक साथ सुलगाई। फिर उसने दो बीडी दो साथियो के हाथो मे थमाकर धुएँ का गुब्बारा छोडते हुए कहा—

"अब उठोगे भी या नही। बाबूजी का पीछा भी छोडो।"

एक साथी बोला - "बाबूजी विवाह की मिठाई भी तो लेनी है। अब तो गुड खाकर ही यहाँ से उठो।"

"गुड की क्या कमी है भाई। जितना चाहो खाओ। घर चलना होगा।"

उसी समय वहाँ रमानाथ जी आ गये। उनको देख राजेश मूढे से खडा हो गया। सूका और उसके साथियो ने हाथ जोड प्रणाम किया। वह फिर वहाँ बैठे नही। प्रणाम का उत्तर देकर सीधे घर चले गए। उसी समय सूका की टोली भी वहाँ से चल पडी। राजेश भी घर चला गया। रमानाथ उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वह खाना साथ ही खाते है। राजेश उनके साथ खाना खाकर फिर बैठक पर आ गया। उसके जाते ही रमानाथ अपनी पत्नी से बोले—

"बडा दुबला होता जा रहा है राजेश तो।"

"तो फिर मै क्या करूँ ? खाने पीने से तो कोई कमी है नही।"

"मुझे तो लगता है इसको बहू अच्छी नही लगी।"

"और यह भी तो हो सकता है, इसे बहू याद आती हो।"

"बात तुम्हारी भी ठीक हो सकती है तजुर्बेकार हो न।"

"बेकार की बाते छोड दो। बस अब इसके गौने की तैयारी करो।"

"पहले कोई रोजगार तो मिल जाए।"

"कमाने के लिए क्या इसकी कोई उम्र निकल गई है। हमारे सामने ही कुछ मौज उड़ा लेगा। फिर तो तेली का बैल बन ही जाना है।"

"बात तो ठीक है। फिर भी बच्चे को अपने सामने खाता-कमाता देखना प्रत्येक माँ-बाप का पहला धर्म है, बिना कमाये तो खजाने भी खाली हो जाते है।"

"तुमने ही कौन से उत्तीके बजाये है। हमने तो आज तक यही देखा है, जिस जमीन ने हमे दिया है, वह इसको भी तो देगी।

"चलो फिर तुम्हारी बात ही मान ली। अब इसका गौना जल्दी ही करेंगे। तुम्हारे हाथ की रोटी अब इसे अच्छी नही लगती। बहू के हाथ की खाकर ही ठीक होगा। हमे याद है, यह बीमारी हमे भी कभी हुई थी।"

"अपनी बात भूल जाओ। अब बेटे की बात सोचो।"

"मैने तुमसे कितनी बार कहा है, हम अपनी नही भूल सकते।"

"नहीं भूलते तो न भूलो। मेरा सिर क्यो खा रहे हो। जा के बैलो को देखो। राजेश को खेतो की ओर भेज दो। यहाँ पड़ा-पड़ा कुछ न कुछ सोचता ही रहता है। कुछ मन बँट जायेगा।"

"यह जवानी ऐसी ही होती है श्रीमती जी। इस समय आदमी अपने से ही अनेक प्रश्न करता है और आप ही उत्तर देता रहता है। सोते मे जागना और जागने मे भी सोना जवानी की पहचान है। इस उम्र मे तो चलते-चलते स्वप्न आ जाते है।"

"हमे क्या पता। यह तो तुम जानो या तुम्हारा बेटा।"

"भूल गई तीस वर्ष पहली बातें, जब कहा करती थी—मेरा तो आपके बिना जी नही लगता। अब कहती हो जवानी क्या है?"

"तब तो मै आपको खुश करने के लिए कह दिया करती थी।"

"और अब खुश करना ही नही चाहती। यही तो है जवानी और आज मे अन्तर। अब समझी जवानी क्या है?"

"समझ गई। पीछा भी छोड़ा तो।"

"अभी नही। पहले एक बार खुश करने के लिए वही तीस वर्ष पहली बात कह दो। उसी समय पीछा छूटेगा।"

"सिर को तो देखो, सारा सफेद हो गया है। बनते हो जवान।"

"सिर को तो छोडो। दिल तो जवानी जैसा ही काला है।"

"बैठे रहो। मै तो अपना काम करती हूँ।"

रामप्यारी उठकर अपने घर के कामो मे लग गई।

"अच्छा, एक गिलास पानी पिला दो। हम जा रहे है।"

रामप्यारी ने गिलास मे पानी लाकर दिया। रमानाथ जी ने गिलास थामते हुए उसके हाथ मे नाखून गडा दिया। वह झल्ला पडी—

"क्या हो गया है आपको? जवानो के भी बाप बन गये।"

"इसमे भी कोई शक है जवान बेटे के बाप तो है ही हम।"

"गिलास मुझे दो, और सीधे बैठक मे चले जाओ।"

रमानाथ जी गिलास को रामप्यारी के हाथ मे थमाकर हँसते हुए चल दिये। जब वह बैठक मे पहुँचे, राजेश आँखो पर सीधा हाथ रखे लेटा हुआ था। वह उससे बोले—

"लेट क्यो रहे हो बेटा? थोडा जगल की ओर ही घूम आओ।"

"शाम को जाऊँगा पिताजी।"

"देखो राजेश! मुझे तुम्हारी यह दशा अच्छी नही लगती। अच्छा खाओ, पहनो, और थोडा व्यायाम करो। बी० ए० का नतीजा आते ही मेरा विचार तुम्हे पुलिस मे भर्ती कराने का है।"

इस कथन को सुनते ही राजेश उठा और चुपचाप जगल को चला गया। जब वह नदी के तट पर पहुचा तो अनायास ही उसके पाँव वहाँ रुक गये। वह तट पर बैठ सोचने लगा—

"मैने रजनी के प्रति जो अपराध किया है, उसका मुझे कठोर से कठोर दड मिलना चाहिए। दु ख तो यही है वह दड भी नही देगी।"

उसने देखा—"प्रत्येक लहर तट पा रही रही है। उसे लगा—"अब मेरी भाव उर्मिदो को तट नही मिलेगा।" वह फिर चुपचाप वहाँ से घर आ गया।

१३

सेवक चन्द जी का धर्मार्थी जी के समान जो प्रसिद्ध नाम है वह है सेवक भाई। राजधानी मे वह इसी नाम से प्रसिद्ध है। क्यो न हो। आखिर वह हरिजन सेवा जो करते है। वह स्वयं कुछ और नाम से अपनी ख्याति चाहते थे। किन्तु जब इस नाम से प्रसिद्धि मिल गई। तो उन्होने इसी प्रयोगवाद को स्वीकार कर लिया। हरिजन सेवा मे उनकी रुचि आरम्भ से ही रही है। जीवन के आरम्भिक दस वर्षो मे वह अध्यापक रहे। उस समय उन्हे डेढ सौ रुपये मिलते थे। वह कभी एक पैसा नही बचा पाये। इस समय वह अवैतनिक कार्य करते है। फिर भी भगवान की उन पर कृपा है उनको विश्वास है,—"यह सब हरिजन सेवा का ही फल है जिसको मै पा रहा हूँ।"

सेवक भाई का एक लडका है जो इगलैड मे पढ रहा है। एक लडकी थी, जिसका विवाह बम्बई के किसी प्रसिद्ध उद्योगपति से कर दिया है। विवाह मे उन्होने दिल खोलकर धन लुटाया किन्तु कमी कुछ न हुई। वह आज भी उतने ही सुखी है। निजामुद्दीन क्षेत्र मे उनकी एक कोठी है। दौड-धूप करने के लिये उनके पास एक कार है। घर मे दो नौकर है। उनके जीवन मे प्रारम्भिक जीवन से आमूल परिवर्तन नही हो पाये। प्रथम उनकी वेष-भूषा अब और भी साधारण है। दूसरे उन्होने प्रतिदिन कताई के कार्य-क्रम को आज भी नही छोडा। शनिवार और रविवार को तो वह कताई का विशेष आयोजन करते है।

राजधानी की अनेक सामाजिक सस्थाओ से सेवक भाई का कुछ न कुछ सम्बन्ध अवश्य है किसी के सदस्य तो किसी के सम्पत्ति-दाता और कुछ के वह सचालक भी है। वह कार्य और भी करते है किन्तु उनका अधिक समय हरिजन सेवा मे ही लगता है। हरिजन बच्चो के लिये कई पाठशालाये खोली है। एक पाठशाला मे तो लगभग तीन सौ बच्चे है। देश और विदेश से इन बच्चो के लिये अनेक उपहार आते रहते है। जूते कम्बल पाउडर का दूध आदि कितनी ही वस्तुएँ सेवक भाई के पास आती है। बच्चो के लिए, वह चन्दा दिन-रात करते है। किन्तु कार्य भार अधिक होने से उसका हिसाब वह नही रख पाते। रखे भी क्यो। अवैतनिक हरिजन सेवक है। अपने व्यक्तित्व के बल पर दान लाते ह, उनको किसी को दिखाना थोडे ही है।

हरिजन बच्चो के लिए सरकार से छात्रवृत्ति भी पर्याप्त मिलती है। उसकी प्राप्ति और अन्य सरकारी सहायता प्राप्त करने मे उनका विशेष समय नही लगता। सब उनसे परिचित हो जाते है काम हो जाता है हरिजन पाठशाला की अध्यापिकाओ को वह पचास रुपये मासिक देते है। हस्ताक्षर वह उतने पर ही कराते है। जो वास्तव मे मिलना चाहिए। अध्यापिकाओ से विनम्रता पूर्वक प्रार्थना कर लेते है। यह बचा हुआ पैसा इन बच्चो की सहायता मे लग जायेगा। बेचारे आपको दुआ दे तो। अभी विद्यालय टैंटो मे चल रहा है। वह उसका एक भवन खडा करना चाहते है। इसके लिए भी दान प्राप्ति का कार्य-क्रम चलता रहता है।

पाठशाला के टैंटो के पास ही सेवक भाई का एक अलग टैंट है। वह जब किसी से मिलते है, उसी मे मिलते है। वहाँ कुर्सी कोई नही केवल एक तख्त और चटाई रहती है। उनके साधारण रहन-सहन की सब मुक्त कठ से प्रशसा करते है कुछ ऐसे भी है। जो उन्हे ढोगी कह-कर व्यर्थ मे अपना सिर दर्द करते है। कभी किसी ने विशेष व्यग किया तो वह हँसकर टाल देते है। उनका विश्वास है सेवा के पथ मे बाधाएँ अवश्य आती है हमे कार्य करते जाना चाहिए।

सध्या के साढे पाँच बजे है। सेठ जी उसी कमरे मे बैठे है, जिसमे वह प्राय आगन्तुक व्यक्तियो से मिलते है उसी समय सेवक भाई आ धमके। वह पसीने मे सरोबर थे। किन्तु जब कमरे मे प्रवेश किया, तो लगा, जैसे वह नैनीताल की प्रात पा गये हो। सेठ जी की सम्पूर्ण कोठी वातानुकूलित है। फिर भी वह गर्मियो मे प्राय कश्मीर चले जाते है। इस वर्ष भी वह सपरिवार चले गये थे। इस समय एक दो दिन के लिए वह किसी आवश्यक कार्य से आये हुए है। सेवक भाई को देखते ही, सेठजी बोले—

"आओ सेवक भाई ? कहो क्या समाचार है ?"

"सब कृपा है सेठजी आपकी। आप सुनाइये।"

"हम क्या सुनाये सेवक भाई। सरकार ने नाक मे दम कर रखा है। देश के लिये दिन-रात काम करते है और इस पर भी सबकी ऑखो मे हम ही खटकते है।

"भले आदमियो को यह दुनियाँ जीने ही नही देती सेठजी। हमे देखिये। दिन-रात हरिजन सेवा करते है और इस पर भी कोई न कोई मूर्ख हमारे ऊपर कीचड उछाले बिना नही रहता।"

"ठीक है सेवक भाई। दुनियाँ बहुत बदल गई है।"

"हमने तो सोच लिया है। दुनियाँ की बातो पर ध्यान न देकर मानव सेवा करते जाओ। यदि इस जन्म मे नही तो परलोक मे शान्ति अवश्य मिलेगी। मानव सेवा से बडा हमारी दृष्टि मे कोई कार्य ही नही है।"

"परलोक से तो अब दुनियाँ का विश्वास ही उठता जा रहा है सेवक भाई। हमे देखिये, सब शोषक कहकर पुकारते है। यह कोई नही जानता, दिया है तो पा रहे है। और अब दे रहे है, तो आगे पायेगे। आप देखते ही है मै साथ मे कितना दान करता हूँ।"

धर्मार्थी जी ने अवसर की अनुकूलता से लाभ उठाया—

"दुष्ट नास्तिको की बात छोडिये सेठ जी ! आप तो इस युग के

कर्ण है। आपके द्वार से कोई खाली नही जाता। आज तो मैं भी एक प्रार्थना लेकर आया हूँ।"

"आप और प्रार्थना! कैसी बाते कर रहे है आप? आधी रात जो सेवा हो हमे बताइये। हम पूरी करेगे।"

"और तो कुछ नही, बस हरिजन बच्चो की पाठशाला के लिए एक बिल्डिग बनाने का निश्चय कर चुका हूँ। मैने प्रतिज्ञा कर ली है जूते उसी समय पहनूँगा, जब बिल्डिग बन जायेगी।"

"तो क्या बाल भी तभी कटाओगे?"

"जी हाँ! ये दोनो ही प्रतिज्ञाये की है?"

"तो फिर कितने रुपए चाहिएँ इसके लिए?"

"यह तो आपकी कृपा पर निर्भर है।"

"जितनी आवश्यकता हो धर्मार्थी से जब चाहो ले लेना। हम उस को कह देगे। आप भी हमारे ऊपर कृपा दृष्टि रखे।"

"आप चिन्ता न करे। जो भी सरकारी सहायता सम्बन्धी कार्य हो, मुझे सूचित कर दिया करे।"

"हमने जो महा मन्दिर निर्माण कार्य आरम्भ किया है उसके विषय मे तो आपको ज्ञात ही है।"

"आपको पता नही है शायद। स्थान की व्यवस्था तो मैंने ही कराई है। समय मिलने पर तो हम वहाँ जाते भी रहते है।

"इस मन्दिर के निर्माण की सूझ के विषय मे क्या विचार है आपके?"

"यह भी कोई पूछने की बात है। इससे तो एक ओर यश मिलेगा और दूसरी ओर ख्याति। बडी ही उत्तम सूझ है आपकी।"

दोनो की बातचीत के समय ही वहाँ धर्मार्थी जी आ गये। आज वह कुछ झुझलाये हुए से थे। उन्होंने आज रजनी को कार्यालय मे बुलाकर कुछ ऐसा वाक् प्रहार किया, जिससे रजनी के सयम का बाँध टूट गया। रजनी ने भी प्रत्युत्तर मे कटूक्तियो की बौछार कर दी।

क्रोधान्ध धर्मार्थी जी मन मे कुछ निश्चय सा कर सीधे मिल से आये थे। उन्होने आते ही हाथ जोड प्रणाम किया, और फिर चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गये।

सेवक भाई ने धर्मार्थी जी के मुख को पढकर कहा -

"क्या बात है ? आज कुछ उदास दिखाई दे रही हो।"

दोनो की बातचीत की शृंखला सुनते ही सेठ जी खडे हुए, और धर्मार्थी से कहा—

"सेवक भाई की जो माँग है उसे पूरा करो !

वह फिर उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही अन्दर चले गये। उनके जाते ही सेवक भाई धर्मार्थी जी से बोले—

"अब तो आप विवाह कर ले।"

"छोडिये इस सीरयस विषय को।"

"क्या कह रहे है आप। विवाह से भी सरस कोई विषय हो सकता है नारी के विना तो आदमी अन्धा लँगडा है धर्मार्थी जी।"

"होता होगा सेवक भाई। हमे तो इसका अनुभव नही है।"

"वस्तु को पाकर ही तो अनुभव हो सकता है।"

"ठीक है आप की बात। किन्तु मेरे विचार से अनुभव नही हो तो अच्छा है जीवन मे और भी तो बहुत से अनुभव है।"

"इस अनुभव के बिना तो जीवन ही निरर्थक है मेरे भाई।"

"मूल बात यह है सेवक भाई, मुझे बन्धनमय जीवन अच्छा ही नही लगता। मेरी दृष्टि मे विवाह से बडा बन्धन ही नही है।

"हमारे विचार से तो मुक्त जीवन चल ही नही सकता। मनुष्य की तो बात छोडिये। पशु पक्षी भी बन्धन मे बँधते पाये जाते है।

"बात आपकी ठीक है। फिर भी मेरा निश्चय है कि मै आजीवन ब्रह्मचारी रहूँगा। कर्त्तव्यपालन के लिये भावनाओ का दमन आवश्यक है।"

"मेरे विचार से तो विरक्ति और विरक्ति से आसक्ति का जन्म

होता है श्रीमान् जी । अब तक आपने ब्रह्मचर्य का पालन किया और अब गृहस्थ जीवन मे प्रवेश करना चाहिए । जीवन के तीसरे सोपान मे फिर विरक्ति को अपना लेना । हमे देखो ! अब गृहस्थ जीवन से विरक्त हो सेवा पथ को अपना लिया है ।"

"एक बात बताये तो आप ।"

"अवश्य ! पूछिये ।"

"आपने हरिजन सेवा का यह व्रत कब लिया था ?"

"मेरी तो यौवन काल से ही इस ओर रुचि थी ।"

"तो फिर समझ लीजिये, मैने भी यौवन काल मे ही मानव सेवा का व्रत ले लिया है । मेरा परिवार तो बहुत बडा है ।"

मानव सेवा से बड़ा कोई कार्य ही नही है । मै तो विवाहित जीवन मे भी इस सेवा के कार्य को अपने जीवन का अभिन्न अग बनाये रहा ।

"बात आपकी ठीक है किन्तु निश्चय सबके अलग अलग होते है ।"

"चलिये फिर जैसी आपकी इच्छा । अब हमारा कार्य करो ।"

"कल मिल मे आ सकेगे आप ?"

"क्यो नही ! आप बुलाये तो जरूर आयेगे ।"

"तो फिर कल ही होगा आपका काम ।"

"सेठ जी तो अब मिल न पायेगे ।"

"मेरे विचार से नही ! अपनी इच्छा से वह चाहे जब आ जायें किन्तु उन्हे बुलाना सम्भव नही है ।"

"कोई बात नही । फिर कभी मिल लेगे ।

सेवक भाई खड़े हुए और चल पडे ।

मै भी चल रहा हूँ । ऐसी क्या जल्दी है ।

दोनो ने फिर अपनी-अपनी गाडी स्टार्ट की और अपने-अपने लक्ष्य की ओर चले गये ।

धर्मार्थी जी का मन इस समय भी कुछ खिन्न था ।

१४

कुछ दिन पूर्व राजेश ने रजनी को जो पत्र लिखा था, उसमे साथ रहने का सकेत था। आज उसी पत्र का उत्तर आया है। रजनी ने लिखा है—

आशाओ के खडहर देख कर भी आज मै जीवित हूँ। मेरे जीवन दीप को तूफान न बुझा सका यह भी ठीक है और अब दीपक टिम-टिमाता हुआ जल रहा है। जानते हो क्यो ? लो सुनो ! अब इसमे तेल नही है। दीपक दियासलाई से नही जलता है। तेल के अभाव मे दियासलाई तो बत्ती को ही जला देगी। प्रकाश का तो वहाँ प्रश्न ही नही उठता।"

पत्र को पढकर राजेश का मस्तिष्क झल्ला गया। उसे निश्चय हो गया—रजनी अब बदल चुकी है वह अब दूर रहना चाहती है। विवाह से पूर्व क्या कहा था उसने ? सचमुच नारी वह लता है जो वायु के झोको के साथ लचकती रहती है। राजेश ने निश्चय किया—

"दिल्ली जाकर एक बार उसकी दुनिया को अवश्य देखे। उसने पत्र को कई वार पढा। कही पत्र का भाव जानने मे भूल तो नही की है। पत्र को पढते हुए उसकी भावनाये भडकती ही गई। न जाने उसे क्या सूझी। साढे दस बजे होगे। माता को सूचित कर वह सीधा दिल्ली चल दिया। एक वजे दिल्ली पहुँच वह सीधा मिल गया। सूका और उसके साथी उस समय रात की ड्यूटी होने से सोये हुए थे। एक मैली सी

फटी दरी पर सब अचेत से पडे थे। खटमलों का उन पर निरन्तर आक्रमण हो रहा था। और वे सब निर्भीक सिंह के समान इस आक्रमण की चिन्ता न करते हुए खर्राटे भर रहे थे।

राजेश कुछ देर उन्हे खडा देखता रहा। सूका और उसके दो साथी के मुख खुले थे, जिनमे मक्खियो के आवागमन का क्रम चल रहा था। सब की यह दशा देख राजेश का हृदय उमड़ आया। वह सोचने लगा —"यह भी एक जीवन है।"

जब वह खडा हुआ कुछ सोच रहा था, एक पडोसी ने उसे देख लिया। उसने एक चारपाई डालकर राजेश को बिठाया और फिर सूका को जगा दिया। वह आँख मलता हुआ उठा, और राजेश को देखकर उल्लास भरे स्वर में पुकार पडा—

"आओ बाबू जी आओ। बडे भाग्य है हमारे जो आप आये। कहो गाँव मे सब राजी खुशी तो है।"

"बैठो भाई सूखा! खडे क्यो हो?"

"मै अभी आता हूँ।" कहता हुआ सूका जेब मे कुछ पैसे डाल कर बाजार चला गया। कुछ देर मे उसने पाव भर की दही की लस्सी का गिलास लाकर राजेश के हाथ मे थमा दिया। राजेश ने मना भी किया किन्तु सूखा के आग्रह को न टाल सका। लस्सी पीकर राजेश बोला—

'क्या रात की ड्यूटी है सूका भाई?"

"जी हाँ, बाबू जी।"

"तो फिर तुम सो जाओ। मै चलता हूँ। शाम को फिर मिलेंगे।"

"अब क्या सोयेंगे बाबू जी। अब तो सब ही उठने वाले हैं। शाम का खाना बनाकर कुछ देर आराम करेंगे, और फिर रात की ड्यूटी पर जायेंगे। इस समय तो हम रोज ही उठ जाते है।"

'आप लोगो का काम बडी मेहनत का है भाई सूका।"

"मेहनत के बिना पैसे कौन देता है बाबू जी।"

सूका ने धरती पर बैठकर बीडी सुलगाई। वह फिर, राजेश से बोला—

"आपके लिए सिगरेट लाऊँ क्या ?"

"मै सिगरेट नही पीता ।" राजेश ने जानकर असत्य बोला ।

सूका ने फिर सबको जगा दिया। सब उठते गये और बीडी सुलगाते गये । सब की आँखे लाल थी । आलस्य से शरीर टूट रहा था। सिर के बालो और वस्त्रो मे रुई चिपकी हुई थी । सबने अचेत होकर राजेश को प्रणाम कर राजी खुशी पूछी । सबसे पीछे कन्हैया उठा, और उठते ही अगीठी सुलगाने लग गया । सूका अब राजेश के पास निश्चिन्त होकर बैठ गया । राजेश उससे बोला—

"गॉव से तो यहॉ आप लोग बहुत अच्छे है, यहाँ तो रात-दिन झगडे ही होते रहते है, विना बात ही लाठियॉ चल जाती है ।"

'यह तो यहॉ बहुत होता हे बाबू जी । कभी पुरबियो से पहाडी और कभी पहाडियो से पजाबी टकराते ही रहते है । अगर मिल के पहलवान झगडो के समय बीच मे न आवे तो यहाँ पर गाँव से भी ज्यादा सिर फुटाई होती रहे ।"

"यहॉ तो लडाई का कोई कारण ही नही है ।"

सूका ने धीरे से राजेश के बिलकुल पास आकर कहा—

"यहॉ आपसी झगडो को तो मिल वाले ही कराते है बाबूजी । पहले आग लगा देते है, और पीछे बुझाने आते है ।"

"इतने धीरे से क्यो कह रहे हो इस बात को ?"

"यहाँ दीवारो के भी कान होते है बाबू जी । सब बात बडो पर पहुँच जाती है । इसीलिए हम झगडो से दूर अपने काम से काम रखते है ।"

राजेश ने इस कथन से ही समझ लिया । मिल वालो की यह सगठन भग करने की योजनाये है । प्रत्यक्ष मे उसने कहा—

"झगडो मे पडना ही नही चाहिए आप लोगो को ।"

"छोडो इन बेकार की बातो को । अब यह बताओ कि आप सब्जी क्या खायेगे ?"

"कुछ नही भाई ! मैं तो अब चला जाऊँगा ।"

"खाना खाये बिना आप जा ही नही सकते ।" कन्हैया ने हठ की ।

"नही मानते तो मूग की दाल बना लो ।"

खाना पाँच बजे तक बना । सूका इतनी देर राजेश के पास ही बैठा रहा । सबसे पहले राजेश ने खाना खाया । वह फिर वहाँ से चल दिया । उसके साथ सूखा और कन्हैया भी चल पडे । जब वह क्वार्टरों से निकल मिल के द्वार के सामने से बस स्टैन्ड को जा रहे थे उन्होने देखा—

मिल के द्वार पर बने पार्क मे रजनी और धर्मार्थी जी कुछ बातें कर रहे थे । न चाहने पर भी रजनी को प्रतिदिन छह बजे धर्मार्थी जी के पास आना पडता है । धर्मार्थी जी को अब रजनी प्रत्येक दृष्टि से अच्छी लगने लगी है । इसीलिए छह बजे रजनी का आना अनिवार्य कर दिया गया है, दोनो पार्क मे खडे थे । रजनी दृष्टि को अधिकतर झुकाये हुए ही बाते कर रही थी । जब वह दृष्टि उठाती धर्मार्थी जी आँखो मे आँख गडाये बिना नही रहते ।

सूका को गाँव की बात का स्मरण हो उठा । उसने कहा—

"देखो बाबू जी ! यह है धर्मार्थी जौर बहन जी ।"

राजेश की छाती पर साँप सा लेट गया । एक निमिष के लिये उसकी आँखो के सम्मुख अन्धकार सा छा गया । उसके पाँव लडखड़ा गये । कठिनाई से स्वयँ को सन्तुलित कर वह बोला—

"ये बहन जी क्या करती है यहाँ पर ?"

'भगवान ही जाने बाबूजी । जब देखो, यही खडी रहती हैं ।"

"अच्छा अब आप लोग जाँय । हो सका तो कल फिर मिलूँगा ।"

दोनो फिर हाथ जोड प्रणाम कर लौट आये । राजेश ने उनसे विदा हो स्कूटर लिया और वह सीधा राधा से मिलने चल दिया । वह स्कूटर मे बैठा सोच रहा था—रजनी तन और मन की भूख से अब तृप्त हो चुकी है । उसे धन चाहिए । ठीक भी है । यह आर्थिक युग

है। पैसा जीवन की प्रथम आवश्यकता है। यह न हो, तो तन और मन दोनो ही की मृत्यु हो जाती है। अब प्रश्न यह है कि जिस धर्मार्थी से रजनी प्रणय लीला कर रही है, क्या वह इसे अपनायेगा। नही, कभी नही। पैसे वाले प्रेम का अभिनय कर सकते है। क्या जाने बेचारे प्रेम को। इनका तो सिद्धान्त है आम का रस चूसो, और गुठली को फेक दो। यह भी इसके साथ यही सब करेगा। और फिर यह कही की भी न रहेगी।

राजेश जब राधा के पास पहुँचा, वह घर पर ही थी। उसने राजेश को देखते ही हाथ जोड प्रणाम किया, और खडी हो गई। राजेश बोला—

"कहो राधा क्या समाचार है ?"

"बैठिये। चाय तैयार है। पहले चाय पियो, फिर समाचार भी बताऊँगी। क्या बात है ? कुछ उदास दिखाई दे रही हो।"

कुर्सी पर बैठते हुए राजेश बोला—

'चाय मै पीता नही। पानी अवश्य पी लूँगा।"

राधा ने माता जी को तुरन्त बोतल लेने के लिये भेज दिया। वह स्वयँ एक ठडा गिलास पानी लेकर अन्दर से आई। पानी को राजेश के हाथ मे देते हुए, उसने वक्ष मे अपेक्षाकृत उभार भरते हुए कहा—

"कहाँ से आ रहे है आप इस समय ?"

"पहले तुम यह बताओ कि तुम्हारी सखी के क्या समाचार है।"

"सब ठीक है उनको मैने मिल मे नौकरी दिला दी है।"

"अब वह यहाँ नही रहती ?"

"उनको वही पर क्वार्टर मिल गया है।"

"तुम भी तो वही कार्य करती हो। तुम्हे क्वार्टर क्यो नही मिला ?"

"मैने इस विषय मे कभी सोचा ही नही है।"

"और कोई नवीन समाचार है क्या ?"

"सब ठीक है। चलिये रजनी से मिला जाये। परन्तु..."

राधा को वाक्य चबाया देख राजेश बोला —

"रुक क्यो गई राधा। बोलो क्या बात है ?"

"बात कुछ नही। हो सकता है इस समय वह कही भ्रमण के लिये चली गई हो। इसीलिए सवेरे मिलना उचित होगा।

"तो आज कल वह भ्रमण के लिये भी जाती है।"

"परिवर्तन तो सृष्टि का अमिट विधान है श्रीमान् जी।"

"यह तो मै भी जानता हूँ। प्रश्न तो यह है कि यह परिवर्तन आखिर क्यो ?"

"इस विषय मे मै आपको कुछ भी बताने मे असमर्थ हूँ।"

"तुम्हारे इस कथन का भी एक अर्थ है राधा। केवल शका समाधान कर दो। ऐसा न हो, कही मै कल्पित निश्चय को सत्य मान भ्रम मे पड जाऊँ।"

"मुझे लगता है रजनी जीवन के मोड पर पहुँच गई है।"

"अब यह बताओ कि मोड कैसा है।"

"यह जानना केवल आपका धर्म है।"

राजेश की शका का जैसे समाधान हो गया हो। वह बोला—

"मै समझ गया। रजनी ऊँचा उडना चाहती है। वह भूल गई है यदि ऊँची उडान से गिर गई, हाथ पाव टूटे बिना न रहेगे।"

"उडने वाले को इसका पहले पता होता ही नही है।"

"ठीक है तुम्हारी बात। फिर भी हमे दूसरो के अनुभव से लाभ उठाना ही चाहिए। इस प्रकार तो हम पग-पग पर भूल करते चले जायेगे।"

"बुरा न मानो तो एक बात कहूँ।"

"सत्य बात मे बुरा मानने का प्रश्न ही नही उठता। कहो।"

"सिर छिपाने के लिये, कोई सहारा तो होना ही चाहिए।"

"बात तुम्हारी भी ठीक है। फिर भी मेरे विचार से वह इस समय सहारा नही, बल्कि वैभव चाहती है।"

"और मेरे विचार से वह अन्धी होकर लाठी की खोज कर रही है।"

"तुम्हारी भूल है राधा ! रजनी अन्धी नही है। मैने जो विवाह किया है वह उसकी स्वीकृति पर ही किया है।" मुझे दुख है उसने मुझे इतने दिनो मे भी नही पहचाना।"

"आपने भी तो एक दिन किसी को पहचानने मे भूल की थी।"

राजेश इस कथन का अर्थ तुरन्त समझ गया। राधा ने यह सब अपने विषय मे कहा है। उसके इस अवसरानुकूल तीर से वह घायल सा हो गया। वह फिर उठा और चल पडा राधा बोली—

"न आपने बोतल पी, और न खाना ही खाया। आज यही ठहरिये।"

"नही राधा। कष्ट के लिए क्षमा। अब मै चला।"

और फिर वह वहाँ से अपने मित्र के पास चला गया।

१५

सत्य को यदि सुगन्ध माने, तो असत्य को दुर्गन्ध कहना ही होगा। दोनो प्रयत्न करके भी नही छुपाये जा सकते। धर्मार्थी जी ने अपने असत्य की दुर्गन्ध को लाख बार सुगन्ध सिद्ध करने का यत्न किया फिर भी वह अपने वास्तविक रूप मे प्रकट हुए बिना न रही। साधारण पढे लिखे पजाबी मजदूरो ने मिल मे अपना एक गुप्त सगठन बना लिया। उनकी कई गुप्त बैठक भी हो चुकी है प्रत्येक बैठक मे वह विचार करते है।

आखिर ये मोटे पेट वाले पूँजीपति हमारी कमाई को कब तक खाते

रहेंगे ? ढोंगी धर्मार्थी का ढोंग कब तक चलता रहेगा ? हमारी कमाई और हम पर हुकूमत, यह सब कब तक चलेगा ? मजदूरो के पास इन प्रश्नो का उत्तर कुछ नहीं है। प्रतिक्रिया की सामर्थ्य वे बटोर नही पाते। प्रत्येक बैठक मे कोई भी निर्णय किये बिना वे उठ जाते है। वे जानते हैं धर्मार्थी जी की हमारी गतिविधियो पर दृष्टि है। अवसर मिलते ही हमे निगल जायेगे। अजगर का मुँह बहुत बडा होता है। धर्मार्थी वही अजगर है जो साँप के साथ पक्षियो को निगल सकता है। इसीलिए उसके ऊपर उडान करने का साहस वह नही कर पा रहे है। ठीक ही है म्याऊँ का मुँह कौन पकडे। प्रत्यक्ष विरोध की किसी मे भी सामर्थ्य नही है।

धर्मार्थी जी ने इस गुप्त सगठन को भग करने की कई योजनायें बनाई है। पहले उन्होने बल से दबाने का प्रयास किया। लाभ कुछ न हुआ। मिल के पहलवानो ने कई मजदूरो की धर्मार्थी के सकेत पर पिटाई की है मजदूरो मे इससे आग सी भडक गई है। पुरबिये और पजाबी भी धर्मार्थी की योजना से परस्पर टकरा चुके है इससे भी सगठन और दृढ हुआ। कुछ पुरबिये भी समझने लगे है आखिर पजाबी भी तो हमारे भाई है। अब केवल पहाडी मजदूरो का दल धर्मार्थी के साथ है धर्मार्थी जी जानते है पहाडी स्वामिभक्त अधिक होते हैं। इसी-लिए वह अब उनको ही छाती से लगाये हुए हैं। धीरे-धीरे इनमे भी कुछ नये विचार पनपने लगे है।

बल प्रहार से धर्मार्थी जी अपने लक्ष्य मे सफल नही हुए। अब उन्होने प्रेम प्रदर्शन आरम्भ कर दिया है। अब वह मजदूरो के क्वार्टरों मे आते है, और कहावत सिद्ध करते है—

"मान न मान मै तेरा मेहमान।" लाभ इससे भी कुछ नही हुआ। मजदूर अब धर्मार्थी जी की प्रत्येक क्रिया को ही ढोंग समझने लगे है।

आज सेठ जी का पैसठवां जन्मदिन है इस शुभ अवसर पर मिल मे कई आयोजन किए गये है। प्रत्येक मजदूर को लगभग आधा सेर मिठाई दी जाएगी। मिल मे कुछ चुने हुए कारीगरो को लगभग

सौ साइकिलें पुरस्कार मे दी जायेगी । प्रत्येक कारीगर को मिठाई वाली तश्तरी और साथ मे एक गिलास भी दिया जायेगा । मिल के स्थायी रग-मच पर मणीपुर की नृत्य मडली का नृत्य होगा । नृत्य प्रदर्शन के समय दो घन्टे मिल की छुट्टी होगी ।

धर्मार्थी जी को अपने गुप्तचरो द्वारा पता चला है नृत्य प्रदर्शन के समय कुछ मजदूर गडबड करने की योजना बना रहे है । वे कहते है— हमारे परिश्रम की कमाई को इस प्रकार क्यो उडाया जा रहा है । दो घन्टे मे ये दो नर्तकी हजारो रुपये ले जायेगी । हमको नृत्य से पहले रोटी चाहिए । पेट भर भोजन नही । रहने को स्थान नही । एक कमरे मे दस-दस मजदूर भेडो के समान भरे रहते है । यह भी कोई जीवन है ।

धर्मार्थी जी ने दो बजे निश्चय किया, मजदूरो के क्वार्टरो मे भ्रमण करके देखा जाय, ये कितने पानी मे है ? यदि गडबड करने वालो का जोर हुआ तो अधिक पुलिस की व्यवस्था करा ली जायेगी । दो बजे होगे । भयकर गर्मी पड रही थी । धर्मार्थी जी इसकी कोई चिन्ता न करते हुए भ्रमण करने चल दिये । क्वार्टरो का एक चक्कर लगाने पर भी वे कोई अनुमान न लगा सके । पसीने मे सरोबर जब धर्मार्थी जी रजनी की कुटीर के सामने से निकले, रजनी खडी हुई उन्हे देख रही थी । धर्मार्थी जी का आज उस ओर ध्यान ही नही गया । वास्तव मे वे मणिपुर की नर्तकियो को देखने के लिये उतावले हो रहे थे ।

रजनी धर्मार्थी जी के विषय मे सोचने लगी— कितना विचित्र है यह व्यक्ति । स्वार्थ के पीछे अन्धा होकर दौडता है । बाहर से जितना कोमल और निर्मल है अन्दर से उतना ही कठोर और समल । कितना अच्छा हो भगवान इसे सद्बुद्धि दान कर दे ।

धर्मार्थी जी जब क्वार्टरो से बाहर मिल के द्वार के सामने आये, उनके साथ मजदूरो का एक जमघट हो गया । कुछ मजदूरो को इस समय छुट्टी मिली थी । वे सब वही खडे हो गये । कुछ उनके साथ

भ्रमण के समय गये ही थे। अवसर की अनुकूलता का लाभ उठाकर धर्मार्थी जी नें यूँ ही खडे-खडे कहना आरम्भ कर दिया।

आप सब भाइयो को पता ही है। आज पूज्यनीय सेठ जी का जन्म दिन है हम सब उनके परिवार के सदस्य हैं इसीलिये हमारा धर्म है। इस शुभ अवसर पर उनके लिये प्रार्थना करे। वे हजार वर्ष जीवित रहे। उनकी छत्रछाया मे हम फूले और फले। मै चाहता हूँ आज जो भाई मुझ से किसी कारण से नाराज भी है अपनी नाराजगी भुला दें। ऐसे शुभ अवसर तो होते ही प्रेमभाव बढाने के लिए है। हम सब आपस मे भाई है। एक साथ रहते है। हजार बार लडेंगे, और फिर विशेष अवसर पर एक हो जाये तो। बस, मुझे और कुछ नही कहना है। आप मेरी बात पर ध्यान दें और इस शुभ कार्य मे मेरा हाथ बटाये। मै चाहता हूँ कोई गडबड न होने पाये।

मजदूरो से पृथक होकर धर्मार्थी जी नर्तकियो के पास गये। उन्होने देखा, दोनो नर्तकी सुन्दर सुगठित शरीर को पहलवानो की भाँति तोड मरोड रही है। वास्तव मे वह कुछ पूर्वाभ्यास कर रही थी। मिल के द्वार के ऊपर जो कमरे है, नर्तकी उन्ही मे से एक कमरे मे ठहरी है। उनको निकट से देख धर्मार्थी के मन महाराज मचल पडे। हम तो बस इनको ही देखते रहना चाहते है। कठिनाई से मन पर विजय पाकर धर्मार्थी जी वहाँ से फिर रग मच की ओर चले गये। वहाँ की व्यवस्था को ठीक कराकर उन्होने मिठाई वितरण व्यवस्था को देखा। चार बजे तक जब सारी व्यवस्था पूर्ण हो गई तो सेठ जी के स्वागत की तैयारी की गई। उनके आने का समय पाँच बजे का है।

सेठ जी सवा पाँच बजे तक दल बल सहित वहाँ पहुँचेगे। उनकी जय जय कार हुई और फिर वह नृत्य प्रदर्शन देखने सबसे आगे वाली कुर्सियो पर जम गये। उनके पीछे कुछ उन्ही की मित्र मडली बैठी। इनसे पीछे मिल के कुछ बडे अधिकारी थे। बाबू लोगो के बैच इनके पीछे थे। और सबसे पीछे हरी घास पर मजदूरो का झुड बैठा हुआ था।

नृत्य प्रदर्शन आरम्भ हुआ। सर्व प्रथम कृष्ण लीला की एकांकी प्रस्तुत की गई। इसके पश्चात् कत्थक और फिर भरत नाट्य कला का प्रदर्शन हुआ। सेठ जी आधा घन्टे के लिये आये थे। वह यहाँ कुछ ऐसे खोये कि उन्हे समय का पता ही न चला। पीछे जो मजदूर बैठे थे, वह पहले तो खडे हुए। फिर धीरे-धीरे उन मे एक खलबली-सी मच गई। हल्ला गुल्ला हुआ और फिर धक्का मुक्की आरम्भ हो गई। वह इतनी बढी कि नृत्य मडली को रग मच से उठकर भागना पडा। सारे मच पर मजदूरो का अधिकार हो गया। पुलिस के सिपाही और मिल के पहलवानो ने सम्पूर्ण शक्ति से प्रहार किया। लाभ कुछ न हुआ। उन्होने फिर सेठजी और उनके परिवार की सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ कर दी।

लगभग आधे घन्टे मे कठिनाई से शान्ति हो पाई। झगडे मे कुछ पुलिस के सिपाहियो को चोटे आ गई। मजदूर कितने घायल हुए इस का कुछ पता ही न चल सका। धर्मार्थी जी के सिर मे भी एक पत्थर लगा। सेठ जी अवश्य सुरक्षित रहे। शान्ति स्थापित होने पर सेठजी पुलिस के घेरे मे कार तक आये, और सीधे कोठी को चल दिए। उनका आज का उल्लास अवसाद मे बदल गया था। धर्मार्थी जी के तो दुख का आज ठिकाना ही न था। वे चिन्तित थे—"अब सेठजी क्या कहेगे। मेरी अयोग्यता का उन्हे जीता जागता प्रमाण मिल गया है।

धर्मार्थी जी पुलिस की सुरक्षा मे नृत्यकारो की मडली को अपने साथ, अपनी कोठी पर ले गये। वहाँ उनके ठहरने की व्यवस्था पहले ही हो चुकी थी। अब कुछ झगडे का भी बहाना मिल गया। नर्तकी चुपचाप उनके साथ चली गई। कोठी पर पहुँचते ही सबसे पहले पीने का दौर चला। इस दौर मे धर्मार्थी जी ने उनका साथ नही दिया। वे न पीते है और न ही खाते है। एक नर्तकी के विवश करने पर उन्होने एक पैग अवश्य ले लिया था। इसी प्रकार बहुत बाध्य करने पर उन्होने पहली बार आज एक अडे का सेवन किया। वास्तव मे उनकी

भूख तो नर्तकियो को देखकर ही भाग गई थी।

बारह बजे तक दोनो नर्तकी नशे मे चूर हो गई। वे इस समय मद्यपान की चेष्टाओ के कारण नृत्य न करते हुए भी नृत्य सा करती दिखाई दे रही थी। उनकी इस दशा को देख धर्मार्थी जी न जाने कौन सी कल्पनाओ मे खोए हुए थे। साढे बारह बजे तक कुछ छेड-छाड का क्रम चलता रहा। जिस समय नर्तकी छत पर सोने गई, एक बज चुका था। धर्मार्थी जी और नर्तकियो के साथी कोठी के पार्क मे ही सो गये। जब सब गहरी नीद मे डूब गये, धर्मार्थी जी पलग से खडे हो गये, उन्हे 'नीद' नही आई। वे फिर अपनी कोठी की छत पर चले गये। नर्तकियाँ इस समय निद्रा मे अचेत थी।

धर्मार्थी जी ने नर्तकियो की चारपाइयो के चारो ओर तेली के बैल के समान एक चक्कर लगाया। अति निकट से उनको देख धर्मार्थी उनकी रजनी से मन ही मन तुलना करने लगा। उसे जान पडा—

सुन्दरता वही है जो अति निकटता से दृष्टि का शृगार करे। रजनी मे यही बात है। इन नर्तकियो मे वह बात नही है। सौन्दर्य का प्रदर्शन करते हुए, ये कितनो को आकर्षित करती है। लज्जा का आवरण इन्होने उतार कर फेक दिया है रजनी का लज्जा कोष अभी सुरक्षित है उसकी सखी राधा उससे कम सुन्दर नही। फिर भी उसकी और रजनी की तुलना मे दृष्टि उठाने की इच्छा नही होती। प्राप्त वस्तु कितनी ही मूल्यवान क्यो न हो, उसका मूल्य गिर जाता है। विपरीत इसके अप्रप्त के प्रति आकर्षण बढता चला जाता है।

धर्मार्थी जी कोठी की छत पर पाँच बजे तक विचारो मे डूबे खडे रहे। आज नीद उनके निकट भी न रही थी। इसी समय मन्दिर मे घटियो और मस्जिद मे आवाज की गूँज सुनाई दी। धर्मार्थी जी का ध्यान भग हुआ। वे सोचने लगे—धर्म प्रचारको ने कितनी सुन्दर व्यवस्था की है। मन्दिर की घटियाँ और मस्जिद की अजान का एक ही उद्देश्य है दैनिक कार्य-क्रम मे रत होने से पूर्व थोडा बनाने वाले भगवान का

भी तो ध्यान कर लो। देने वाला इस जीवन को अवश्य लेगा।

भोग के पगो मे सयम की बेडियाँ डालकर राजेश छत से नीचे आ गया। उसने निश्चय किया—मै अब धर्मार्थी ही बनकर दिखाऊँगा। इस निश्चय के साथ ही उसे नीद आ गई।

वह जब सोकर उठा दस बज चुके थे।

१६

उस दिन आकाश मेघ मडित था। वायु मे कुछ शीतलता थी। दिन मे कई बार बूँदे भी पड चुकी थी। सृष्टि को ऋतु परिवर्तन का पूर्ण विश्वास हो गया था। महीनो से तपी हुई राजधानी की जनता के मुख पर नया उल्लास था। झुलसने वाली लुओ से जैसे निवृत्ति मिल गई हो। सध्या के आठ बजे होगे। राजेश उस समय नई दिल्ली रीगल के पास खडा था। उसको दिल्ली आये पन्द्रह दिन हो गये है। बी० ए० परीक्षा का परिणाम आते ही वह नौकरी की खोज मे आ गया है। इस अवधि मे उसने प्रतिदिन समाचार पत्रो मे विज्ञापनो को पढा है। जहाँ उचित समझा प्रार्थना-पत्र भी भेजा है। कई रिक्त स्थानो के लिये तो प्रार्थना-पत्र के साथ वह एक, दो और चार रुपये तक भी भेज चुका है। उत्तर उसके पास कही से भी कुछ नही आया।

अन्य दिनो की अपेक्षा आज राजेश कुछ अधिक उदास है। ऋतु परिवर्तन का सरस सन्देश उसे कुछ दुखदायी सा दिखाई दे रहा है। यहाँ वह जब भी आया रजनी साथ होती थी। और आज उसके अभाव मे लगता है जैसे यहाँ कोई भी नही है। वह जैसे निर्जन मे खडा है। एक ओर रोजगार की चिन्ता और दूसरी ओर रजनी के अभाव ने राजेश को न जाने कितना कुछ सोचने को विवश कर दिया है। कभी

वह सोचता है—माता-पिता ने मुझे कितनी आशाये लेकर पढाया था। आज भी कितना दुलार है उनका मुझ पर। मैं हूँ कि जीवन की ऐसी दलदल मे फँस गया हूँ, जहाँ से निकल ही नही पा रहा हूँ। मेरा जीवन बिखर गया है। इसका दोषी मै, स्वयँ हूँ। मैने साधना के समय भोग का पथ चुना इसी का दड मुझे अब मिल रहा है।

दिल्ली आते समय राजेश के पास तीन सौ रुपये थे। अब केवल सौ रुपये बचे है। खाना वह होटलो मे खाता है। रात्री को मित्रो के पास सो जाता है। राधा से वह अवसर मिलने पर मिलता रहता है। राधा ने कई बार सकेत किया है—"आप यहीं ठहरे तो अच्छा है।" राजेश को लगता है दलदल से निकल मरुस्थल मे पग बढाकर क्या करूँगा। धन्यवाद कहकर राजेश राधा की प्रार्थना को ठुकरा देता है। इतना होने पर भी राजेश के मन मे रजनी के प्रति शका और राधा की उदारता के प्रति आशा निरन्तर बढती जा रही है। यथा समय वह न चाहने पर भी दोनो की तुलना सी करने लग जाता है।

अर्थोपार्जन का कोई मार्ग न पाने के कारण राजेश समाज की अर्थ व्यवस्था के विषय मे भी कई बार सोचने लगता है। वास्तव मे यह समाज चोर ठगो और बदमाशो का एक सगठन मात्र है। यहाँ प्रत्येक व्यक्ति दूसरो की जेब काटने के लिए अवसर की खोज करता रहता है। सबके हाथ मे ब्लेड है। जिसको अवसर मिला, वही विजयी है। मकडी और मक्खियो के इस सामाजिक सगठन मे मकडियाँ अपने व्यवसायिक जालो को फैलाकर बेचारी मक्खियो को फँसा रही है। उच्चाधिकारी अपनो को हाथ पकड कर ऊपर उठा रहे है। व्यवसायी धन के बल पर वस्तुओ का सग्रह कर मँहगाई को बढा रहे है। कुछ खाद्य पदार्थो मे मिलावट कर तिजोरियाँ भर रहे है। मेरा बस चले तो आग लगा दूँ इस समाज को, और फिर इसकी क्षार को भी गंगा की भेट चढा दूँ।

उस समय भी राजेश समाज की आर्थिक व्यवस्था के विषय मे ही चिन्तित था। इन्द्रदेव की कृपा हुई और उसने इस सृष्टि की प्रार्थना पर वृष्टि आरम्भ कर दी। राजेश को क्रोध आ गया। विचित्र है इन्द्र

देवता, जिन्होने मेघ माला को वर्षा का आदेश दिया है। उनको तो वज्राघात करना चाहिए था। राजेश को लगा—जैसे इन्द्र देवता भी सत्ताधारियो के ही सहायक है। ठीक भी है, उन्होने अपने पद की सुरक्षा के लिए क्या कुछ नही किया। वह इस सचालित व्यवस्था मे तिल बराबर भी परिवर्तन नही चाहते।

विचारो की गहनता के कारण राजेश ने बूँदो की कोई चिन्ता न की। उसके वस्त्र गीले हो गए। वह फिर वहाँ से चोरो की चाल चलता हुआ मद्रास होटल आ गया। उसका कोई निश्चय नही था। उसे कुछ इस स्थान और सत्ताइस नम्बर बस से प्यार सा हो गया था। विवाह से पूर्व जब वह रजनी मे क्षमा माँगने आया था, इसी स्थान से इसी नम्बर की बस से उसके साथ रोहतक रोड गया था। यही आकर्षण उसे यहाँ खीच लाया। और फिर सत्ताइस नम्बर की बस आने पर वह उसमे अनायास ही चढ गया। जब वह रोहतक रोड पहुँचा साढे नो बज चुके थे।

इस समय राजेश न जाने क्यो राधा के पास नही गया? कुछ देर रोहतक रोड पर खडा रह कर उसने कुछ निश्चय सा किया। उसने फिर एक ताँगा पकडा और एक रुपए मे उसे तैयार कर सीधा मिल चला गया। ताँगे से उतर कर राजेश ने पनवाडी की दूकान पर सिग-रेट पी एक डिब्बी ले। सिगरेट सुलगा कर जब वह क्वार्टरो की ओर बढा, उसके पाँव कुछ भारीपन अनुभव करने लगे। उसने सूका के क्वार्टर की ओर चार कदम बढाये। वह न चल सका, जैसे उसके पाँवो मे बेडियाँ पड गई हो। वह फिर रजनी के क्वार्टर की ओर बढने लगा। इस समय उसके पाँव और भी भारी हो गये. शिक्षा काल मे दौड मे प्रथम आने वाले राजेश को लग रहा था—जैसे उसके पाँव आज उसके भार को भी नही मभाल रहे है। इस समय वह पचास गज की दूरी को कच्छवा गति से पन्द्रह मिनट मे पूर्ण कर पाया।

रजनी का द्वार बन्द था। बूँदो के कारण वह छत से कमरे मे आ गई थी। राजेश ने द्वार पर खड़ा होकर धीरे से देखा—कमरे मे बत्ती

जल रही थी। वर्षा की बूँदे इस समय और भी तेज हो गईं। राजेश के वस्त्र सरोवर हो गये। फिर भी उसका साहस नही हो रहा है कि द्वार पर थपकी लगाये। कुछ देर तक शका जन्य घृणा और अतीत की मधुर स्मृतियो का द्वद चलता रहा। निराशामय भविष्य को उज्जवल बनाने के लिये जैसे कोई जुआरी सब कुछ हार कर भी ऋण लेकर पुन जुआ खेलने का साहस करे, राजेश की स्थिति यही थी। अन्त मे उसने सम्पूर्ण साहस बटोर द्वार पर थपकी लगा दी।

मेघ गर्जन के कारण रजनी द्वार की थपकी को न सुन पाई। राजेश को लगा- जैसे इन्द्रदेव आज पूर्णतया प्रतिकूल है। उसने प्रकृति से लडने का निश्चय कर द्वार पर जोर से धक्का लगाया। इस बार रजनी ने सुन लिया। वह भयभीत हो गई। शकित हो वह सोचने लगी—कही धर्मार्थी की धूर्तता के नग्न नृत्य का समय तो नही आ गया है। जब वह सोच रही थी, राजेश ने दूसरा धक्का लगाते हुए कहा—

"रजनी।"

रजनी को राजेश की आवाज पहचानने मे एक पल भी न लगा। उसने द्वार खोल दिये। द्वार खोल वह धीरे से पीछे हटती हुई बोली—"आइये! इस समय कहाँ से आ रहे हो?"

राजेश ने द्वार मे प्रवेश कर कहा कुछ नही। वह कुछ देर रजनी को नीचे से ऊपर तक देखता रहा। रजनी भी चुपचाप सिर झुकाकर खडी हो गई। एक दो बार दृष्टि भी टकराई। दोनो फिर भी शान्त रहे। कहे भी क्या? दोनो के पास एक दूसरे को देने के लिये इतने उपालम्भ है, जिनके लिए एक युग चाहिए। रजनी के हाथ भी इस समय राजेश के पगो की ओर न बढ पाये। वह न जाने कौन सी कल्पनाओ और आशकाओ मे खोकर, प्रथम वाक्य के पश्चात् मूर्तिवत बन गईं।

पुरुष और नारी के किसी भी सघर्ष मे जैसे अन्तिम पराजय नारी की ही हो। रजनी के मुख से पुन फूट पडा—

"बैठिये। इस प्रकार खडे-खडे क्या देख रहे हो?"

"मै क्या देख रहा हूँ? आज तुम यह नही जानती?"

"बहुत बाते ऐसी भी है, जहाँ ज।नकर भी अनजान, बनना पडता है।"

"आँखे खोलकर चलो रजनी ! कही ऐसा न हो, टकरा जाओ।"

"पहले तौलिया लेकर हाथ पाँव पौछ लीजिए। फिर आराम से बैठकर जो कुछ कहना है कहो। खडे क्यो हो ?"

"इस मुख को तो अब भीगा ही रहने दो रजनी।"

"और यह मुख अब भीग नही सकता। आँसुओ का स्रोत अब सूख चुका है। केवल आहे ही शेष रह गई है।"

"मनोनुकूल साथी पाकर भी आहो की बात समझ मे नही आई।"

"यही तो विडम्बना है। साथी मिलकर भी न मिल पाया।"

"आर्थिक दुनियाँ के सर्वोपरि सचालक की सगिनी होकर भी और क्या चाहती हो, तुम विलक्षण नारी ?"

रजनी के ऊपर जैसे वज्राघात हो गया हो। कठिनाई से स्वयँ को सभाल कर बोली—

"आप किसी भ्रम के जाल मे तो नही फँस गये है ?"

"कानों सुनी भ्रम हो सकती है। आँखो देखी नही।"

"आप दिल्ली कब आये ? और इस समय कहाँ ठहरे है ?"

"यह जानना अब तुम्हारा अधिकार नही है।"

"अधिकार न सही। कर्त्तव्य ही समझ लो।"

"कर्त्तव्य और अधिकार को स्वीकार करने वाला साथी तो अब पा चुकी हो। फिर क्या चाहती हो ?"

इस बार रजनी सभल न पाई। वह दोनो हाथो से सिर को पकड कर नीचे बैठ गई। उसकी आँखो के सम्मुख अँधेरा सा छा गया। वह कुछ देर बैठी ही रही। फिर सभल कर वह बोली—

"धराशायी व्यक्ति की ग्रीवा पर पदाघात करने वाला व्यक्ति यदि किसी सन्तोष का अधिकारी है, तो फिर आप जो चाहे वही कहे।"

"क्रिया से पूर्व विचार आवश्यक है रजनी।"

"और जहाँ विचार के पश्चात् की हुई क्रिया का अपेक्षित फल मानव को न मिले, वहाँ क्या आवश्यक है राजेश ?"

"तब तुम ने इसीलिये यह नवीन पथ चुना है ?"

"आप कल्पित निश्चय को सत्य मानने की भूल कर रहे है ।"

"भ्रम कहकर मेरे सत्य की उपेक्षा न करो रजनी। मै केवल तुम्हें अन्तिम चेतना देने ही यहाँ आया हूँ ।"

"आपके दोषारोपण का प्रतिवादी मेरा शब्द नही बल्कि भविष्य होगा राजेश । अब आप तौलिया लेकर हाथ पाँव पोछ लो। मेरी धोती कपडा बदलने के लिये ले लो । मै हीटर जलाकर चाय बनाती हूँ । फिर जो कहना है दिल खोलकर कहना ।"

रजनी ने हाथ पकडकर राजेश को चारपाई पर बैठने के लिए विवश किया, और राजेश अपनी हठ पर दृढ रहा । वह बोला—

"मै तुम्हे अब कोई भी कष्ट देना नही चाहता ।"

"यह कष्ट नही केवल आतिथ्य सत्कार है ।"

"ऐसे अतिथि सत्कार करने वालो का दिल्ली मे अभाव नही है।"

"और राधा भी उन्ही मे से एक है, यह भी तो कहो ।"

"जिस राधा पर तुम व्यग करना चाहती हो, वह तुम से कई दृष्टि से महान है रजनी । जानती हो, वह अपने माता-पिता का वृद्धावस्था मे किस प्रकार निर्वाह कर रही है ?"

"दूसरी ओर आप भी माता-पिता के आज्ञाकारी सेवक हो। यही है न आपके ओर उसके विचारो का सामजस्य । खूब गुजरे ।ा जा मिन बैठेंगे दीवाने दो ।"

रजनी ने सारा विष वमन कर दिया। प्रतिवाद मे राजेश ने भी कोई कसर उठा न रखी। वह बोला—

"देखो रजनी। तुम मिल मालिक की पत्नी नही, बल्कि मिल मैनेजर की गुप्त प्रेयसी हो। अधिक गर्व न करो ।"

सत्य मे धैर्य होता है, रजनी इस कथन से विचलित न हुई । वह

जानती है—भ्रम का निवारण साधारण कार्य नही है । वह बोली—

"भावी जीवन मे कहने के लिये कुछ शेष न छोडना राजेश ।"

"भविष्य मे जब कहने वाला ही न होगा, तो फिर कहेगा ही कौन ।"

इस कथन को सुनकर रजनी सहम गई । उसने चाय प्याले मे डाल राजेश के हाथ की ओर बढाते हुए कहा—

"शका जन्य क्रोध यदि आपको कायरता सूचक आचरण करने के लिये विवश कर सकता है तो यह मेरा दुर्भाग्य है । लो चाय पियो, और शान्ति से कपडे बदल लो ।"

"कोठी मे विश्राम और कार मे भ्रमण करने जा रही हो, और कहती हो मेरा दुर्भाग्य है ।"

"मैं क्या करने जा रही हूँ, यह समय ही बतायेगा ।"

रजनी के विवश करने पर भी राजेश ने चाय की प्याली को हाथ नही लगाया । वह वहाँ से चल पडा रजनी ने उसी समय उसका हाथ पकड लिया । राजेश ने जैसे ही झटका मारकर हाथ छुडाया । रजनी के दूसरे हाथ से चाय की प्याली व प्लेट नीचे गिर गई । रजनी के पाँव पर चाय गिरने से उसको असीम जलन तो हुई परन्तु इस ओर उसने इस समय ध्यान ही नही दिया । वह अधीरता भरे स्वर मे बोली—

"न जाओ राजेश । इतना तो मान लो ।"

"जब तुमने मुझे हृदय से ही निकाल दिया है तो तुम्हारे द्वार से भी मुझे शीघ्र ही निकल जाना चाहिए । कुछ भी करने से पूर्व तुम्हें चेता देना मेरा धर्म था । मैने उसका पालन कर दिया ।"

"क्या मै पूछ सकती हूँ, आप क्या करने जा रहे है ।"

"इसको तुम्हे भविष्य बतायेगा ।"

इस समय रजनी प्रयत्न करके भी आँसुओ को न रोक पाई । डबडबाई आँखो और भर्राई हुई वाणी मे वह बोली—

"क्या मेरी छोटी बहन को भी मुझें नही दिखायेगे ?"

"देखो रजनी। अब केवल दूर से देखती रहो। प्रेम पहिये की जडो को अब दीमक चाट गई है। अनुराग के तन्तु को अब घृणा की कतरनी ने काट दिया है। इसलिए अब मै जा रहा हूँ।"

राजेश फिर चल पडा। रजनी डबडबाई आँखो से उसे देखती ही रह गई। उसको लगा—जैसे अतीत का चन्दन अपने सौरभ को खोकर आया, और नागो की फूत्कार से मुझे अचेत कर छोड गया। रजनी ने द्वार पर खडे हुए राजेश को उस समय तक देखा जब तक वह दृष्टि से ओझल न हो गया।

और फिर वह द्वार बन्द कर सिसकियाँ भरने लगी।

१७

राधा कई दिन से रजनी से नही मिली। उसको विश्वास हो गया कि धर्मार्थी जी की दृष्टि से रजनी ने ही मुझे गिराया है। धर्मार्थी जी से वह प्यार नही करती, फिर भी मिल के सर्वोपरि अधिकारी है, उनसे व्यवहार मे कटुता नही आनी चाहिए। राधा ने एक दो बार रजनी पर व्यग भी किया। इसीलिये रजनी ने भी अब उससे मिलना-जुलना छोड़ दिया। उसको समय भी नही मिलता। मिल के क्वार्टरो में उत्पन्न होने वाली समस्याओ के समाधान मे ही उसका सारा समय बीत जाता है। मजदूरो स्त्री-बच्चो की स्वच्छता पर वह विशेष ध्यान देती है। स्त्रियो के आपसी झगडो के बीच मे भी पड जाती है। यथा समय मजदूरो की कठिनाइयो पर भी विचार करती है। उसका अब क्वार्टरों में समुचित आदर होने लगा है। जहाँ जाती है सब उसके लिए आँखें बिछा देते है।

प्रात काल जब रजनी क्वार्टरो में भ्रमण के लिये तैयार हुई, उसके पास चार मजदूर आ गये। बात यह हुई, कुछ मजदूरो को उस दिन के झगडे मे पुलिस ने पकड लिया था। कुछ को चोटे आईं। जो पकडे गये उनको कुछ यातनायें देकर छोड दिया गया, उन्होने छूटते ही, पुन सगठन को सुदृढ बनाने के प्रयत्न आरम्भ कर दिये। उन्ही प्रयत्नो के अन्तर्गत यह भी निश्चय किया, कि मजदूरो की पढाई का कोई प्रबन्ध होना चाहिए। उसी विषय मे मजदूरो के चार प्रतिनिधि इस समय रजनी से सम्मति लेने आये है। इन्ही मे एक सूका भी है। चारो ने हाथ जोडकर रजनी को प्रणाम किया। प्रणाम का उत्तर देकर रजनी बोली—

"आओ भाई। कहो कैसे आये हो?"

सूका ने टूटी-फूटी भाषा मे अपने उद्देश्य को प्रस्तुत किया—

"देखो बहिन जी? हम चाहते है, हमारे लिए कोई पढाई का इन्तजाम हो जाय। नाच, गाने और नाटक हमारे लिए बेकार है।

"यह तो बडी अच्छी बात है इसके लिए तो आप जब चाहे मै आप लोगो के साथ चल सकती हूँ।"

"तब तो बहुत अच्छा हो बहिन जी।" शब्द सूका के थे।

"आप लोग चाय पियेगे क्या?"

"नही बहन जी! हम चाय पीते ही नही।" चारो बोले।

"तो फिर मेरे साथ चलो। मै धर्मार्थी जी से मिला देती हूँ।"

"जैसा आप ठीक समझें। चलिये।" सूका बोला।

रजनी तैयार तो थी ही। उनको साथ ले चल पडी। धर्मार्थी जी उस समय कार्यालय मे उपस्थित थे। चपरासी से पूछ वह सीधी अन्दर चली गई। चारो मजदूर द्वार पर ही खडे रहे।

रजनी प्रणाम कर कुर्सी पर हाथ टिका कर खडी हो गई। धर्मार्थी जी स्वर मे मिठास भरकर बोले—

कहो रजनी? कैसे कष्ट किया इस समय आने का?

"मजदूरो की ओर से एक प्रार्थना लेकर आई हूँ। यदि अवसर हो

तो निवेदन करूँ।"

"मजदूरो को भी साथ लाना चाहिए था आपको।"

"साथ ही लाई हूँ। चार मजदूर बाहर खडे है।"

"तो फिर उनको भी अन्दर बुला लो।"

रजनी बाहर आई और चारो को अन्दर ले गई। चारो प्रणाम कर हाथो को बाँध शान्त खडे हो गये। धर्मार्थी जी बोले—

"कहो भाइयो! क्या चाहते हो?"

चारो सिर झुकाकर शान्त खडे रहे। वह एक शब्द भी न बोल पाये। उनको मौन देख रजनी ने उनकी माँग प्रस्तुत की।

"यह तो बडी अच्छी बात है। मै तो चाहता हूँ, मिल का प्रत्येक कर्मचारी ही शिक्षित हो। दो चार रोज मे कोई अध्यापक रख देगे वह इनको शाम और सवेरे कुछ समय पढा दिया करेगा।"

"अध्यापक की नियुक्ति तो आप ही करेंगे।" रजनी बोली।

"यदि आपकी दृष्टि मे कोई अच्छा अध्यापक हो तो बता देना।"

"क्या इसके लिए कोई शुल्क भी होगा?" रजनी ने समाधान किया

"मैं समझता हूँ, दो रुपये प्रति मजदूर पर्याप्त होगा।"

"मेरे विचार से मजदूर दे नही पायेगे।"

"अरे यदि नि शुल्क कर दिया जाये तो ये पढ ही नही पायेगे। कुछ न कुछ तो होना ही चाहिए। शेष व्यवस्था हम कर देगे।"

रजनी ने मन मे सोचा—यदि प्रात और सध्या को सौ मजदूर हो गये, तो इस प्रकार दो सौ रुपये हो जायेगे। डेढ सौ रुपये मे जितने चाहे, अध्यापक मिल सकते है। फिर ये सज्जन किस प्रकार की व्यवस्था करेगे। केवल स्थान का प्रश्न ही शेष रह जाता है। कुछ विचार कर वह बोली—

"मेरे विचार से शिक्षा शुल्क एक रुपया पर्याप्त है।"

"चलो फिर जैसी आपकी इच्छा। आप कोई सौ रुपए मासिक तक का अध्यापक खोज ले।"

' बहुत-बहुत धन्यवाद ।" कहती हुई रजनी मजदूरो सहित चल पड़ी ।"

"अरे ! आप भी चल पडी । आपसे तो कुछ बाते करनी है, इन भाइयो को जाने दो । इनकी माँग तो अब पूरी हो गई ।"

कर्मचारी चले गए और विवश रजनी को रुकना पडा वह बोली—

"कहिए क्या सेवा है मेरे योग्य ?"

"हमे तो आज पता चला है कि आपके पास हृदय भी है ।"

"मुझे आप अभी तक न समझे है, और न कभी समझ पायेगे ।"

"तो क्या आप रहस्यवाद की साक्षात् प्रतिमा है ?"

"आप मेरे विषय मे कुछ भी निश्चय करने मे स्वतन्त्र है ।"

"क्या सत्य कह रही हो रजनी ?"

"यह भी आप स्वयँ ही निश्चय कर ले ।"

"परन्तु मेरा निश्चय तो आपका समर्थन चाहता है ।"

"क्या आपने कभी सोचा है कि मेरा भी कोई निश्चय हो सकता है ।"

"मुझे यही तो दु ख है रजनी ! न आप अपना निश्चय बताती है, और न ही मेरे निश्चय का समर्थन करती है ।"

"असमर्थ की प्रार्थना पर पहले विचार होना चाहिए श्रीमान् जी ।"

"मेरा तो प्रथम निश्चय ही यह है कि असमर्थ को समर्थ बना दूँ ।"

"प्यासे को पानी चाहिए, भोजन नही ।"

"तो फिर पहले तुम ही बताओ, क्या चाहती हो ?"

' कही ऐसा न हो, मेरी चाह, केवल आह बनकर ही रह जाये ।"

' वचनबद्ध न करो रजनी ! कुछ मुँह से कहो तो ।"

इस समय धमार्थी जी कुर्सी से खडे हो गए । वह रजनी के निकट आकर खडे हो, उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगे । पीठ से उनका हाथ रजनी के सिर पर चला गया । दूसरे हाथ को उन्होने रजनी के कठ मे डालकर उसके मुँह को ऊपर उठाया । कुर्सी पर बैठी रजनी के मुख को

ऊपर उठते ही धर्मार्थी जी ने उसकी आँखो मे आँखे डाल दी। रजनी ने आँखें बन्द कर ली। वह धीमे स्वर मे बोली—

"मै चाहती हूँ मेरे बडे भाई का स्नेह भरा यह हाथ सदैव ही मेरे सिर पर रहे। और मैं सदैव उनके दीर्घायु होने की कामना करती रहूँ।"

"यह तुम क्या कह रही हो रजनी ?" धर्मार्थी जी कुर्सी पर बैठ गये।"

"आपने अवसर दिया, तो मैने माँग प्रस्तुत कर दी।"

"तुमने तो हमारे अरमानो की ही होली बना दी है सुन्दरी।"

"जो स्वयँ जल रहा है, उससे जल की आशा ही व्यर्थ है।"

"देखो रजनी! मुझे तुमसे यह आशा न थी। मेरी भावना को अब किसी ओर नही मोडा जा सकता। इसीलिए उत्तम है, तुम यहाँ से दूर अम्बाले विधवा आश्रम मे चली जाओ। वह आश्रम हमारे सहयोग से चलता है। तुम उसकी देखभाल करना। इसके लिए तुम्हे वहाँ भी यही वेतन मिलता रहेगा। निकटता जब विकट बन जाये, तो उस का उपचार ही दूरी है। एक दो दिन मे जाने का प्रबन्ध कर लो।"

"जैसी आपकी आज्ञा।" कहती हुई रजनी खडी हो गई।

धर्मार्थी जी ने इस बार उसे नही रोका। वहाँ से वह सीधी सूका के क्वार्टर पर गई। वहाँ पर कुछ मजदूर उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वह उनसे जाते ही बोली—

"अब आप लोग शीघ्र पढाई आरम्भ कर दें।"

"यह तो धर्मार्थी जी ही जाने बहन जी।" सूका बोला।

"अपने कार्य को आप ही करना सीखो भाई। अपनी सहायता जो आप नही करते, उनकी दुनियाँ मे कोई सहायता नही करता।"

"तो फिर आप ही बताएँ, हम पढाने वाला कहाँ से लाये ?"

'शाम को सात बजे आप लोग रोहतक रोड चले जाना। वहाँ पर राधा बहन जी रहती है। उनके द्वारा आप एक अध्यापक से मिलना। उनका नाम राजेश है बहुत भले आदमी है वे।"

रजनी ने पता लिखकर दे दिया। सूका ने कागज जेब मे रख कर कहा—"आप भी साथ चलती तो अच्छा होता।"

"ठीक है भाई। फिर भी कुछ ऐसी बात है जिसके कारण मै जा नही सकती। यहाँ आप लोगो को ही जाना होगा।"

"जैसी आपकी इच्छा। हम जरूर जायेगे।"

रजनी ने श्रमिको की आकृति को पढा और वह सोचने लगी—

निर्धनता कितना बडा अभिशाप है मानव जीवन के लिए। सम्पूर्ण व्यक्तित्व को निगलते इसे देर नही लगती। इसके साथ ही यदि मानव अशिक्षित भी हो तो समझ लो मरने मे दो लात और लग गई। यही है इन श्रमिको के जीवन की यथार्थता। परोपकार के हवन मे सर्वस्व की आहुति देने वाले यह भोले मजदूर जैसे अन्धे है। हाथ पकडे बिना चल ही नही सकते। मार्ग का इन्हे पता नही। पॉवो मे बल नही। फिर भला कैसे चले?

कुछ देर विचार मग्न सी रह कर रजनी ने उनको जाने का आदेश दिया और फिर वह वहाँ से चली आई। क्वार्टर पर पहुँच रजनी ने द्वार बन्द कर लिए। वह फिर सोचने लगी—

"मै समझ नही पाती, आखिर मुझे बनाने वाले ने मुझे क्यो बनाया है? क्या मेरा जन्म इधर-उधर भटकने के लिए ही हुआ है? मैने विषम पथ चुना, कुछ भी न पाया। कुछ निश्चयो पर दृढ रह आगे बढी अशान्ति मिली और मिल रही है। फिर भला मै क्यो जीवित हूँ। व्यर्थ मे पृथ्वी के भार को बढा रही हूँ। विधाता मुझे बुलाता क्यो नही? सबको खोकर एक को पाया और अब वह भी बन गया पराया। क्या कहूँ मै राजेश के लिए? चचल भ्रमर कहूँ या कस्तूरी वाला वह मृग जिसे अपना भी ज्ञान नही है। भ्रमर मै कभी नही कह सकती। मेरी आत्मा उन्हे अभी तक भी अपने से दूर नही कर पाई है।"

रजनी से न जाने किस अज्ञात शक्ति ने कहा—"परीक्षा की इस घडी मे अधीर न हो रजनी! जो तेरा है, तेरे पास एक दिन आयेगा।

वह क्षमा भी मॉगेगा। उस समय के उल्लास पर आज की सवेदना को न्योछावर कर दो रजनी।"

रजनी ने अम्बाले जाने का अन्तिम निश्चय कर लिया। राजेश ने उस दिन कहा था—"दूर से देखती रहो।"

अब मैं उन्हे दिखा दूँगी कि दूरी वास्तव मे क्या है? सत्य और असत्य के निर्णय के लिए कभी-कभी अपनी प्रिय वस्तु से दूर भी होना चाहिए। देखती हूँ, दूर जाकर उनकी स्मृतियाँ मुझे कितनी व्याकुल बनाती है।

बिखरे हुए मनोबल को सचित कर अन्त मे रजनी ने यही निश्चय किया—मै जाऊँगी और साहस से जिऊँगी।

और फिर वह खाना बनाने मे लग गई।

१८

रविवार होने से आज राधा घर पर ही है। उसके माता-पिता दैनिक कार्यों से निवृत हो बाजार चले गये है। सवेरे के दस बजे होगे। समय बिताने के लिए राधा पत्र लिखने बैठ गई। देश और विदेश में उसके बहुत से पत्र मित्र है। अवकाश के समय उनको पत्र लिखना राधा के मनोरजन का एक प्रमुख साधन है। जब वह पत्र लिख रही थी अकस्मात राजेश वहाँ आ गया। राधा ने सदैव के समान खडी हो कर प्रणाम किया और फिर चाय बनाने लग गई। राजेश बरामदे मे कुर्सी पर बैठ गया। वह बोला—

"कहाँ गये है पिताजी और माता जी।"

"आज सडे है न। शॉपिंग के लिए बाजार गये हैं।"

"और तुम यहाँ अकेली क्या कर रही थी ?"

"किसी के आगमन की प्रतीक्षा। सो वह आ गये।"

"और यह पत्र किसको लिख रही थी ?"

"वही आकर बताऊँगी। चाय तो बना लाऊँ।"

चाय तैयार कर राधा रसोई से बाहर आई और प्याली मे डाल कर राजेश के सम्मुख पडी छोटी सी टेबिल पर रख दी। वह बोली—

"लो अब गर्म चाय पियो और फिर कुछ प्रश्न करो। मै उत्तर दूंगी।"

"चाय की तो कोई इच्छा ही नही है अब।"

"इच्छा आपकी सब ही जीवित रहनी चाहिएँ।"

दूसरी कुर्सी टेबिल के सम्मुख डाल राधा सामने बैठ कर बोली—

"लो मै पिलाऊँ आपको अपने हाथ से।"

"आज के पिलाने वाले ही कल के रूलाने वाले बनते है राधा।"

"आप प्रत्येक स्त्री को एक ही कैटेगरी मे नही रख सकते।"

"ठीक है राधा! फिर भी मेरे विचार से नारी पहले नारी है और पीछे कुछ और। महानता के अन्तिम सोपान पर खडी हुई नारी का भी पॉव कब फिसल जाय, कोई नही जानता।"

"यह आपका निजी अनुभव है।"

"निजी अनुभव ही तो सबसे बडा सत्य है राधा।"

यदि आप अवसर दें तो मैं आपके अनुभव को असत्य सिद्ध करके दिखा सकती हूँ।"

"अहो भाग्य! किन्तु विश्वास नही होता।"

"दूध का जला छाछ को भी फूंक लगाता है यही आप कर रहे है।"

राजेश ने मन ही मन सोचा—दूध और छाछ राधा ने कितना सत्य कहा है। सचमुच रजनी दूध है तो राधा छाछ। रग एक है परन्तु गुण पृथक्-पृथक्। फिर भी जहॉ दूध नही, वहाँ छाछ ही सही। पेय तो दोनो ही है। छाछ मॉगने पर भी मिल जाती है। दूध मिलना असम्भव है। कुछ देर विचार मग्न रहकर बोला—

"क्या आप विवाह नही करेगी ?"

"तो क्या आप यही सोच रहे थे। मैने तो सोचा आप रजनी को खोजने चले गये है। विवाह करने का तो अब प्रश्न ही समाप्त हो गया है।"

"विवाह न करने का निश्चय क्यो किया है आपने ?"

"यह भी कोई पूछने की बात है। स्वावलम्बन की प्राप्ति पर विवाह की क्या आवश्यकता है राजेश! व्यर्थ मे ही देश की जनसख्या को बढा कर नेताओ के लिये सिरदर्द बनाना मै नही चाहती।"

"और भी कोई लाभ बताओ, विवाह न करने का।"

"आप मुझ से अधिक जानते है राजेश। नारी का सौन्दर्य स्थिर रहता है। कार्यक्षेत्र मे कोई बाधा नही पडती। दहेज की प्रथा का भी इससे सुधार होता है। और इन सब बातो से बडी बात है नारी मे स्वावलम्बन की जागृति।"

"अब यह बताओ। अविवाहित युवती प्रकृति की पुकार का कैसे दमन कर सकती है। यौवन तो आखिर यौवन ही है। महान से महान ऋषियो के जिस भावना ने पॉव उखाड दिये, उसको चलचित्रो की इस दुनियॉ मे किस प्रकार दबाया जा सकता है ?"

"आप तो ऐसे पूछ रहे है जैसे मै इसी विषय की पडित हूँ।"

"देखो राधा! हमे किसी भी निर्णय के दोनो पक्षो पर ही विचार करना चाहिये। अविवाहित रहकर संयम भग कर जहॉ युवती या युवक गुप्त व्यभिचार को बढावा दे, उससे अच्छा है विवाहित जीवन। विवाह के पश्चात् मनुष्य कुछ बन्धन अनुभव करता है।"

"अब यह बताओ तुमने यह पत्र मित्र क्यो बनाये है ?"

"बस यूँ ही। खाली समय बिताने के लिये। मेरा कोई नही। मुझे यह अभाव जब बहुत व्याकुल बनाता है तो पत्र लिखकर यूँ ही कुछ शान्ति सी पा लेती हूँ। यदि वास्तव मे कोई हो तो पत्र लिखने, या मित्र बनाने का कोई प्रश्न ही नही उठता।"

"किसी को पाने के लिये कभी-कभी स्वयं को खोना भी पडता है जानती हो राधा। अपने पत्रो से नही, व्यवहार और बलिदान से बनाये जाते है। ये मित्र तो मदिरा की एक प्याली के समान है जो कुछ देर के लिये ही आदमी को हवा को घोडे पर चढा सकते है।"

राधा कुछ कहना ही चाहती थी कि अकस्मात् वहाँ चार मिल कर्मचारी आ गये। उनमे सूका भी था। सध्या को वह आ न सके थे। सूका की ड्यूटी थी। इसीलिए वह अब आये। राधा को लगा जैसे रग मे भग हो गया है। राजेश उन्हे देखकर बोला—

"आओ भाई सूका। क्या समाचार है? तुम्हे हमारा यहाँ पता किसने दिया?"

"हम तो कुछ और बात लेकर आए थे यहाँ। अच्छा हुआ आपके भी दर्शन हो गए।" सूका ने श्रद्धा भरे स्वर मे उत्तर दिया।

चारो फिर चारपाई डालकर उस पर बैठ गए।

"बताओ फिर क्या बात लेकर आए है आप लोग?"

सूका ने जेब से बीडी का बडल और माचिस साथी को निकालकर दी, और फिर राजेश को सारी कहानी सुना दी। रजनी की इस अपनत्त्व भावना को पाकर राजेश और राधा दोनो ही विचार मग्न हो गए। हाँ विचार प्रवाह दोनो का भिन्न था। राजेश रजनी के उपकार से जैसे दब रहा हो और राधा के मन मे जैसे ईर्ष्या की चिंगारी भड़क उठी हो। रजनी जैसे दूर से भी उसके लक्ष्य की बाधक बन गई हो। राजेश उठा और चार गिलास लहस्सी बनवा लाया। बहुत हठ करने पर उन्होने लहस्सी को पिया। उसी समय राधा बोली—

"क्या ये सब आपके पूर्व परिचित है?"

"हमारे गाँव के ही तो रहने वाले है।"

राजेश फिर सूका से बोला—

"अच्छा भाई मै शाम को मिल आऊँगा।"

चारो फिर प्रणाम कर प्रसन्न चित्त वहाँ से चल दिए। उनके जाते

ही राधा ने बातें-चीत की श्रृंखला जोडी—

"बडी शुभ सूचना है यह तो। लगता है आज का दिन आपकी सर्व सिद्धि का योग लेकर आया है।"

"बात तो ठीक है राधा। फिर भी विचारणीय विषय यह है कि इस समय मुझे रजनी के उपकार का आभारी होना पड रहा है।"

"छोडो भी इन बातो को। मुझे तो लगता है आप भी रजनी के समान ही जीवन के मोड पर आ गये है।"

"मोड पर ही तो सम्भलने की आवश्यकता है राधा।"

"देखो राजेश। मेरे विचार से तो हमे प्रथम प्रयास अपनी आने वाली, परिस्थितियो पर विजयी होने का करना चाहिए। और जहाँ यह विजय सम्भव न हो, वहाँ हमे परिस्थितियो के अनुकूल ढल जाना चाहिए। इसीलिए आप सस्ती भावुकता को छोड कर इस समय इस अवसर को हाथ से न जाने दो। धीरे-धीरे कोई और स्थान खोज लिया जायेगा। अभी आप मेरे पास रहे, और बहन जी को भी ले आये। मैं उन्हे बिलकुल मोडर्न बना दूँगी।"

"मोडर्न से तुम्हारा क्या तात्पर्य है राधा ?"

"यही कि आप के विचारो के अनुसार ढाल दूँगी।"

"जो ढलकर भी न ढल सकी, तो बताओ अब किससे क्या आशा करूँ। तुम देख रही हो, मै इस समय सगम पर खडा हूँ, और फिर भी प्यासा हूँ।"

राधा समझ गई—अभी गाडी लाइन पर नही चढी है। वह उठी, और हीटर जलाकर ठडी चाय को गर्म करने लग गई। राजेश ने उसके मुख को पढ लिया। वह बोला—

"देखो राधा! प्यार के पथ मे प्रथम हार पाकर मनुष्य फिर प्यार नही, केवल व्यवहार कर सकता है। अच्छा नही किया रजनी ने।"

"ताली दोनो हाथो से बजती है राजेश। लो चाय पियो।"

चाय की प्याली को राधा के हाथ से लेकर राजेश ने चाय की

चुस्की ली और अपने अन्त करण मे झाँक कर देखा । उसे लगा—जैसे सचमुच ही उसने रजनी के साथ अच्छा नही किया । वह फिर विषय को बदल कर बोला—

"तो क्या तुम भी मुझ से दूर रहना चाहती हो ?"

"यह आपने कैसे जाना ? क्या आप अन्तर्यामी है ।"

"इस कार्य को अपनाते हुए रहने की भी तो समस्या सामने आयेगी ।"

"अभी आप यहाँ रहे । फिर हो सकता है मिल मे क्वार्टर मिल जाये ।"

"मिल मे तो क्वार्टर लडकियो को ही मिल सकते है ।"

राधा इस व्यग मिश्रित हास्य को समझ गई । वह बोली—

"लडकी तो मै भी हूँ, और मिल मे ही रहती हूँ । मुझे तो आज तक क्वार्टर नही मिल पाया ।"

"क्वार्टर लेने के लिए रजनी की शिष्या बन जाओ ।"

"जब आप अपनी शिष्या नही बना सकते, तो फिर और किसी से क्या आशा करूँ । रजनी तो मेरी परछाई से कोसो दूर भागती है । शिष्या तो क्या बनायेगी ।"

"मुझे लगता है, रजनी कुछ मूर्ख है ।"

' वह मूर्ख नही है राजेश । सत्य यह है कि वह दूसरो को मूर्ख बनाने के लिए मूर्खता का प्रदर्शन करती है ।"

"किसी सीमा तक तुम्हारा कथन भी सत्य है राधा । उसने मुझे इतने दिन मूर्ख बनाया और मै जान भी न सका ।"

"और अब मैं भी आपको वैसा ही मूर्ख बनाना चाहती हूँ ।"

"बनाओ राधा, तुम भी बनाओ । एक बात का ध्यान रखना । मूर्ख बनाओ तो वैसा ही बनाना । सचमुच मुझे उस समय की मूर्खता भुलाने पर भी नही भूलती । जान पडता है आजकल गगा उलटी बहने लगी है । किसी काल मे पुरुष नारी को मूर्ख बनाया करते थे । और

आजकल नारियाँ पुरुषों को एक पल मे ही मूर्ख बना लेती है।"

राधा सुन्दर है ही। इस समय उसके बाल खुले हुए थे। इस कारण उसकी सुन्दरता को चार चाँद लग गये थे। राजेश को छेड सूझी। उसने सीधे हाथ की एक ऊंगली से राधा के कपोल को छूते हुए बिखरे बालो को एक ओर करते हुए कहा—

"इस नाग पाश को तो सभाल लो राधा।"

भाव विभोर सी हो राधा धीरे से बोली—

"कितना अच्छा हो कि · "

"रुक क्यो गई राधा बात पूरी कहो।"

"बस राजेश। मै यही चाहती हूँ, किसी के हृदय मे स्थान पाकर उसे अपना कह सकूँ।"

"कितना अच्छा होता, यदि मै अविवाहित होता रजनी।"

"अभी आपके मुख से रजनी शब्द नही उतर पाया है।"

"ओह! मै जाने कहाँ खो गया था ?"

"सवेरे का भूला शाम को घर आने पर भूला नही होता राजेश।"

"एक बात बताओगी राधा।"

"एक नही दो पूछिये।"

"जहाँ तुम कार्य करती हो, वहाँ कितने पुरुष कार्य करते है ?"

"आप इस प्रकार की शकाओ मे न पडे। जबान को देखिये, बत्तीस दाँतो से भी अपनी सुरक्षा कर लेती है।"

"देखो राधा! नारी के दुर्बल मन की दुनियाँ मे ऐसी ही हलचल मची रहती है जो तूफान के समय सागर मे पाई जाती है। मै चाहता हूँ भविष्य मे तुम कोई ऐसी दुर्बलता न दिखाना जिससे मै गति खोकर दृष्टि से भी हाथ धो बैठूँ। याद रखो फूल अपनी डाली पर ही हँसता है।"

"दुख तो यही है कि मै हृदय खोलकर आपके सम्मुख नही रख सकती। अच्छा है आप विश्वास कर लें। मेरे पास शब्द भी नही है जो हृदय को प्रकट कर सकूँ।"

"मुझे शब्द नही केवल भाव चाहिए ।"

राधा की आँखो मे आँसू छलक आये। वह बोली कुछ नही। राजेश को विश्वास हो गया। राधा सचमुच सच्चा हृदय रखती है। स्त्री के सबसे बडे शस्त्र से घायल होकर राजेश बोला—

"यह तुम क्या कर रही हो राधा ?"

"कुछ नही ?" राधा ने आँसू पोछ कर मुख पर मुस्कान को समेटते हुए उत्तर दिया। और फिर उसने राजेश के चरणो को छूकर हाथो को अपने गाल पर टिका दिया। राजेश गद्‌गद् हो गया। जैसे उसने राधा को सर्वस्व रूप मे पा लिया हो। वह बोला—

"एक बात और कहनी है राधा।"

"कुछ भविष्य के लिए भी तो छोड दो।"

"नही ! वह इसी समय की है। अब तुम चटकीले वस्त्र पहनने बन्द कर दो। मुझे स्वाभाविक सौंदर्य से असीम प्यार है।"

"यह सब तो भविष्य मे आप पर ही निर्भर है।"

"अच्छा अब यह बताओ आज का क्या कार्यक्रम है ?"

"अब विश्राम करो। हो सका तो शाम को कही भ्रमण के लिये चलेगे।"

"अच्छा अब दो प्याली चाय बनाओ।"

राधा उठी और चाय बनाने लग गई। और राजेश भावी जीवन की सुखद कल्पनाओ मे खो गया।

१९

रजनी को दिल्ली से आये आज दूसरा दिन है। अम्बाले आकर उसको एक नया जीवन सा प्राप्त हो गया है। विधवा आश्रम की एक दो को छोडकर सब ही विधवायें उसमे आयु मे बडी हैं। वह अपने कमरे मे सबसे मिल चुकी है। सारी विधवाओं को विश्वास हो गया है अब आश्रम मे नई चेतना का सूत्रपात होगा। रजनी के स्वभाव की दूसरे दिन ही सारी विधवाये प्रशसा करने लगी है।

सब कुछ तो ठीक हुआ परन्तु एक बात यहाँ आकर भयकर रूप धारण कर गई है। रजनी के मन मे एक शका कई मास से चली आ रही थी। यहाँ आकर वह साकार सी होने लगी। उसको कल अम्बाले में आते ही उलटियाँ होने लगी थी। कल उसने समझा—यह यात्रा की थकान के कारण ऐसा हो रहा है। आज जब उसकी उलटियाँ बन्द न हुईं तो उसे लगा कही राजेश का पुत्रवती होने का आशीर्वाद तो पूर्ण होने नही जा रहा है। वह आज इसी विचार मे डूबी कमरे से बाहर न गई। जो विधवा वहाँ आई उससे उदारता से मिली।

उस समय एक बजा होगा। रजनी अपने कमरे मे चारपाई पर लेट रही थी। उसी समय एक विधवा युवती ने कमरे मे प्रवेश की अनुमति माँगी। रजनी ने चारपाई पर बैठी होकर कहा--

"आओ बहन! पूछने की क्या बात है?"

"कैसी तबियत है आपकी अब?"

"ठीक है। कुछ मुँह का स्वाद बिगडा हुआ है।"

"यदि कष्ट कर सको तो एक प्रार्थना है।"

"बोलो बहन। क्या सेवा है मेरे योग्य?"

"हमने सिलाई के कमरे मे आपके एक साथ दर्शन करने का निश्चय किया है। यूँ तो आप बारी-बारी से सबसे मिल चुकी है। हम चाहती है सब एक साथ आप के दर्शन करे।"

"किस समय चलना है मुझे ?"

"इसी समय। सब आपकी प्रतीक्षा कर रही है।"

"अच्छा चलो। मै अभी चलती हूँ तुम्हारे साथ।"

"यदि आप न चल सके तो उन सबको यही बुला लूँ।"

"नही ! मै ही चल रही हूँ।"

रजनी साहस कर उठी और युवती के साथ चल दी। सिलाई कक्ष रजनी के कमरे से कुछ दूर था। वह थकी हुई सी जब वहाँ पहुँची तो सारी उपस्थित स्त्रियाँ उसे देखकर खडी हो गई। रजनी बैठने से पहले ही बोली—

"आप सब मुझ से बडी है, इसीलिये आपको खडा नही होना चाहिए।"

सब बैठ गई और उनके साथ ही रजनी भी दरी पर बैठ गई। जो युवती रजनी को बुलाकर लाई थी, उसने सबका सक्षेप मे रजनी को परिचय दिया। और फिर वह विनम्र भाव मे रजनी से बोली—

"अब हम बहन जी का भी परिचय चाहती है।"

"समझ लो मेरा परिचय आप सबसे भिन्न नही है।"

"इतना कहने से काम नही चलेगा बहन जी।"

"अधिक जान कर क्या करोगी मेरी बहनो। क्या आप सबके पास अपनी दुखदायी गाथा कम है।"

"अपनी कहने और दूसरे की सुनने से कुछ दुख बट जाता है बहन जी। इसीलिये हमने यह प्रार्थना की है।"

रजनी से न रहा गया। वह भी जैसे कुछ हलका होना चाहती हो। कुछ भरे हुए से कठ से वह बोली—

"आदरणीय बहनो ! मेरा जीवन आकाश की उस व्यापकता

का परिचायक है, जिसमे न जाने कितनी अनुभूति रूपी तारिकाओ का प्रत्येक क्षण विनाश और निर्माण होता रहता है। पूर्णिमा की एक मधुर रात्री को चाँद अपनी सम्पूर्ण मधुरिमा को लेकर आया और छिप गया। बस अब मेरा जीवनाकाश केवल अमावस्या के अन्धकार से घिरा हुआ है। इससे अधिक और मै कुछ नही कहूँगी।"

रजनी ने उपस्थित स्त्रियो की आकृतियो को पढा। उसे लगा— जैसे कोई भी कुछ नही समझ पाई। वह फिर सरल भाषा मे विषय को बदल कर कहने लगी—

"देखो बहनो!' मै भी तुम्हारी ही समान दुख की मारी हुई एक नारी हूँ। अन्तर इतना ही है कि मैने आपसे कुछ शब्द ज्यादा सीख लिये है। इसीलिये मुझे डेढ सौ रुपये मिलने लगे है। मेरे विचार से तो प्रत्येक स्त्री को और विशेष कर विधवा स्त्री को अपने पैरो पर खडा होना जरूर चाहिए। जो विधवा ऐसा नही सोच पाती, वह इधर उधर ठोकर खाती फिरती रहती है। रजनी को बोलते हुए चक्कर सा आ गया। उसका जी मचलने लगा। वह फिर चुपचाप दरी पर लेट गई। विधवाये स्तम्भित रह गई। सब रजनी के चारो ओर भेडों जैसा जमघट बनाकर बैठ गईं। उसी समय बुलाकर लाने वाली युवती ने सबको एक ओर हटाकर रजनी को सहारा देकर उठाया। रजनी को गोद मे सभाल कर उसने एक स्त्री से कहा—

"एक गिलास शिकजी बनाकर लाओ।"

कुछ क्षण मे शिकजी बनकर आई। रजनी पीते ही कुछ सचेत हो गई। युवती ने रजनी को वहाँ से सहारा देकर उठाया और एक और विधवा ने दूसरी ओर से पकडा। इस प्रकार वह दोनो रजनी को ही वही क्वार्टर पर धीरे-धीरे ले आईं। रजनी चुपचाप लेट गई। उसके लेटते युवती बोली—

"अब आपकी तबियत कैसी है?"

"अब मै बिल्कुल ठीक हूँ।"

"क्या एक बात पूछ सकती हूँ आपसे?"

"जरूर पूछो बहन ! जिज्ञासा को शान्त करना ही चाहिए ।"

"वेशभूषा से तो आप विवाहित दिखाई देती ही हैं । फिर आपने अपने भाषण मे अपने चाँद को अपने से दूर क्यो बताया है ?"

"यह जानकर तुम क्या करोगी मेरी बहन ?"

"कर हम क्या सकती है बहन जी । हम तो आप ही दूसरे के सहारे दिन बिताती हैं । फिर भी आदमी की दवा आदमी ही होता है । हो सकता है हम कुछ आपके मन को शान्ति दे सके ।"

रजनी जैसे उबल पडी हो । उसने फिर अपनी करूण कहानी के महत्वपूर्ण स्थलो का सक्षेप मे दोनो विधवाओ को परिचय दे दिया । दोनो शान्त भाव से सुनती रही । रजनी भाव मग्न हो शान्त हो गई । युवा विधवा ने जैसे कुछ आप बीती सुनी हो । वह बोली—

"बड़ी ठोकरे खाई है आपने तो बहन जी ।'

"हाँ बहन । छोटी-बडी ठोकरो को देने वाले पथ का नाम ही तो जीवन है ।"

"अच्छा हुआ आपने बता दिया । आप न बताती तो हमे आज रात को नीद ही न आती ।'

"नीद की बात छोडो बहन । दुनिया मे एक से अधिक एक दुखिया पड़ा हुआ है । इस प्रकार किस-किस के लिये जागती रहोगी ?"

"बुरा न मानो तो एक बात कहूँ ।"

"कहो बहन ! बुरा मानकर मैं तुम्हारा क्या करूँगी ?"

"आदमी तो पत्थर होते हैं पत्थर । नारी ही उन्हे मोम बनाती है ।"

"देखो बहन ! बात तुम्हारी भी ठीक है । फिर भी मै इस बात को यूँ कहूँगी, कि पुरुष मोम होता है, और नारी वह तपन जो उसे पिघला देती है । तपन से मोम पिघलता है, पत्थर नही ।"

"एक बात और पूछ सकती हूँ । क्या ?"

निःसकोच पूछो बहन ! अब तुम से क्या छुपाना है ।

"यह बताओ ! कही आपका पाँव तो भारी नही है ?"

"मैं समझी नही आपकी बात।"

"मेरा मतलब है कही ऐसी वैसी तो बात नही है।"

रजनी कुछ समझ गई। वह अपनी शका की पुष्टि सी पाकर तुरत ही विचार मग्न हो गई। कुछ सभलती हुई सी बोली—

"क्या मेरी दशा इस बात का परिचय दे रही है।"

"हाँ बहन जी ! चिह्न कुछ ऐसे ही है।"

"चलो बहन जो होगा देखा जाएगा। जो किया है उसका फल तो भरना ही होगा। मैंने अन्तिम विदाई के समय उनसे यही आशीर्वाद तो मागा था। पूर्ण होना ही चाहिए।"

"अब आप होने वाले बच्चे के पिता का तो कुछ परिचय दे दो।"

"क्या दूँ उनका परिचय मेरी बहन। यही समझ लो, वह एक सुन्दर और स्वस्थ युवक है। माता-पिता के आज्ञाकारी है बडे ही भावुक है सज्जनता उनकी सहेली है। इन सब गुणो के साथ ही, वह बिल्ली के पदचिह्नो को देखकर भी शकित हो जाते है। उन्हे लगता है जैसे हाथी गुज़र गया हो।"

"आपने मोर तो देखा ही होगा।"

"मैं समझ गई मेरी बहन। तुम यही कहना चाहती हो न कि किसी भी प्राणी मे सारे गुण नही होते। मोर बहुत सुन्दर है। किन्तु उसके पाँव उसे सदैव रूलाते रहते है।"

"एक बात समझ मे नही आती बहन जी ! यह सब होता क्यो है। चाँद मे भी कलक लगा हुआ है।"

"यह सब इसीलिए होता है कि कही गुणवान गर्व न कर बैठे।"

"बुरा न मानो तो एक बात कहूँ बहन जी।"

"पूछा न करो कह दिया करो।"

"जो पुरुष नारी पर शका करता है, वही सच्चा प्रेमी है।"

"यह आप क्या कह रही हो मेरी बहन ?"

"ठीक कह रही हूँ बहन जी। नारी पर सदेह करने वाला आदमी उसे केवल अपने ही हृदय का हार समझता है। जो स्त्री को खुली छूट दे देता है, वह आप भी स्वतत्र साड के समान इधर-उधर खेत खाता फिरता रहता है।"

"तुम्हारी बात भी ठीक है मेरी भोली बहन। साथ ही वह भी ठीक है, जो पुरुष दो पालो पर पाँव टिकाये रहता है वह नारी को भी ऐसा ही समझता है।"

दोनो की बातचीत को तीसरी विधवा बडे ही ध्यान से सुन रही थी। वह कुछ पुराने विचारो की थी। उसे इन बातो की सुनकर बडा आश्चर्य हो रहा था। उसे रजनी से मन ही मन कुछ घृणा सी हो गई। उसे लगा यह अपने आप मे खोई हुई लडकी हमारे लिए कुछ भी नही कर पायेगी। उसके कान दोनो की बातचीत से दर्द करने लगे और फिर वह उठकर चली गई। उसके जाते ही दोनो की बात-चीत फिर आरम्भ हो गई। युवती बोली—

"क्या नाम है उनका ?"

"राजेश।"

"नाम की तो जोडी मिलाई है बहन जी।"

"जोडी तो मिल ही गई थी। दुर्भाग्य को क्या किया जाये।"

"मुझे तो लगता है वे भ्रम मे पड गये है वैसे निर्दोष है।"

"मै तो उन्हे दोषी होने पर भी दोष नही दूँगी।"

"अच्छा अब आराम करें। हम खाना बनाती है। यह और बता दो, कि आप अब खायेगी क्या ?"

"अभी और बैठो। खाना साढे पाँच बजे बनाना।

"तो फिर एक बात और बता दो।"

"अब मै नही बताऊँगी।"

"तो क्या आप नाराज हो गई है ?"

"नाराज नही हूँ मैं। अब मुझे आप अपनी आप बीती सुनायें।"

"मै कल सुनाऊँगी। आज तो आप की ही सुननी है।

"मैंने तो जो सुनाना था सुना चुकी। अब आपसे एक बात कहनी है। वह यही कि आप विवाह कर ले।" अभी तो आप की आयु अधिक दिखाई नही देती।"

"विवाह क्या दीवारो से कर लें बहन जी। हमको अब कौन अपनायेगा। सब समझते है कि हमारा रस तो कोई चूस ही गया है अब गुठली को चूसने से क्या लाभ ?"

रजनी को लगा—युवती है समझदार। वह बोली—

"आप कुछ पढी-लिखी भी तो होगी ?"

खाक पढा है हमने। आठवी तक की पढाई भी कोई पढाई होती है। आजकल तो बी. ए और एम. ए पास लडकी बेकार फिरती है।

"ठीक है बहन ! फिर भी अनपढो से तो अच्छी हो।"

"अच्छी क्या हूँ बहन जी। हाँ कभी अच्छी अवश्य थी।"

युवती के स्वर मे आह स्पष्ट झलक रही थी उसको भावो मे डूबी देखकर रजनी ने कहना आरम्भ किया—

"मुझे तो लगता है यह समाज ही मूर्खो का है। यह भी तो नही जानता कि भूखे को ही खाना खिलाना पुण्य है। यदि विधवाओ को सच्चे दिल से अपना कर मनुष्य उसका आदर करे तो सत्य मानो स्त्री अपना सर्वस्व न्यौछावर कर सकती है, दु ख तो यही है कि युवक इस बात को समझते ही नही।"

"चलो बहन जी ! कुछ कट गई और शेष भी रोते पीटते कट ही जायेगी।"

युवती फिर खडो होकर बोली—

"आपने यह नहीं बताया कि आप खायेगी क्या ?"

"मूँग की दाल बना लेना।'

"क्या यह दाल राजेश को भी अच्छी लगती थी।"

युवती का भाव गम्भीरता से विनोद मे बदल गया। वह फिर वहाँ से चली गई।

उसके जाते ही रजनी भी मुँह ढाप कर विचार मग्न हो गई।

२०

करोडीमल कपडा मिल मे डेढ सौ रुपये मासिक मजदूरो को पढाने के लिए राजेश की नियुक्ति हो गई है। वह गांव से अपनी पत्नी राजेश्वरी को भी दिल्ली ले आया है। राधा ने अपने मकान के समीप ही एक छोटी सी कोठरी पच्चीस रुपये मासिक पर राजेश को दिला दी है। राजेश प्रात और सध्या को केवल पॉच घण्टे पढाता है। दिन मे वह अधिकतर घर पर ही रहता है। यदि कोई मिल का काम हुआ तो वह दिन मे भी कर देता है। महामन्दिर के निर्माण के कारण धर्मार्थी जी का कार्यभार बढ गया है। राजेश कुछ उनका भी हाथ बटाता है।

सवेरे के सात बजे होगे। उस समय राजेश राधा के साथ अपने मकान पर चाय पी रहा था। राधा प्राय चाय के समय वहाँ आ जाती है। राजेश्वरी चार फुट वर्गाकार वाली रसोई मे सिमटी हुई खाना बना रही थी। उसी समय राधा ने धीरे से कहा—

"बहन जी को अभी चाय बनानी तो आई नही है।"

राजेश्वरी ने राधा के इस कथन को सुन लिया। वह जलभुन कर राख हो गई। प्रथम उसको बहन जी कहा, राधा को भाभी जी कहना था दूसरे उसको चाय बनाने मे अयोग्य सिद्ध किया। राजेश्वरी उसे पी गई। बोली वह कुछ नही। जैसे उसने सुना ही न हो।

राजेश ने राधा के कथन का उत्तर दिया—

न अभी कुछ आया है और न ही कभी आयेगा। गाँवो मे तो घास

खोदनी सिखाई जाती है। अभी एक खुर्पी हाथ मे दे दो। दोपहर तक एक गट्ठर घास लेकर आ जायेगी।

"यदि आप सिखाये तो सीख सब जायेंगी।"

"बुड्ढे तोते कहाँ पढते है राधा।"

"तो फिर आप चाय वहाँ पी लिया करे।"

"प्रश्न केवल चाय का ही नही है। जीवन की और भी तो बहुत सी आवश्यकतायें है जिनका सम्बन्ध नारी से है। उनका क्या करें ?"

"जो सभव है उसके लिए तो सरदर्दी होनी ही नही चाहिए। कल से आप मेरे साथ घर पर चाय पिया करे।"

"अब तो पियो। कल की कल देखी जायेगी।"

"राधा ने दोनो चोटी कुछ सम्भाल कर वक्ष मे उभार सा लाते हुए मुख पर एक हल्की सी मुस्कान को बिखेर कर कहा—

"जीवन तो प्रत्येक पल का एक मूल्य है राजेश! विशेष कर यौवन का प्रत्येक पल तो अमूल्य कहा जायेगा। फिर रो रो कर जीवन क्यों बितायें।"

"हँसी का सम्बन्ध मुख से नही, अन्त करण की शान्ति से है राधा।"

फिर राधा वहाँ से चली गई। राजेश भी विवाह मे मिली हुई साइकिल पर सवार होकर सीधा मिल पहुँच गया। चालीस मजदूर आज उसकी कक्षा मे उपस्थित थे। उनमे से अधिकतर मजदूरो को थोडा बहुत शब्द ज्ञान पहले से ही है। सब राजेश की बातो को ध्यान से सुनते रहे। राजेश मजदूरो की दयनीय दशा को देखकर पढाते समय सोच रहा था—

विचित्र विडम्बना है जो सबका तन ढाँपते है वही आधे नंगे हैं। गेहूँ वाले किसान भी इसी प्रकार जौ, मटर को खाकर पेट भरते हैं। गेहू वे नगर वालो के लिये भेज देते है।"

"राजेश फिर मन की बात को मुख में लाया। वह बोला—

"देखो भाइयो। कभी आपने सोचा है श्रम आप करे और फल दूसरे भोगे। वैसे परोपकारी होना मनुष्य के लिए बहुत अच्छा है। परन्तु ये धनवान तुम्हे परोपकारी नही मानते। वे तुम्हे मूर्ख समझते है, केवल मूर्ख! तुम्हे उनके स्वार्थ भरे अत्याचार के विरोध मे एक मजबूत सा सगठन जरूर बनाना चाहिए।"

जब राजेश पढा रहा था, दो मजदूर उठकर वहाँ से चल दिये। ये दोनो धर्मार्थी जी के आदमी थे। वे भेजे ही इसीलिए गए थे कि राजेश के विचार जान सके। उन्होने धर्मार्थी जी के पास जाकर कुछ नमक मिर्च अपनी ओर से लगाया और धर्मार्थी जी के कान भर दिये। धर्मार्थी जी ने तुरन्त एक चपरासी को राजेश को बुलाने को भेज दिया। ठीक ग्यारह बजे राजेश उनके पास पहुँचा। उसने जाते ही प्रणाम किया और फिर कुर्सी पर बैठ गया। धर्मार्जी जी बोले—

"कहिए आपकी कक्षाये कैसी चल रही है?"

"आपकी कृपा से ठीक ही चल रही है?"

"जमे रहो। यहाँ आपका भविष्य उज्जवल ही रहेगा।"

"यह सब भी आपकी कृपा दृष्टि पर ही है।"

"सम्पत्ति सागर के किनारे तो आ ही गये है आप! अब एक दिन अपनी कार्य कुशलता से अन्दर भी घुस ही जाओगे।"

"मैं तो इतने पर भी सन्तुष्ट हूँ श्रीमान जी।"

"सन्तोष जीवन की मृत्यु है बन्धु। इस प्रकार तो आप कोई उन्नति ही नही कर पायेगे।"

"ठीक है आपकी बात! परन्तु मेरे विचार से आज के युग मे कोई आदमी उस समय तक बढ ही नही सकता, जब तक उसका कोई हाथ न पकडे। जिनको उठाने वाले है, वे अवश्य उठते है।"

"बात तुम्हारी भी ठीक है। इसके साथ ही यह भी ठीक है, जिस व्यक्ति मे प्रतिभा है, वह अवश्य उठते है। मुझे देखो! एक अध्यापिका का ही तो बेटा हूँ। आज ईश्वर की कृपा से सम्पूर्ण वैभव सुख, शान्ति का अधिकारी मैं बन गया हूँ।"

"आपकी प्रतिभा के प्रकाश मे हो सकता है, मुझे भी अपने जीवन की गति मिल जाये। आज तक तो अन्धकार ही देखा है मैने।"

"कैसी बाते कर रहे हो बन्धु। इस आयु मे तो आदमी आकाश के तारे तोड सकता है। आशावादी होकर बढो जीवन मे।"

"आपकी कृपा हुई तो ऐसा ही होगा।"

"एक बात कहूँ, यदि ध्यान दो तो।"

"आपकी बात पर ध्यान तो मेरा पहला धर्म है।"

'मै चाहता हूँ, आप मजदूरो को पढाने की अपेक्षा धर्म-कर्म की बातें अधिक बताये। इन मजदूरो मे हिंसात्मक वृत्ति अधिक होती है। नैतिक दृष्टि से भी ये बहुत दुर्बल होते है। इनका सुधार उसी समय हो सकता है, जब ये धर्म-कर्म का पालन करेंगे। पढकर इन्हे अब कौन सा किसी आफिस मे कार्य करना है।"

राजेश समझ गया—धर्मार्थी जी क्या चाहते है। उनको प्रसन्न करने के लिए वह बोला—

"भविष्य मे ऐसा ही होगा। आप निश्चिन्त रहे।"

"इसका मतलब यह नही है कि मै मजदूरो का हित नही चाहता। आप देखते है, मैं मजदूरो को अपना भाई समझता हूँ।"

"यह तो मै अपनी आँखो से ही देख चुका हूँ।"

"अभी और देखेगे आप। मै तो अपने मे और इनमे कोई अन्तर ही नही समझता। वास्तव मे अन्तर है भी कुछ नही। ये बेचारे शारीरिक श्रम करते है और हम बौद्धिक। है दोनो श्रमिक ही।"

राजेश ने मन मे सोचा—अपने साधनो के नखो से हजारो का रक्त चूसने वाला यह पचानन किस प्रकार स्वयं को दुधारू गाय सिद्ध कर रहा है। इसकी दृष्टि मे मै केवल गाँव का एक मूर्ख युवक ही हूँ। धर्मार्थी जी को प्रसन्न करने के लिए राजेश बोला—

"फलो के भार से वृक्ष झुक ही जाता है श्रीमान् जी! आपकी दशा भी यही है न जाने कितनी भूखी आत्माओ की दुआये आपके साथ है और अब मै भी उनमे से ही एक हूँ।"

इस कथन को सुनकर धर्मार्थी जी बरसाती मेढक के समान फूल गये। प्रसन्न हो उन्होने चपरासी को चाय लाने का आदेश दे दिया। राजेश कुर्सी से खडा हो गया। उसके खडे होते ही धर्मार्थी जी बोले—

"ठहरो बन्धु? चाय पीकर जाना। कक्षा तो अब समाप्त हो ही गई होगी। फिर जल्दी क्या है?"

राजेश बैठ गया। धर्मार्थी जी ने कहना आरम्भ किया—

"मैं चाहता हूँ, आप कुछ मेरा हाथ बटायें। मेरे पास कार्य भार बहुत अधिक है आप महामन्दिर के निर्माण की दौड धूप सभाल लें।"

"जो आज्ञा। मै यथा योग्य कार्यभार को सभाल लूँगा।"

राजेश चाय पिये बिना ही फिर वहाँ से चल पडा। वह जब घर पहुचा राजेश्वरी द्वार पर खडी थी। राजेश को देखते ही वह प्रसन्न हो, वह रसोई मे खाना लेने चली गई। पहले हाथ धुलाये, और फिर थाली को रसोई से कमरे मे ले आई। जब राजेश ने खाना आरम्भ किया, राजेश्वरी ने बातचीत आरम्भ कर दी—

"आज तो आपको बहुत देर हो गई। खाना भी ठडा हो गया है।"

"पहले थोडा नमक ले आओ, पीछे बातें कर लेना।"

राजेश्वरी उठी, और हाथ मे नमक ले आई। राजेश झल्ला गया—

राजेश्वरी दौडकर गई और रसोई से कागज लेकर उस पर नमक रख लाई। नमक को राजेश के हाथो मे थमाते हुए वह नम्र भाव से बोली—

"आप क्रोध न करें, इससे सिर मे दर्द हो जायेगा आपके?"

"क्रोध किया नही जाता, वह तो किसी कारण से आ ही जाता है देवी जी! पढ़ी नही तो खाना भी बनाना नही सीखा।"

"आपकी कृपा होगी तो सब सीख जाऊँगी।"

"खाक सीखोगी तुम ! बिना पढे तो घास खोदनी ही आती है।"

"मेरे स्वामी जब गॉव मे सबसे ज्यादा पढे हुए है तो फिर मुझे पढने की क्या जरूरत है। मै तो दासी हूँ तुम्हारी। सेवा करना मेरा धर्म है। इसमे मै कभी कोई कमी नही करूँगी।"

"पहले बोलना तो सीख लो। बडो को तुम कहते हैं या आप ?"

राजेश्वरी फिर चुपचाप भयभीत सी हो सिर झुका कर खडी हो गई।

"यहाँ खडी क्या मेरे टुकडे गिन रही हो। जाकर एक गिलास पानी ले आओ।"

राजश्वरी दौडकर पानी ले आई। पानी को रख वह बोली—

"कुछ ही देर तो आप को देखने के लिए मिलती है। इसमे भी आप देखने नही देते। मैं चाहती हूँ मुझे कुछ देर तो आँख भर कर देखने दिया करो।"

"तो क्या घर मे ही बैठ जाऊँ ? यह दिल्ली है देवी जी दिल्ली। यहाँ तो आदमी मशीन की तरह दौडते है। इस पर भी गुजारा हो जाय इसमे सदेह है। यहाँ पर स्त्री-पुरुष दोनो मिलकर कमायें तब कही पेट पाला जा सकता है।"

"तो फिर छोड दीजिए इस दिल्ली को। हम तो सतोष की रूखी सूखी खाकर गॉव मे भी गुजारा कर लेंगे।"

"मुझे उपदेश देना मत सीखाओ। सीखने के लिये तो और बहुत कुछ है।"

इस कथन को सुन राजश्वरी की आँखो मे ऑसू आ गये। राजेश ने उसको देख लिया। वह फिर भावना का दमन कर बोला—

"नारी चरित्र को छोडो। यह थाली उठा लो।"

राजेश्वरी थाली को रसोई मे रख कर एक टाट का टुकडा ले राजेश की चारपाई के पास आकर बैठ गई। वह बोली—

"लाइये आपका सिर दबा दूँ।"

"पहले झूठे बर्तन तो साफ कर लो। सिर पीछे ही दबाना।"

"मेरा पहला धर्म तो आपकी सेवा ही करना है।"

"और मै समझता हूँ, तुम ही मेरा सिर दर्द हो।"

"आप ऐसा समझते है तो मुझे गाँव छोड दो।"

राजश्वरी की आँखे फिर डबडबा आई। राजेश बोला—

"मै क्या छोड दूँ। तुम अपने आप चली जाओ।"

आँसू पोछ कर राजश्वरी बोली—

"लाइये फिर मै आपके पाँव ही दबा दूँ। मुझे तो इतना ही अधिकार बहुत है। सिर दबाने के लिए आप चाहे तो दूसरा विवाह कर ले।"

"दिल्ली मे तो तुमसे पाँव दबाने बाली दासियाँ भी चतुर होती है मूर्ख।"

"तो फिर मुझे अपनी दासी की दासी समझ कर ही अपने चरणो मे स्थान दे दे। मुझे और कुछ नही चाहिए।"

इस कथन से राजेश कुछ प्रभावित हो गया। वह बोला—

"कुछ सीखो। रोने से काम नही चलेगा।"

"आप जो सिखायेगे सीखूँगी। कुछ दिन तो दीजिये।"

"जो लडकी सवेरे यहाँ चाय पी रही थी, उससे मिला करो। वह तुम्हे सब कुछ सिखा देगी।"

"आपको क्रोध न आये तो एक बात कहूँ?"

"कहो। क्या बात है?"

"मुझे यह लडकी कुछ मनचली सी लगती है।"

"यह तो बडी जल्दी जान लिया तुमने।"

"पढी हुई तो नही हूँ, पर हूँ तो नारी ही। मैने उसे पहचान लिया है।"

"और कल को तुम मुझे भी मनचला बताओगी।"

"यह दासी का धर्म ही नही है। आपकी प्रसन्नता के लिये तो मै सब कुछ सहन कर लूँगी।"

"अच्छा, यह बताओ, जब हम इस लडकी के साथ चाय पीते हैं तो तुम्हे कैसा लगता है?"

"बहुत अच्छा लगता है मुझे ।"

"उस समय तुम्हे उससे घृणा नही होती ?"

"उस समय मै आपकी प्रसन्नता से प्रसन्न होती हूँ । मेरा तो उस लडकी पर ध्यान ही नही जाता ।"

राजेश फिर चारपाई पर लेट गया । राजेश्वरी उसके बालो को सहलाने लगी । राजेश को नीद आ गई । वह जब उठा, पॉच बज चुके थे । राजेश्वरी, राजेश के जागते ही उठी और दूध लाकर चाय तैयार कर दी । जब तक राधा वहाँ आई दोनो चाय पी चुके थे ।

आज राजेश का मन बहुत हल्का था ।

२१

सेठ जी की प्रबल इच्छा है कि धर्मार्थी का विवाह कर दिया जाये । तीस वर्ष की आयु हो गई है कार्य उत्तरदायित्वपूर्ण है । इस स्थिति मे अविवाहित रहना खतरे से खाली नही है, सेठ जी जानते है– युवा व्यक्ति का अविवाहित होने की स्थिति मे पॉव फिसलते देर नही लगती । यौवन की भावनाये कितनी भूल करा दे, यह तो ब्रह्मा भी नही जानते । जिस पद पर धर्मार्थी कार्य करते है, वहाँ तो केवल बुद्धि की आवश्यकता है । हृदय को तो वहाँ पर ले जाने से ही अनर्थ हो सकता है । विवाहित व्यक्ति यदि भूल भी करेगा तो बहुत सँभल कर । सेठ जी ने इसीलिए विवाह करने का अन्तिम निश्चय कर लिया है ।

दूसरी ओर धर्मार्थी जी न जाने क्या चाहते है । विवाह की तो बातचीत से ही वह कोसो दूर भागते है । उन्होने अपने कई प्रमुख मित्रों से कई बार कहा है--"मै आजीवन ब्रह्मचारी रहूँगा ।" इसलिए भी वह विवाह से कतराते है । धर्मार्थी जी को सामाजिक प्रतिष्ठा से बहुत

प्यार है । उनकी धारणा है—मनुष्य चाहे कुछ भी हो, उसकी प्रतिष्ठा भग नही होनी चाहिए । उनको विश्वास है—मनुष्य वही है जो उसे दुनियाँ समझती है । जन वाणी ही ईश्वर का घोष है । इस सबके साथ ही धर्मार्थी जी विवाह को एक बन्धन मानते है । वह जानते है—विवाहित व्यक्ति के पास युवतियाँ कम ही आती है । यदि आती भी है तो बहुत निकट नही । दूर से ही खेल कूद कर चली जाती है । इसलिए विवाह की रस्सी से अभी तक वह गर्दन बचाये हुए है ।

धर्मार्थी जी ने जब से रजनी को देखा है न जाने वह क्या निश्चय कर बैठे है । उनका मन कहता है—या तो रजनी हो, और नही तो कोई ऐसी ही युवती होनी चाहिए, जिस युवती की उदासी भी एक आभूषण दिखाई दे, उसकी प्रसन्नता जाने कैसी होगी ? धर्मार्थी जी भूल गये है कि सच्ची उदासी ही स्त्री का सर्वोत्तम आभूषण है । वह तो सोचते रहते है—जो रजनी साधारण वस्त्रो मे इतनी लुभाती है, वह जब श्रृ गार करेगी तो न जाने कितना आकर्षण होगा उसमे ।

धर्मार्थी जी ने इस समय अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बढाने के अनेक उपाय सोच लिए है । प्रत्येक मगलवार को वह सवा सेर चने क्वार्टरो के बन्दरो को डलवाते है । पाँच रुपए के लड्डू भी वह क्वार्टरो मे ही बँटवाते है । प्रात काल क्वार्टरो के आस-पास ढाई सेर आटा धर्मार्थी जी चीटियो के बिलो पर डलवाते है । प्रत्येक पूर्णिमा को वह गगा-स्नान के लिए जाते है । उनके इन निश्चयो से मिल के सब ही मजदूर पूर्ण परिचित है ।

उस दिन सोमवारी अमावस्या थी । धर्मार्थी जी गगा स्नान के लिए तैयार हो कार द्वारा चल पडे । उन्होने निश्चय किया—भीख की भीख और भाइयो के दर्शन—एक ओर गगा स्नान होगा, और दूसरी ओर हरिद्वार से लौटते हुए अम्बाले जाकर रजनी से भी मिला जा सकेगा । जब से रजनी अम्बाले गई है धर्मार्थी जी कुछ खोये-खोये से रहते है । और कुछ न सही, वाणी विलास तो हो ही जाता था । रजनी के जाने

से वह भी जाता रहा। वास्तव मे धर्मार्थी जी को यह विश्वास ही नही था कि रजनी चली जायेगी। उनका तो यह एक दाव था सो उलटा पड गया। वह तो समझते थे, इस प्रकार यह घबरा कर हमारी रुचि के अनुकूल समर्पण कर देगी।

गगा स्नान कर धर्मार्थी जी ड्राइवर और नौकर सहित जब अम्बाले रजनी के पास पहुँचे, पॉच बज चुके थे। रजनी सिलाई कक्ष से अभी अपने क्वार्टर पर आई थी। धर्मार्थी जी का आगमन उसके लिए तारा टूटने के समान हुआ। आश्चर्य चकित रजनी ने आन्तरिक कौतूहल का दमन कर साधारण दृष्टि से धर्मार्थी जी को प्रणाम किया। धर्मार्थी जी ने प्रणाम का उत्तर उदारता से दिया। वह बोले—

"कहो रजनी! कुशल तो हो?"

रजनी कुछ देर बोल ही न पाई। वास्तव मे वह इस समय धर्मार्थी जी के शब्दो पर ध्यान न देकर वेश भूषा पर दृष्टि जमाये हुए थी। उनकी वेश भूषा दर्शनीय है। वह खद्दर का धोती कुर्ता पहने है। जवाहर कट भी खद्दर की ही है। पैरो मे चप्पल हैं। वह अच्छे भले नेताओ के भी गुरु दिखाई दे रहे है। रजनी की दृष्टि वस्त्रो से हटी और धर्मार्थी के कथन पर उसका ध्यान गया। वह चौक कर बोली—

"कृपा है आपकी! आइये।"

रजनी ने कुर्सी को अपनी चारपाई से कुछ हटाकर डाल दिया। धर्मार्थी जी कुर्सी पर बैठते हुए बोले—

गगा स्नान के लिए आए थे। सोचा आश्रम भी देखते चले। कहिए आपके क्या समाचार है?"

"कार्य ठीक चल रहा है। आप सुनाइये! कुशल से तो हो?"

"शरीर रूप मे तो कुशल ही है मन रूप मे जो तुम छोडकर यहॉ आ गई थी, वही दशा आज भी है। इसलिए दर्शनार्थ यहॉ आना पड़ा है। अब मन रूप मे भी पूर्ण स्वस्थ हो गया हूँ।"

रजनी ने जो सुना, नई बात न थी। वह जानती है, गूलर जब

भी फूटेगा, कीडे ही निकलेगे। वह धर्मार्थी जी के कथन पर मन ही मन विचार करने लगी—गगा स्नान कर यह गधा गाय बनना चाहता है। विचित्र है इस बगुले की भक्ति। एक क्रिया से तीन फल चाहता है। एक ओर सामाजिक प्रतिष्ठा दूसरी ओर स्वर्ग की सीढियाँ और तीसरे मन के रोग का उपचार। कुछ शान्त रह कर वह बोली—

"क्या कहा ? मेरे दर्शन ! आप अभी तक मुझे समझे नही है धर्मार्थी जी। मैं तो वह नारी हूँ जिसको देखकर नाग भी सर पीटने लगता है। यदि फूल को छू लूँ तो उसकी भी सुगन्ध उड जायेगी। मुझे देखकर तो चाँद और सूरज को भी ग्रहण लग जाता है। फिर आप क्या करेंगे मेरे दर्शन करके ?"

"यहाँ आकर आपका स्वास्थ्य बहुत गिर गया है रजनी।"

"यह तो सोचना मेरा काम है। अब आप यह बतायें क्या पियेंगे ?"

"पीने खाने की बात छोडो। बस हमे एक प्रश्न का उत्तर चाहिए।"

"कृपया पुराने प्रश्नो की पुनरावृत्ति न करना।"

"बात न काटो। पहले कुछ कहने तो दो।"

"कहिए, क्या प्रश्न है ?"

"सबसे पहले यह बताओ। तुम्हारी वाणी मे इतनी कटुता क्यो है ?"

"इसका उत्तर तो सीधा है। मिठास होने पर नारी के शिकारी उसे जीवित ही निगल जाते हैं।"

"क्या तुम यह जानती हो, तुम्हारी कटुता भी सरसता से बढकर है।"

"यह तो मै नही जानती ! हाँ इतना अवश्य जानती हूँ, मेरी कटुता या सरलता पर विचार करने वाले आप नही हैं।"

"मुझे तो लगता है। आपको कुछ पुरुषो से घृणा है।"

"जी नही ! ऐसी कोई बात नही है। मै पुरुषो से नही पुरुषो की पशुता से घृणा अवश्य करती हूँ। जो पुरुप नारी को केवल भोग का साधन मानता है मै उसे पशु ही समझती हूँ। कुछ पुरुष नारी को एक रगीन खिलौना मात्र ही समझते है। जब तक जी चाहा खेला, और फिर तोडकर फैक दिया। कुछ पुरुष नारी को बालू की ढेरी समझकर मनचाही रेखा बनाते है, ओर फिर ठोकर मारकर मिटा देते है। फिर बताइये, ऐसे पुरुषो से घृणा कैसे न हो ? विचार कर देख लो।"

"यह कथन आपका प्रत्येक पुरुष पर घटित नही होता रजनी। पुरुष जाति पर कीचड न उछालो। जो पत्थर पथ की ठोकर बनकर आता है, उसी को पथ से हटाया जाता है। तुम जानती हो, जिसकी पूजा होती है, वह भी तो एक पत्थर ही है।"

"आपने इस कथन के स.थ अपना हाथ हृदय पर नही रखा।"

"क्या तुम मुझे ऐसा ही पुरुष समझती हो ?"

"मुख पर किसी के भी अच्छा या बुरा लिखा हुआ नही होता।"

"हम फिर कह रहे है, पत्थर की पहचान करो।"

"मैं भी पुन कह रही हूँ। जो यात्री ठोकर खाकर आगे बढना चाहता है, उसी को पत्थर हटाने की आवश्यकता है। हमे तो अब उसी पत्थर से प्यार है, जिसने हमारे पगो की गति को समाप्त कर दिया है। हमे अब पूजा का पत्थर नही चाहिए।"

धर्मार्थी जी समझ गये, दाल मे कुछ काला है। वह बोले—

"क्या आप बता सकेगी, आप को ठुकराने वाला कौन है ?"

रजनी ने मन मे निश्चय किया—अब इसको कुछ बताना ही उचित है यदि न बताया तो यह सिर का दर्द ही बना रहेगा। सदैव के लिये पीछा छुडाने की इच्छा को लेकर वह साहस बटोर दृष्टि झुका कर बोली—

"मेरे होने वाले बच्चे के पिता को जानकर क्या करेंगे आप ?"

रजनी की इस स्पष्ट वादिता की कुदाली ने धर्मार्थी जी के काल्प-

निक उपवन की सम्पूर्णकलियो को काटकर फैक दिया। वह कुछ विचार मग्न हो गये। उन्होने सोचा—इसीलिये यह सूखे ठूँठ के समान बन गई है। मुडने का नाम ही नही लेती। इसके मधुमास का माली, अब इसे पतझर बनाकर छोड गया है। आश्चर्य है यह फिर भी उसे भूल नही पाई। प्रत्यक्ष मे वह बोले—

"क्या यह तुम सत्य कह रही हो रजनी ?"

"इसमे तिल बराबर भी असत्य नही है श्रीमान्।"

"इतना बडा पाप।"

"आप चिन्ता न करें। पाप और पुन्य का फल मुझे ही भोगना है।"

"तो फिर इस स्थिति मे आप यहाँ तो रह नही पायेगी।"

"मै कार्य मुक्त होने के लिये तत्पर हूँ।"

"मुझे तो आश्चर्य हो रहा है। तुमने इतनी बडी अनैतिक क्रिया की ही क्यो है। कुछ विचार तो किया होता।"

"आपको मेरी किसी भी क्रिया को नैतिक या अनैतिक कहने का अधिकार ही नही है। अनैतिकता वहाँ है जहाँ पत्थर को जोक लगाई जाये।"

इस कथन को सुनकर धर्मार्थी जी कुछ क्रुद्ध हो गये। उनको लगा यह युवती जिसका खाती है। उसी को गुर्राती है।" वह बोले—

"यह ध्यान रखो रजनी। तुम किससे बातें कर रही हो। किसी नीच के भोग भार से दबकर तुम्हे व्यक्ति की सत्ता और सम्मान को कभी नही भूलना चाहिए।"

इस कथन से रजनी झल्ला गई। जैसे उसे बिच्छू ने काट लिया हो। क्रोध मे तमतमाती हुई वह बोली—

"आप मानवीय सीमा का उल्लघन न करें धर्मार्थी जी! मेरे होने वाले बच्चे के पिता के विषय मै आपको एक शब्द भी कहने का अधिकार नही है। यदि आगे कुछ कहा तो अच्छा न होगा।"

"नियति ने नारी का निर्माण करते समय नैतिकता को सम्मुख ही नही रखा देवी जी।"

धर्मार्थी जी ने देवी शब्द पर विशेष बल दिया। व्यग को समझ रजनी बोली—

"मै देवी हूँ या दुराचारिणी, इस विषय मे विचार कर आप अपने मस्तिष्क का भार व्यर्थ मे ही बढा रहे है। क्या लाभ है इससे ?"

"दया आती है, तुम्हारी मूर्खता पर।"

"दया की तो आप परिभाषा भी नही जानते।"

"मै जानता हूँ, विनाशकाल मे मनुष्य की बुद्धि ही उसकी सबसे बडी शत्रु होती है। यह तुम्हारा दोष नही है।"

इस कथन के साथ धर्मार्थी जी वहाँ से खडे हो गये। उनके जाते ही रजनी को विश्वास हो गया—अब यहाँ रहना सम्भव नही है। वह फिर दिल्ली लौटने की घड़ियाँ गिनने लगी।

२२

धर्माथी जी ने दिल्ली जाते ही सबसे पहला काम किया, रजनी की पद मुक्ति का निश्चय सूचना के लिये एक पत्र रजनी को लिखा, जो उसे पाँच दिन पश्चात् मिल गया। पत्र मिलना रजनी के लिये नई बात न थी। वह जैसे इस की प्रतीक्षा ही कर रही हो। उसने तुरन्त दिल्ली लौटने की तैय।री कर दी। यह बात वायु वेग से सारे विधवा आश्रम मे फैल गई। एक दो को छोड किसी भी स्त्री को कोई विशेष दु ख न हुआ। इसका मूल कारण यह था—उस दिन जिन दो विधवाओ के सम्मुख रजनी ने अपनी जीवन पुस्तक के पाठो को पढा, युवा युवती ने तो उसे बचा लिया, परन्तु प्रौढ स्त्री न पचा सकी। वह

जैसे कोई मक्खी निगल गई हो। जिससे मिली सबसे ही नाक पर उगली रख कर रजनी की निन्दा की। किसी की दुर्बलता को जब तक स्त्री दस कानो मे न पहुँचा दे, उसे चैन नही पडता। उसके प्रचार के कारण ही वहाँ की विधवाये, रजनी को देखकर काना-फूँसी करने लग गई है।

रजनी को विधवाओ की दुर्भावना या सद्भावना की अब कोई आशका या अपेक्षा नही रही है। जब वह जा रही है, तो उसकी बला से कोई कुछ भी कहे। जिस वाटिका से बुलबुल ने बसेरा उठा लिया उसके मधुमास और पतझर का उसे न सुख है और न ही दुख। रजनी की दृष्टि अब दिल्ली की ओर लग गई। उसके लिये एक विदाई पार्टी का कुछ स्त्रियो ने आयोजन किया। कुछ पैसे एकत्र करके उसे एक पर्स भी भेट किया। रजनी ने स्मृति चिन्ह के रूप मे पर्स को स्वीकार कर एक छोटा-सा भाषण उपस्थित विधवाओ के सम्मुख दिया।

"आदरणीय बहनो! अल्प समय के इस मिलन और वियोग के समय मे केवल इतना ही कहूँगी, कि मुझसे यदि कोई भूल हो गई हो तो क्षमा कर देना। एक पल का मधुर मिलन हजार वर्ष के वियोग का बल बन जाता है। इस समय मैं इसी आदर्श के सहारे यहाँ से जा रही हूँ। मै स्मरण करने योग्य तो नही हूँ, फिर भी मै आप बहनो के परिवार को कभी नही भूल पाऊँगी। धन्यवाद!"

भाषण की समाप्ति पर औपचारिक मिलन हुआ। सबसे पीछे चायपान की व्यवस्था हुई। अन्त मे सब अपने-अपने लक्ष्य की ओर चली गई। रजनी की सखी एक युवती, उसके साथ कमरे पर आ गई। उस रात दोनो बातें ही करती रही। प्रात जब दोनो सोकर उठी, आठ बज चुके थे।

प्रात काल रजनी चलने की तैयारी करने लगी। वह दस बजे तक तैयार हो पाई। उसने चलते समय निश्चय किया—हरिद्वार गगा स्नान करके दिल्ली जाऊँगी। दैवयोग मे उस दिन पूर्णिमा भी थी। शुभ पर्व जान वह सबसे विदा हो, एक बजे हरिद्वार पहुँच गई। वहाँ पर चार

बजे तक रही•। जब उसने स्नान किया उसका मन प्रसन्नता अनुभव करने लगा। स्नान कर वह गगा के तट पर बैठ कर मौन प्रार्थना करने लगी—

विष्णु के चरणो से निकल ब्रह्मा के कमण्डल और शिव की जटाओ को सुशोभित करने वाली है गगा माई! तुम्हारे इस मृतलोक में आगमन के पीछे भागीरथ का अथक प्रयत्न वर्तमान दुनियाँ का प्रेरक है। मै अबला आज तुम्हारे तट पर आई हूँ। मुझे जीवन मे बल चाहिए। तुमने कितनो को बल दिया। अनगिनत को मुक्ति दी। और न जाने कितनी पतितो को पावन बनाया है। हे पतित पावनी माता! तुम अपने लक्ष्य की ओर अविराम गति से बढी जा रही हो। मैं चाहती हूँ मुझे भी यह गति मिल जाये तो मै भी भागीरथ प्रयत्न द्वारा अपने लक्ष्य को पा सकूँ।

स्मरण रखना माता! यदि मुझे मेरा लक्ष्य नही मिला तो मैं तुम्हारे ही पीछे-पीछे चली आऊँगी। जिसको दुनियाँ आश्रय नही देती, उसके लिये तुम्हारी गोद ही खाली रहती है।

रजनी ने स्नान और अर्चना के पश्चात् कुछ भोजन किया और फिर वह सीधी स्टेशन आ गई। गाडी हरिद्वार से रात को चलकर प्रात दिल्ली पहुँचनी थी, रजनी ने उसी गाडी का टिकट ले लिया। उसके पास विशेष सामान न था। बैग मे कुछ कपडे थे, और पर्स मे चार सौ रुपये। हाथो मे सोने की दो चूडियाँ और अँगूठी थी। घडी को उसने न जाने क्यो, इस समय पर्स मे रख लिया था। अपने सम्पूर्ण समान को भली प्रकार सभाल वह प्लेटफार्म पर बैठ गई। उस समय वहाँ यात्रियो की चहल-पहल थी। पूर्णिमा होने से प्लेटफार्म पर ही मेला सा लगा हुआ था। ऋतु सुहावनी थी। न बहुत गर्मी और न ही सर्दी। आकाश मे चाँदनी छिटक रही थी।

रजनी जब बैठी सोच रही थी—इस भीड मे कैसे चढ पाऊँगी। उसी समय दो मनचले युवक उसके सम्मुख आये, और ठिठक कर बातें करने लगे। वह इसी प्रकार रुक गये जैसे उनके पगो को या तो किसी

ने ब्रेक लगा दिया है, या बेडियाँ पहना दी हों।

एक ने कहा—ऐसे सुहावने मौसम मे तो अकेला कोई भी नही होना चाहिए। दूसरा बोला—और किसी को अकेला रहने की आदत ही पड जाये तो ?"

रजनी ने दृष्टि नीचे झुका ली, जैसे उसने सुना ही न हो। वह सोच रही थी—यही है गगा स्नान से लौटने वाली पवित्र आत्मायें ?

उसी समय गाडी की सीटी सुनाई दी। यात्रियो मे हलचल मच गई। सारे यात्री सज्जित सैनिको की भाँति खड़े हो गये। रजनी ने भी अपना बैग और पर्स सभाल लिया। गाडी के रुकते ही उतरने वालो से पहले ही चढने वाले दौड पडे। दस मिनट तक धक्का-मुक्की होती रही। स्त्री और पुरुषो के पृथक डिब्बो का भेद मिट गया। जिसको जहाँ स्थान मिला घुस गया। कठिनाई से रजनी भी एक डिब्बे मे चढने मे समर्थ हो गई। उसे बैठने को स्थान नही मिला। फिर भी उसने चढने को ही इस समय अपना सौभाग्य समझा।

रजनी जिस सीट के पास खडी थी, उसी पर एक युवक बैठा था। उसके पास एक अधेड स्त्री-पुरुष का जोडा था। युवक रजनी को देख कर खडा हो गया। वह बोला—

"आप यहाँ बैठ जाये बहन जी।"

धन्यवाद कह कर रजनी बैठ गई। वह सोचने लगी—यह भी युवक है और वे भी युवक थे। कितना अन्तर है इसमे और उनमे। बाहर से सब एक ही जैसे है।

गाडी जब गति पर आई, यात्री ऊँघने लगे। रजनी पिछली रात सो ही न पाई थी। वह गहरी नीद मे डूब गई। दिल्ली तक आते हुए वह एक मिनट के लिए भी न जाग पाई। जब गाडी दिल्ली रुकी और यात्रियो मे हलचली मची तो रजनी सचेत हुई। उसने देखा यात्रियो के स्वागत करने वालो की भी प्लेटफार्म पर भीड लगी है। उसको स्मरण हो उठा—एक दिन वह भी यही पर राजेश की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी। कुछ देर तक वह बैठी-बैठी विचारो मे खोई

इधर-उधर देखती रही। भीड के कम होने पर जब वह उतरने को तत्पर हुई उसने देखा—उसका बैग और पर्स वहाँ नही है। टिकट भी पर्स मे ही था। उसे एक धक्का सा लगा। वह प्लेटफार्म पर बैठकर सोचने लगी—अब क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? पास मे न पैसा है और न ही टिकट।

रजनी साहस बटोर कर उठी और द्रुत गति से यात्रियो के निकलने वाले द्वार के पास खडी हो गई। वह आँखे फाड-फाड कर अपने बैग और पर्स को देखने लगी। यात्रियो की लम्बी पक्ति जब वह देखती जा रही थी, उसे वही स्त्री-पुरुष का प्रौढ जोडा दिखाई दिया जिसके पास बैठ कर वह सोई हुई आई थी। आँसू भरी आँखो से रजनी ने उनसे पूछा—

"आपने मेरा बैग और पर्स तो नही देखा है ?"

"नही बेटी।" कहते हुए दोनो पक्ति से बाहर आ गये। वह कुछ देर गाडी मे भी रजनी के विषय मे काना-फूंसी करते रहे थे। न जाने रजनी की लुभावनी आकृति ने उन पर क्या जादू सा कर दिया था। स्त्री तो यहाँ तक कह बैठी थी—"बडे भाग होते हमारे जो राजेश की बहू भी ऐसी सुन्दर होती।" पुरुष ने उत्तर दिया था—"विधाता ने समय लगाया है इसके बनाने मे। साक्षात् देवी का रूप है इस लडकी का।"

प्रौढ स्त्री ने धीरे से पूछा—

"कितना कुछ था तुम्हारे बटुवे और ट्रक मे ?"

रजनी ने सिसकियाँ भरते हुए बता दिया।

"अब तुम कहाँ जाओगी बेटी ?"

"मुझे एक सम्बन्धी के पास जाना है।"

"चलो तुम्हारे किराये के पैसे हम दे देंगे।"

दोनो ने रजनी के किराये का भुगतान किया। वह उन दोनो के साथ ही बाहर आ गई। बाहर आकर स्त्री ने एक रुपया तागे के किराये के लिये रजनी को और दिया। दोनो को हाथ जोड प्रणाम कर

रजनी भीड से एक ओर खडी होकर सोचने लगी—"अब मैं कहाँ जाऊँ ?"

उसने स्वयँ ही उत्तर दिया—वही जाओ, जिसको तुम अपना सर्वस्व दे चुकी हो। वही पर खडे-खडे दूसरा निश्चय किया—पहले हाथ की चूडियाँ बेचकर जेब मे कुछ पैसे तो रख लूँ। फिर वह स्टेशन से सीधी चाँदनी चौक आ गई। बाजार सब बन्द था। केवल एक घडी वाला बैठा था। वह पुलिस से मिला हुआ था। चाट पानी खिलाता रहता था। इसीलिये उसको दुकान बन्द करने या खोलने के नियम का पालन करना नही पडता था। उससे रजनी ने एक चूडी बेचकर पचास रुपये प्राप्त किये और फिर वह सीधी तागे मे बैठकर राजेश के पास आ गई। उसने देखा—गाडी वाले वही स्त्री-पुरुष वहाँ पर बैठे है। उसने पुरुष की आकृति का राजेश से सन्तुलन सा पाया। उसे विश्वास सा हो गया—यह उनके पिता हैं, और ये है राजेश की माता। उसी समय माता बोल पडी—

"आओ बेटी!" कहो क्या चाहती हो ?"

खडे-खडे ही रजनी बोली—

"आपकी असीम कृपा है।"

"तो फिर कैसे आई हो ? हमने तो तुम्हारे ट्रक को नही देखा।"

"ठीक है माता जी। मै ट्रक के लिये नही आई हूँ। यहाँ मेरी एक सखी राधा रहती है। उसके ही पास आई हूँ। उन्ही के साथ मेरे परिचित राजेश भी रहते है। मुझे उन्ही से मिलना है।"

"तो बैठ जाओ बेटी। राजेश अभी आने वाला है। क्या काम है उससे तुम्हारा ?"

रजनी शान्त खडी रही। राजेश के पिता राजेश्वरी से बोले—

"कोई कुर्सी ला दो बेटी को। ये राजेश से मिलने आई है।"

राजेश्वरी ने कुर्सी लाकर बाहर डाल दी। रजनी कुर्सी पर बैठी नही। वह हाथ टिका कर खडी हो गई। उस समय वह सोच रही थी—कितने उदार है राजेश के पिता और माता। यही तो वह सस्कार है जिसने राजेश को इतना महान बनाया है।" उसके मन ने कहा—

एक बार राजेश की पत्नी को अन्दर जाकर देखूँ । मुँह दिखाई भी दूँ । किन्तु कुछ सोचकर वह वही पर खडी रही। उसी समय राजेश की माता बोली—

"बैठ जाओ बेटी । खडी क्यो हो ?"

"मुझे यहाँ से उठा दिया गया है माता जी । इसीलिये खडी हूँ ।"

"क्या कह रही हो बेटी ? हम कुछ समझे नही ।"

"अब कैसे समझाऊँ मैं आपको ?"

"कुछ अपनी जानकारी तो दे दो । तुम राजेश को कैसे जानती हो, और उससे तुम्हारा क्या काम है ?"

रजनी से अब न रहा गया । वह फूट पडी—

"मै वही अभागी लडकी हूँ, जिसने कभी आपकी पुत्र वधु होने का स्वप्न देखा था, माता जी ।"

दोनो को समझने मे देर न लगी । राजेश की माता बोली—

"तो फिर रोती क्यो हो बेटी ? बैठ जाओ ।"

"यदि आप मेरे रोने का कारण जानना चाहती हो तो मै बताने को तैयार हूँ । अच्छा हो मुझ अभागी की बात आप सुन ले ।'

"तो फिर देर क्यो कर रही हो ? बताओ । '

"आप खडी होकर सुन ले ।"

रामप्यारी खडी हुई और रजनी उसे एक ओर ले गई। उसने सारी कहानी कह सुनाई । रामप्यारी सुनते ही विचारो मे डूब गई। वह फिर अपने पति रमानाथ को एक ओर ले गई। उसने वही सब रमानाथ को सक्षेप मे सुना दिया । दोनो की बातचीत के समय ही वहाँ राजेश भी आ गया। रजनी को देखते ही वह लाल हो गया । उसके भाल मे सिकुडन पड गई । रजनी ने दृष्टि झुकाए हुए प्रणाम किया । राजेश ने प्रणाम का कोई उत्तर न दिया। वह सीधा अन्दर चला गया। राजेश के इस व्यवहार से रजनी की आशाओ पर पानी फिर गया । वह फिर भी खडी रही ।

बातचीत समाप्त कर रमानाथ चारपाई पर बैठते हुए बोले—

"बाहर आओ राजेश। ये तुमसे मिलने आई है।"

राजेश अन्दर से ही बोला—

"इनसे कह दो पिताजी मै इन्हे नही जानता। मेरे पास समय नही है। कि व्यर्थ मे सिर दर्द करूँ।

अनादर और उपेक्षा भरी प्रताडना पाकर रजनी का क्रोध सीमा से बाहर हो गया। वह फिर वहाँ एक पल भी न रुकी। उसने लक्ष्य विहीन पक्षी के समान उडान भरकर जैसे स्वयँ को सुरक्षित कर लिया हो।

रमानाथ और रामप्यारी उस समय शान्त बैठे हुए इस नाटक की गहराई पर विचार कर रहे थे।

२३

विद्यालयो से निकलने वाले युवक कुछ दिन व्यवहारिक जीवन मे उन्ही आदर्शों की झोली भरे फिरते रहते हैं, जिनको उन्होने शिक्षा काल मे पाया है। धीरे-धीरे कटु अनुभवो की चोट खाकर झोली ढीली होने लगती है। और फिर आदर्श क्रमश. खिसकते चले जाते है। शिक्षा कालीन भाषा बद्धज्ञान और यथार्थ जीवन मे कभी नही बनती। राजेश भी एक ऐसा ही युवक है। उसकी झोली मे अभी आदर्शो का भार है। मिल के मजदूरो को यह उनके अधिकारो का बोध कराने लग गया है। जिस प्रगतिवाद को उसने साहित्य मे पढा था, उसको मिल मे यथार्थ रूप से पा लिया है। वह चाहता है मिल मजदूरो की आर्थिक दशा मे कुछ सुधार अवश्य होना चाहिए।

धर्मार्थी जी को उसकी प्रत्येक गतिविधि का पूरा ज्ञान है। उन्होने निश्चय कर लिया है—इस युवक का यहाँ रहना अब सम्भव नही। इसीलिये इसको निकाल दूँगा। वह अब अवसर की खोज मे हैं। धर्मार्थी जी यह अनुभव करते है, यदि इसकी विचार धारा को नया मोड दिया जा सके तो कार्य क्षमता की दृष्टि से इसका यहाँ रहना उचित भी है। धर्मार्थी जी के बहुत से दौड-धूप के कार्य वह सरलता से कर लाता है। इसीलिए आज उन्होने चेतावनी देने के लिए राजेश को बुलाकर कहा—

"मुझे लगता है—यदि आप भूल गये है कि आपकी यहाँ नियुक्ति किसलिए हुई है। लगता है आप मित्र की शान्ति भग करने लग गये है।"

"मैने तो कोई बात भी ऐसी नही की, जिससे शान्ति भग हो।"

"आप असत्य बोल रहे है। विचार कर देखो।"

"मुझे लगता है आपको भ्रम हो गया है।"

"आँखो मे धूल न झोको राजेश! हमको सब कुछ पता है।"

"और मुझे लगता है। आप कानो के कच्चे है।

"तो बताओ! आप मजदूरो को क्या पढाते है।

"उनको उनके कर्त्तव्य और अधिकार का ज्ञान कराता हूँ।"

"तो क्या तुम्हारी नियुक्ति इसीलिए हुई थी ?"

मेरे विचार मे तो सच्ची शिक्षा यही है।"

"यह तुम्हारी भूल है राजेश! ये मजदूर अधिकार को छोड़ अनाधिकार के लिए एक पल मे ही हिंसक बन जाते है। इसी से एक दिन यहाँ का शान्त वातावरण दिन रात की अशान्ति भी बन सकता है।"

"मै तो ऐसा नही समझता। हिंसक बनने के लिए तो इन मजदूरो को अभी हजार वर्ष चाहिएँ। अभी तो ये सर्वथा ज्ञानशून्य है।"

"तो क्या हजार वर्ष जीकर तुमने ही इनको ज्ञान दान करने का ठेका ले लिया है। तुमको तो अपना मूल कार्य करना चाहिए।"

"मुझे स्मरण है एक दिन आपने कहा था—मजदूर हमारे भाई हैं। मैने इसीलिए, उनके प्रति सहानुभूति का भाव व्यक्त किया है।"

उनके प्रति सहानुभूति का मतलव यह नही, कि हमारे प्रति तुम कटुता का प्रदर्शन करो। इससे तो हमारे और मजदूरो के सम्बन्ध ही बिगड जायेगे। और फिर इसी से शान्ति भग होते देर नही लगती।"

'ठीक है आपकी बात! भविष्य मे मैं ध्यान रखूगा।"

विश्वास नही होता। एक दिन मैने पहले भी कहा था।

"अब मै हृदय खोलकर आपको कैसे दिखाऊँ।"

"मैं तो चाहता हूँ, आप यहॉ हृदय को लेकर ही न आया करे। यहॉ तो केवल बुद्धि की ही आवश्यकता होती है।"

"मेरे विचार से हृदय की प्रेरणा के बिना कोई भी कार्य सम्भव ही नही है। बुद्धि का निर्णय तो केवल सिर दर्द ही होता है।"

"देखो राजेश! आप यह न भूलें कि किससे बात कर रहे हो?"

"शिक्षक आप मजदूरो के है, मेरे नही।"

"क्षमा करना। मैंने यू ही कह दिया है।"

समय की नाडी पहचान राजेश ने दिखावे के लिए क्षमा मॉग ली। धर्मार्थी जी को लगा—जैसे अब सीधे रास्ते पर आ गया है। वह बोले—

"आपने क्या पास किया है?"

"मैने इसी वर्ष बी ए. पास किया है।"

"तो फिर आप कोई और नौकरी क्यो नही कर लेते।"

"मिलेगी तो अवश्य करूँगा।"

'नौकरी मिलती नही खोजी जाती है। हाथ पर हाथ रखकर बैठने वाले को कोई बुलाने नही आता।"

"ठीक है आपकी बात। जिसकी गाडी दलदल मे फस जाती है उसी को अनाडी चालक बताया जाता है और जो दूसरो को ठुकरा कर पीछे छोड आगे बढकर जाये उसी की जय जयकार होती है।"

"तो क्या हम असत्य कह रहे हैं।"

"असत्य•नही तो क्या सत्य है आपका कथन। अन्धे के पॉव के नीचे एक बटेर दब जाये, और वह फिर सदैव ही शिकार से खाने का निश्चय कर बैठे, तो भला यह कैसे सम्भव है। आपको जीवन मे अवसर मिल गया इसका अर्थ यह नही, कि सबको ही मिल सकता है।"

"मुझे लगता है तुम कुछ अबोध भी हो। सब हमारी मानते है। कोई हमे उत्तर नही देता, और तुम न जाने क्या कहते चले जा रहे हो।" राजेश उनके ये शब्द सुनकर मन ही मन हँसा। वह बुद्धिवादी सिद्ध करने के लिये सयत भाषा मे उबल पडा—

"देखिये श्रीमान्! जिस असत्य का भय या आतक से कोई विरोध न करे वह असत्य सत्य नही हो सकता। आपने जिस आदर्श के अनूठे जाल मे इन भोले मजदूरो को फसाया हुआ हे उसकी रस्सियाँ अब टूटने वाली हो गई है। स्मरण रखिये, मजदूरो के धैर्य का प्याला अब भरकर छलकने ही वाला है। आज जो असन्तोष की ज्वाला सुलग रही है। वह शीघ्र ही ज्वालामुखी बन कर फूटने वाली है। धर्म की आड मे आप जो कुछ कर रहे है वह अब सामने आता जा रहा है। मजदूरो का शिकार अब आप बहुत दिन नही कर सकते। मै चाहता हूँ, आप अब इस सत्य पर विचार करके ही चले। अन्यथा एक दिन बहुमत की सहानुभूति के स्थान पर आप क्षोभ के पात्र बनकर रह जायेगे।" बहुमत का भक्षण सदैव सम्भव नही है।

धर्मार्थी जी ने राजेश के विषत मे जो कुछ सुना था, वह सत्य रूप मे सामने आ गया। कुछ विचार कर वह बोले—

"देखो बन्धु! तुमने जो कुछ कहा है वह केवल तुम्हारी कथनी मात्र है। तुम न उन मजदूरो का भला कर सकते हो और न ही बुरा। यह तुम्हारी केवल थोथी नेतागिरी है। हम ही है जो इनके लिए कुछ कर सकते है और करना चाहते है। अच्छा होता आप मेरे सहयोगी बन कर ही चलते। पता नही आपको क्या भूत सवार हो गया है।"

"चाहता तो मै भी यही हूँ, कि आप की कुछ सेवा कर सकूँ।

दोनो एक दूसरे को वाक् पटुता से छलने लगे।

"देखो राजेश ! आप एक अध्यापक है और इसीलिये आदरणीय है। मै चाहता हूँ- आपकी मुक्त कठ से प्रशसा करूँ। मुझे दु ख है। आप यह अवसर ही नही देते। आप जिन मजदूरो की बात कर रहे हो इन्हे अभी भली प्रकार नही जानते। ये जब तक अज्ञान है कार्य कर रहे है। ज्ञान होने पर तो ये आप जैसे बुद्धिजीवियो को पल भर मे ही धूल मे मिला देगे। इसीलिये आज मै स्पष्ट बता दूँ- आप इन का सगठन बनाने की अपेक्षा भग करना सीखे, यही उत्तम है।"

"तो फिर आज तक के लिये आप क्षमा कर दे। भविष्य मे ऐसा ही होगा। मै प्रयत्न करूँगा कि कोई भूल न होने पाये।"

"आप समझ गये है न मेरी बात को ?"

"भली प्रकार। अब आज्ञा दीजिये।"

"अच्छी बात है। कल फिर मिलना।"

राजेश फिर वहाँ से चला गया। उसके जाते ही धर्मार्थी जी ने राधा को अपने कमरे मे चपरासी से बुला लिया। वह उससे बोले—

"आज तो सिर मे ही दर्द कर दिया एक मूर्ख ने।"

"कौन था वह मूर्ख ?"

"क्या राजेश के बारे मे कह रहे है आप ?"

"तो क्या आप भी जानती है उसको ?

भली प्रकार। कहिए क्या बात है ?

कैसा आदमी है वह ?"

"ठीक है मेरे विचार से तो बी० ए० पास है।"

"मै जानना चाहता हूँ ?, उसकी प्रकृति कैसी है ?'

"इसकी परख आपको मुझसे अधिक है।"

"हम पुरुषो की नही लडकियो की पहचान करते है।"

"तभी आपने रजनी की पहचान कर ली है।"

"क्या कह रही हो राधा ?"

"तो क्या आजकल आप कम सुनने लगे है ।"

"लडकियो की आवाज तो हम कान न होने पर भी सुन लेंगे ।"

"मुझे तो लगता है, जब से रजनी यहाँ आई है, आप पक्के मिल मैनेजर बन गये है ।"

"ओर इस समय आप क्या देख रही है ।"

कहते हुए धर्मार्थी जी मुस्करा दिये । राधा ने दृष्टि नीचे झुका ली । राधा को दृष्टि झुकाये देख वह बोले—

"आज तो तुम अपने हाथ से चाय पिलाओ राधा ।"

"आपकी रजनी को क्या हो गया है आजकल ।"

"छोडो उसकी बाते । वह लड़की तो बडी ही विचित्र है । उस को तो अम्बाले विधवा आश्रम मे भेज दिया है । मुझे तो लगता है, वह ठहर वहाँ भी नही पाई ।"

"ऐसी क्या बात ही उसमे ?"

"लगता है, वह कही गहरी चोठ खा गई है ।"

"और घायल फिर भी नही हुई । यही है न आपका मतलब ।"

"नही । मेरे विचार से तो वह इस समय पूर्ण रूप से घायल है ।"

"मै समझती नही आपकी बात ।

"क्या करोगी समझ कर । इस समय केवल चाय पिलाओ ।"

"चाय आप पेट भर कर पिये । परन्तु मेरी जिज्ञासा आप को शान्त करनी ही होगी ।"

"जिज्ञासा न रखो । समझ लो वह माँ बनने वाली है ।"

न चाहने पर भी राधा को विचार मग्न होना पडा । उसी समय धर्मार्थी जी ने घन्टी दी चपरासी के आते ही उन्होने चाय लाने का आदेश दे दिया । वह फिर राधा से बोले—

"क्या सोच रही हो राधा ?"

"यही कि रजनी यह क्या कर बैठी ?"

"विधाता ने यौवन को आँखे नही दी राधा।"

"ठीक है आपकी बात। फिर भी मेरे विचार से रजनी ने अन्धी होकर कोई पग नही बढाया है।"

"छोडो व्यर्थ की बातो को। अब यह बताओ कि, आपके क्या समाचार हैं? बिना बुलाये तो पास भी नही आती। बुद्धिमानो ने कहा है—बडों के आगे, और घोडे के पीछे सभल कर ही जाना चाहिए।"

"सिर दर्द न करो राधा! यह बडे छोटो की बात तो प्रात से संध्या तक बहुत बार सुनने को मिलती है।"

चपरासी चाय लेकर आ गया। मेज पर रखकर जब वह बाहर चला गया—राधा ने दो कप चाय तैयार की। जब उसने एक प्याली धर्मार्थी जी के सम्मुख रखी, वह भावुक से होकर बोले—

"आज तो अपने हाथ से पिलाओ राधा।

"मैने ही तो बनाई है।"

"बनाने वाले तो बहुत है हमे तो कोई पिलाने वाला चाहिए।'

"आप विवाह क्यो नही कर लेते?"

"छोडो इस नीरस विषय को। अब चाय पिलाओ।"

राधा उठी और उसने प्याली धर्मार्थी जी के होठो से लगा दी। वह गद्गद् हो गये। चाय की चुस्की लेकर उन्होने धीरे से राधा के हाथ को अपने हाथो मे ले लिया। राधा धीमे स्वर मे बोली—

"क्या कर रहे है आप?"

"मै चाहता हूँ राधा, तुम और निकट आ जाओ।'

"इतनी निकट कि कभी लौट के ही न जा सकूँ। यह भी तो कह दो। क्षणिक निकटता से तो विकटता ही बढती है।"

धर्मार्थी जी के हाथ से तुरन्त राधा का हाथ छूट गया। राधा उसी समय, स्वर मे कुछ कर्कशता सीमाभर बोली—

"जो हाथ छोडना पडे, उसको पकडने से क्या लाभ है श्रीमान्।"

"बैठो राधा! मै कुछ सन्तुलन खो बैठा था।"

राधा खड़ी-खडी सोचने लगी—"कितना कायर और ढोंगी है यह पुरुष ! स्त्री को यह केवल मदिरा की प्याली ही समझता है यह जानता ही नही कि इस प्याली मे मदिरा के साथ ही विष और अमृत दोनों का मिश्रण है। इसे न विष की चिन्ता है, और न अमृत की इच्छा। अधरो की लाली नारी को यह केवल प्याली बनाकर ही पीना चाहता है। क्या इसे शान्ति मिलेगी। नही। कभी नही।

वह धीमे स्वर मे आकृति पर विद्यमान घृणा का दमन कर बोली—

"क्या मै जा सकती हूँ अब ?"

"ठहरो राधा ! आज हम बहुत उदास है क्या तुम शाम को हमारी कोठी पर खाना खाने आ सकती हो।"

"यह तो सम्भव नही है। पिता जी आज्ञा नही देगे।"

"चलो फिर कोई बात नही। तुम जा सकती हो।

"घृणा के भार से दबी सी राधा फिर वहाँ से चल पडी।"

२४

राजेश की स्थिति आजकल उसी व्यक्ति के समान है जो जिस वृक्ष पर बैठा हो, उसे ही काटने लग जाये। वह जहाँ कार्य करता है वहाँ की गतिविधियो से सन्तुष्ट नही है। वह जानता है, कि मुझे यहाँ क्यो रखा गया है। धर्मार्थी जी ने उस दिन स्पष्ट भी कह दिया है। अब वह सोचता है न्याय की दृष्टि से मुझे कार्य छोड देना चाहिए। मजदूरो को बलि का बकरा बनाकर गर्दन कटाने के लिए तैयार करना मेरी प्रकृति से दूर की बात है। धर्मार्थी जी के विचार से मेरी नियुक्ति ही इसलिये हुई है। नौकरी छोड दे तो क्या करे। दिल्ली मे बेकार तो

एक दिन भी बैटना सम्भव नही है। वह कोई निष्कर्ष नही निकाल पाता।

राजेश घर मे आता है पत्नी सौ बार प्यार भरी दृष्टि से देखती है। वह फिर भी असन्तुष्ट है। जब वह घर मे होता है तब भी उसका मन न जाने कहाँ चौकडी भरता फिरता रहता है। कभी रजनी को खोजने चला जाता है। कभी राधा से खिलवाड करने लगता है। कभी इधर-उधर धक्के खाकर जब थक जाता है तो घर मे भी आ जाता है। राजेश्वरी उस समय फूली नही समाती। दिन मे उसे एक दो बार राजेश की वह दृष्टि प्राप्त हो जाती है जिस पर वह उसके सारे क्रोध को न्यौछावर करके फेक देती है। राजेश यह भी सोचता है--जिस स्त्री को मै पत्नी रूप मे पाकर सौ बार फटकारता हूँ वह मेरी कितनी सेवा करती है। यह मेरा धर्म नही है।

राधा के उपकार को भी राजेश यथा समय स्मरण करता है। रजनी और मेरे जीवन की राधा यथा समय समुचित सहयोगिनी बनी है। यथा समय उदास मन को बहलाने का वह साधन है। मकान उसने ही दिलाया है। दिल्ली मे मकान का मिलना भगवान से भी कठिन कार्य है। मकान दिलाने के साथ ही राधा नौकरी की खोज मे भी प्रयत्न शील रही है। और आज भी है। उसमे जो दुर्बलता है। वह तो बडे से बडे व्यक्ति मे पाई जा सकती है। वृहद माता-पिता का वह सब पालन कर रही है। उनके स्वर्गवास के पश्चात् इस दुनियाँ मे उसका कौन होगा ? यही अभाव उसके जीवन को पगु बनाये बैठा है। इसी-लिये वह प्रत्येक स्थान पर अपनापन खोजने लग जाती है। जितना अपनत्व उसको मिल जाय वह उसी से सन्तुष्ट हो जाती है। यह भी उसकी मानवता है।

सुबह के आठ बजे होगे। राधा अभी सोकर उठी है। रविवार को सदैव ही देर तक सोती रहती है। वह चाय पीने के लिये बरामदे मे बैठी ही थी कि उधर से राजेश आ गया। वह देखते ही पुकार पड़ी—

"आइये राजेश बाबू। मै तो स्वयँ ही आने वाली थी।"

"मैने सोचा, आज मै ही चलूँ।"

"बैठिये! चाय तो अभी नही पी होगी ?"।

"यदि पी भी ली हो तो दूसरी प्याली कौन बडा सागर है।"

राधा ने राजेश के विनोद को समझ लिया। वह बोली—

"दो प्याली क्या ? आप तो तीन पी सकते है।"

राजेश कुर्सी पर बैठता हुआ सोचने लगा—ऐसा उत्तर देने की सामर्थ्य कहाॅ है किसी स्त्री मे। राजेश्वरी तो इस भाषा को सोच भी नही सकती। राधा के माता-पिता को जैसे कुछ भी पता नही है। वह दोनो प्रात कालीन भोजन की व्यवस्था कर बाजार चल दिये। उनके जाते ही राधा ने राजेश को चाय की प्याली और कुछ नाश्ता दिया। राजेश चाय की प्याली को हाथ मे थमाकर बोला—

"यदि चाय अच्छी हो तो प्याली एक भी बहुत है राधा।"

"चाय की प्रबल इच्छा होने पर जो प्रथम प्याली पी जाती हैं स्वाद तो उसी मे होता है राजेश बाबू। शेष दूसरी और तीसरी प्याली तो केवल पेट भरने का एक साधन मात्र है।"

"तीसरी प्याली को तो अभी होठ भी नही लगे राधा। फिर भला उसके स्वाद का क्या पता हो सकता है।"

"मैं बता रही हूँ। अब आपको कोई प्याली भी अच्छी नही लगेगी। आपके मुँह का स्वाद एक विशेष प्रकार का बन गया है।"

"कल हमारे पास रजनी आई थी।"

"अर्थात् आपकी प्रथम स्वादिष्ट प्याली। कहो! क्या समाचार है आपकी प्रथम प्याली के। हम से तो वह अब दूर ही रहती है।"

"बात कुछ नही हुई। हमने तो दूर से ही प्रणाम कर दिया।"

"यह आपने अच्छा नही किया। आखिर वह कुछ अपनापन लेकर ही तो आई होगी। अतिथि सत्कार तो आपका धर्म था।"

"उसकी चचलता मेरी भी दृष्टि मे नारी की सबसे बडी शत्रु है।"

"चलो छोडो इस व्यर्थ की सिरदर्दी को। अब एक तीसरी प्याली अपने सीधे हाथ से बनाकर और पिला दो।"

"देखो राजेश! सीधे हाथ से प्याली माँगने वालो को सीधे ही हाथ से पकडना भी चाहिए। मै इस समय इस विनोद को गम्भीरता मे बदलने के लिये विवश हो गई हूँ। आपको स्मरण होगा, मै तीसरी नही, वल्कि आपके जीवन मे आने वाली प्रथम प्याली हूँ। शिक्षा काल मे सर्वप्रथम मेने ही आप को मन की आँखो से देखा था। मैने आप मे क्या देखा? इसका मुझे ज्ञान नही है हाँ इतना पता है कि कुछ देखा अवश्य था। रजनी हम दोनो के मध्य मे आ गई। मै फिर पीछे हट गई। जानते हो क्यो? इसीलिये कि मै आपको प्रसन्न देखना चाहती थी। रजनी आपके मन की मल्लिका बनी और फिर मैने कालेज ही छोड दिया। मै आपको मन ही मन अपना चुकी थी। जव आप मेरे न बन सके, तो मैने दृष्टि को दूर कर लिया। अब विधाता को न जाने क्या मजूर है हम फिर निकट आ गये है अब मै चाहती हूँ कि निकटता जीवन का केवल वरदान बने। सत्य मानो। अभिशाप को ग्रहण करने की अब मुझमे शक्ति ही नही है। इसीलिये मेरी प्रार्थना है आप मुझे तीसरी प्याली न जानकर प्रथम प्याली ही समझे तो उत्तम है।"

"आज तो तुमने सारी ही घुटन का दमन कर दिया है राधा। भविष्य के लिये कुछ भी नही रखा।"

इसीलिये कि अब आप विवाहित है। आपके ही शब्दो मे आप रजनी से प्यार कर चुके है और राजेश्वरी से विवाह। इस स्थिति मे आपका मेरे निकट आना सर्वथा अनुचित है। मै आपको अपना समझती हूँ, किस रूप मे, वह मै स्वयँ नही जानती। मेरे जीवन मे माता-पिता के सरक्षण के अतिरिक्त और कुछ भी नही है। मै इस स्थिति मे आपको किसी भी मधुर सम्बन्ध से बाँधकर जीवन मे चल सकती हूँ। और यदि आप मुझे रागात्मक सम्बन्ध सूत्र मे ही बाँधना चाहते है तो सुन लीजिये। इस बार मै पीछे नही हट सकती। नारी को आप अभी पूर्ण रूप से नही जानते। नारी जिसको एक बार मन का मीत बना

लेती है। उसको जीतना ही चाहती है। यदि उसे हार मिले, तो वह कुछ भी कर बैठने मे सकोच नही करती।

राजेश मन ही मन सोचने लगा—राधा साधारण युवती नही है जिसको रविवार के मनोविनोद का केवल साधन बनाया जा सके। राधा ने जो कुछ कहा, उसकी राजेश को स्वप्न मे भी आशा न थी। राधा के अन्दर कितना बडा ज्वालमुखी सुलग रहा है इसका उसे आज ही आभास हुआ है वह कुछ सभल कर बोला—

"तुमने आज जो कुछ कहा है, उसका मेरे पास एक ही उत्तर है राधा! मै चाहता हूँ कि किसी प्रकार भी अपने अतीत को पूर्ण रूप से भूल जाऊँ। आज मै जान गया हूँ कि तुम मेरी बिखरी हुई दृष्टि को समेट कर अपनी ओर खीच सकती हो। सचमुच यदि तुम इस दृष्टि से कुछ बलिदान कर सको, मै अपना सर्वस्व ही तुम्हारे ऊपर न्यौछावर कर दूं।"

"क्या आपने चॉदनी रात मे सागर के तह पर खडा होकर कभी देखा है, नही देखा तो कभी देखना। प्रत्येक लहर तट से टकरा कर लौट जाती है।"

"तुम्हारा मतलब यही है कि सागर चॉद को हृदय मे छुपाकर तट से टकराता है। और शान्ति पा लेता है।

"जी हॉ। रजनी आपके हृदय सागर का चाँद है और राजेश्वरी तट। फिर भी आप अशान्त है। अब बताइये मै आपकी किस प्रकार जीवन साथिन बन सकती हूँ। थोडा व्यावहारिक पक्ष पर भी तो विचार कर लो।"

"तो क्या तुम मेरे जीवन का बल नही बन सकती।"

"मै तो आप से भी अबल हूँ राजेश।"

"अच्छा आज्ञा दो। अब चले।"

राजेश उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वहॉ से चला आया। उसके जाते ही राधा को लगा—जैसे राजेश कुछ क्रुद्ध होकर गया है।

वह भी द्वार बन्द कर राजेश के पास ही पहुच गई। देखते ही राजेश बोला—

"आओ राधा ! क्या दया उमड आई। बैठो।"

"दु ख तो यही है आप दोनो से दया, अबल से बल और काफर से वीरता की अपेक्षा कर रहे है।"

"मै क्या कर रहा हूँ और क्या करना चाहता हूँ, इसका तो मुझे भी ज्ञान नही है राधा देवी। तुम्हारे पास से आता हुआ सोच रहा था कि अब मै इस कार्य को छोड कोई ऐसा कार्य करूँ जिसको करते हुए जीवन का बलिदान हो जाय। अपना अधिकार तो पाने की अब जीवन मे आशा नही है, सोचता हूँ दूसरो के अधिकारो का ही समर्थन करने लगूँ।"

"सूझ तो अच्छी है आपकी। क्या करेगे भविष्य मे ?"

"मिल मजदूरो के अधिकारो की सुरक्षा।"

"आप भूल न करो। आपके पाँवो मे बेडियाँ पडी है।"

"वह और कहो, लोहे की है सोने की नही।"

"बेडियाँ तो बेडियाँ ही है। चाहे वह सोने की हो और चाहे लोहे की।"

"छोडो इस व्यर्थ के विवाद को। अब यह बताओ चाय पियोगी या नही।"

"यदि आप पिलायेंगे तो अवश्य पिऊ गी।"

राजेश ने अपनी पत्नी को चाय बनाने को जैसे ही कहा, राधा भी रसोई मे चली गई। वह राजेश्वरी से बोली—

"लाओ भाभी जी आज मेरे हाथ की चाय पीने दो।"

"घर पर तो तुमने अपने ही हाथ की पिलाई होगी। यहाँ मुझे ही बना लेने दो। किसी का अधिकार नही छीना करते।"

व्यग को समझकर भी राधा ने सुनी अनसुनी करते हुए कहा—

"मै भी तो आपकी छोटी बहन हूँ।"

'मुझे किसी को बहन या भाई बनाने की भूख नही है।"

"राधा अपना-सा मुँह लेकर उठी और चुचचाप चली गई। राजेश की समझ मे ही नही आया कि क्या हो गया है उसने राधा को रोका किन्तु वह न मानी। राधा के मुख पर कुछ क्रोध की रेखायें उभर आई थी।"

"क्या कह दिया तुमने राधा को ?"

"कहना मुझे क्या है। मुझे तो इस लडकी का यहाँ पर आना-जाना अच्छा नही लगता। चाय बनाना चाहती थी। मैने मना कर दिया।"

"मै पूछता हूँ तुम इस लडकी से इतनी क्यो जलती हो।"

"यह भी कोई पूछने की बात है जब यह मेरी चीज पर गिद्ध जैसी दृष्टि लगाये हुए है, तो फिर मुझे भी जलन हो जाती है।"

"तुमने तो एक दिन कहा था—दूसरा विवाह कर लो।"

"यह तो अब भी कह रही हूँ। इस प्रकार लुक छिप कर मिलने से तो विवाह करना ही अच्छा है।"

"अच्छा अब चुपचाप खाना बना लो।"

"पहले आपके सिर की मालिश करूँगी। फिर खाना बनाऊँगी। रोज नही तो इतवार को तो तेल डाल ही लिया करो सिर मे।"

और फिर राजेश मालिश कराने के लिये कुर्सी पर बैठ गया।

२५

धर्मार्थी जी ने राजेश को एक फोडा समझकर पहले उपचार किया। जब वह न दबा तो उसे काटकर फेंक दिया। एक दिन सवेरे की कक्षा मे जब राजेश पढाने पहुचा उसे सूचना मिली-हमने दूसरे अध्यायपक का प्रबन्ध कर लिया है। आपको कार्य मुक्त कर दिया गया है।" सूचना पाकर राजेश विचलित न हुआ। यह सब उसके लिये प्रत्याशित घटना थी। उसने उस दिन उपस्थित मजदूरो से कह दिया— मै अब आप लोगो की चौगुनी सेवा करूँगा। आपसे मिलने प्रतिदिन आऊँगा।

अब राजेश कम से कम आठ घन्टे मिल के क्वार्टरों मे रहता है. प्रत्येक के घर जाता है। सबके हृदय मे नवीन भावो का जागरण करता है। विचारो मे नवीनता को जन्म देता है कुछ पहाडियो को छोड कर शेष मजदूर सब उसके साथ है। मजदूरो की सगठित सभा की गति-विधिया जोरो पर हैं। राजेश सगठन सभा से सौ रुपये मासिक लेता है। सौ रुपये उसे सध्या को किसी निजी विद्यालय मे पढाने से मिल जाते है। उसका कार्य पहले से ठीक चल रहा है। अब केवल इतना परिवर्तन अवश्य है कि धर्मार्थी जी ने उसके पीछे चार गुडे लगा दिये हैं उनसे उसे थोडा सभल कर चलना पडता है। यथा समय वह गुडो और पहाडियो से भी मिलने का प्रयत्न करता है। वह जानता है— ये अभी अन्धे है। आँखे होने पर मार्ग की पहचान कर ही लेगे.

राजेश के सम्मुख जटिल प्रश्न यह है कि इन मजदूरो मे जोमिथ्या

भ्रान्तियाँ जन्म पा गई है उनका निराकरण कैसे किया जाये ? धर्मार्थी जी ने उनको विचित्र सस्कारो मे ढाल दिया है। कुछ बावली और कुछ भूतो की मारी, यही दशा है मजदूरो की। कुछ उनकी अपनी अनेक दुर्बलता सस्कार वश ही होती है। कुछ धर्मार्थी जी ने नई उत्पन्न कर दी है। सब ही मजदूर मानते है कि कोई भी आदमी पूर्व जन्म के पाप और पुन्य के फल से छोटा या बडा होता है। ऐसी कितनी ही मान्य-तायें है जिनका आमूल विनाश किये बिना मजदूरो का उत्थान हो ही नही सकता।

राजेश अब मिल की छुट्टी वाले दिन विशाल सभा का आयोजन अवश्य करता है। आज भी मिल की छुट्टी है। राजेश ने चार बजे एक मजदूर सभा की व्यवस्था की है। छुट्टी वाले दिन धर्मार्थी जी का मजदूरो के लिये मनोरजन कार्यक्रम का निश्चित समय छह बजे है। आज उनको पता चल गया है कि राजेश ने चार बजे मजदूरो की एक सभा बुलाई है। इसीलिये उन्होने समय बदल कर चार बजे ही कर दिया। वह जानते है कि मजदूर मनोरजन को छोड उस मूर्ख राजेश की बकवाश सुनने थोडे ही जायेगे। हुआ भी यही। जब राजेश मिल पहुँचा ठीक चार बजे थे। उन्होने देखा— वहाँ पाच छह प्रमुख सहयोगी ही विद्यमान थे। राजेश के पहुँचते पर उपस्थिति पचास तक पहुँच गई। राजेश ने कार्यक्रम मे कोइ परिवर्तन नही किया निश्चित समय पर भाषण आरम्भ करते हुए उसने कहा—

"प्यारे भाइयो चार मास मैने आप सबके मध्य रहकर यही देखा है, कि आप पूर्ण रूप से अन्धे है। दुनियाँ बदली, पर आप न बदल पाये। पूँजीपति खटमल और जोक के समान आपका रक्त चूस रहे है। आपको जैसे कुछ भी पता नही है। आप दिन रात तेली का बैल बनकर पूंजीपतियो के आर्थिक कोल्हू मे जुते रहते है। आप को जीवित रहने के लिए कुछ दिया जाता है। इसीलिए कि आप इस कोल्हू को खीचते रहे। यह मनोरजन जिसका प्रति छुट्टी मे आपको गिलास भरकर मिलाया जाता है पर ऐसी मदिरा है, जिसको पीकर

आप कुछ देर के लिये सब कुछ भूल जाते है।

जो कुछ नही करते, वह सब कुछ पाते है। जो दिन रात श्रम करते है वह कुछ भी नही। कभी इस बारे मे भी तो सोचो। तुम नौकर हो, और वह मालिक। तुम्हारी कमाई खाते है, और तुम्हारे ऊपर ही शासन करते है। जिस कपडे को आप तैयार करते है, वह आपको पहनने के लिए कभी नही मिलता। आप जितनी बडी कोठरी मे दस मजदूर निर्वाह करते हो, उससे सेठो के स्नान गृह भी बडे है। आठ घन्टे तक रुई का भक्षण करके आप गले को स्वच्छ करने के लिए छटाँक भर गुड भी नही पा सकते। इसके विपरीत इन ढोगी मालिको की कोठरियो मे पडे हुए फल सडते रहते है। इनके कुत्तो का भी खर्च आपके परिवार से अधिक होता है। मै चाहता हूँ आप इस अत्याचार के विरोध मे अपनी आवाज को ऊँची उठाये। तभी बडो के कान खुलेंगे।

बहुत से भाई समझते है—सबको छोटा या बडा भगवान बनाता है। मै इस मत का विरोधी हूँ। भगवान ने हमे बनाया है यह ठीक है। उसने हमको छोटा या बडा बनाया है, यह बिल्कुल गलत बात है। जन्म और मृत्यु के समय सब एक जैसे ही होते है। यह अन्तर तो छोटे बडो मे दिखाई देता है। समाज को आर्थिक ढाँचे के दोष पूर्ण होने के कारण है। पूर्व जन्म के फल की दुहाई देने वाले इन पूंजीपतियो से कभी पूछ कर देखो कि हमने भगवान की क्या घोडी खोल ली है जो दिन रात श्रम करके भी हम भूखे मरते है। सत्य मानो मनुष्य अपने भाग्य का स्वयँ निर्माण करता है। किसी युग मे राजा भी यही कहा करते थे। आज आप देखिये, उनके वश भी नष्ट कर दिये गये है। इसमे दुनियाँ को कितना लाभ हुआ है कभी सोचा है।

धन्यवाद कहकर राजेश भाषण समाप्त कर जैसे ही बैठा, एक मजदूर बोल पडा—

"मिल किसका है, और हमारा क्या अधिकार है। इस विषय पर विचार करने वाले आप कौन है श्रीमान् जी। आप भी तो सौ रुपये

महीने इन मजदूरो की कमाई से खाते है। गन्ना जहाँ भी जायेगा, उसका रस चूसा ही जायेगा।"

राजेश खडा हुआ और विनम्र भाव से बोला—

"आपका कथन किसी समय तक सत्य है मेरे भाई। मैं आठ घन्टे आप भाइयो के साथ रहता हूँ, तब सौ रुपये लेता हूँ। इससे पूर्व जब चार घन्टे काम करता था तो मुझे डेढ सौ रुपये मिलते थे। और यदि मै मिल मालिको के हाथ का खिलौना बन जाता तो और भी अधिक पा सकता था। यदि आप भाइयो को यह सौ रुपये का भार दिखाई देते है तो भविष्य मे मै एक पैसा भी नही लूंगा। और बोलिये आपको क्या आपत्ति है?"

श्रोताओ मे एक और मजदूर खडा होकर बोला—

"आप इसकी बातो पर ध्यान न दे। यह धर्मार्थी जी का भाड़े का टट्टू है। इस समय यह बात इसकी नही है।"

राजेश समय की गति को पहचान गया। शान्ति स्थापना के लिए वह बोला—

'ऐसा न कहो भाई। यह भी हमारा साथी है। इसके भी अपने अपने विचार है सभा मे सबको ही अपने विचार प्रकट करने का पूर्ण अधिकार है। हो सकता है एक दिन इनके विचार बदल जाये।"

राजेश के इस कथन से प्रथम मजदूर लज्जित सा होकर बोला—

"मै माफी चाहता हूँ अपनी भूल की। सचमुच मैने जो कुछ कहा है किसी के सिखाने से ही कहा है।"

विवाद मे छह बज गये। उसी समय ड्रामा समाप्त हो गया। सारे मजदूर कुछ ही देर मे एकत्र हो गये। राजेश ने समय का लाभ उठाया अपने विचारो को सक्षेप मे मजदूरो के सम्मुख पुन रखा और फिर कार्य सूची तैयार की गई। वहाँ से जब राजेश चला साढे सात बज चुके थे। उसके जाते ही धर्मार्थी जी वहाँ आ गये। उन्होने यह व्यवस्था पहले ही की हुई थी। कुछ देर उन्होने अपनी खिचड़ी पकाई.

"भाइयो ! कुछ देर पहले जो सज्जन नेतागिरी करके यहाँ से गये है। आप शायद उनसे परिचित नही है। वह न हाथ के सच्चे है और न ही चरित्र के पक्के। इसीलिये मैने उन्हे यहाँ से निकाल दिया है। मुझे दु ख होता है वह मेरे परिवार के घरो मे खुला साँड बन कर घूमता है। यह जिन सेठ जी की बुराई करता है यह मिल उन्ही का तो चलाया हुआ है। पेड के लगाने वाले है वे और हम है इसके माली। इससे फल हमको भी खाने है। आपको मैने कितनी बार कहा है। मै आपका बडा भाई हूँ। जो कठिनाई हो आप मुझसे कहे। मै सेठ जी के पास पहुचाऊँगा। मुझे ऐसे बिचौलिये नही चाहिएँ। हम और आप एक है। कहता है सब बराबर होने चाहिएँ। भला यह तो बताओ जब हाथ की पाँचो उँगलियाँ भी बराबर नही तो फिर आदमी सब कैसे बराबर हो सकते है।

धर्मार्थी जी का भाषण चल ही रहा था कि एक ओर से उपस्थित श्रोताओ मे भगदड पड गई। धडाधड पत्थरो की बौछार से भागते हुए भी कई मजदूरो के चोटे आई। धर्मार्थी जी की भी नाक पर एक पत्थर लगा। वह फिर चारो गु डो से घिरे हुए वहाँ से दुम दबाकर भाग गये। बात यह हुई—राजेश बीच मे से ही लौट आया था। कुछ मजदूर जो उसके पक्के साथी है उन्होने एक पल मे ही यह योजना बनाकर कार्यान्वित कर दी। राजेश ने मना भी किया किन्तु वह न माने।

और फिर दस मिनट मे ही सभा स्थली शमशान सी बन गई।

राजेश जब घर पहुचा आठ बज चुके थे। राजेश्वरी उसकी प्रतीक्षा मे सदैव के समान द्वार पर खडी थी। राजेश को देखते ही वह बोली—

"आज तो आपको बहुत देर हो गई। खाना भी ठडा हो गया।"

"व्यर्थ की बाते न करो। पानी लाओ।" राजेश के स्वर मे उत्तेजना थी।

राजेश्वरी पानी देकर रसोई मे चली गई। जब वह थाली लगाकर

लाई, राजेश बिना हाथ धोये खडा था। वह भी थाली लेकर चुपचाप उसके पास खडी हो गई। राजेश ने कर्कश स्वर मे फिर कहा—

"खडी क्यो हो ? थाली रखकर बैठ जाओ।"

राजेश्वरी ने हार्दिक श्रद्धा व्यक्त की—

"आप इतना काम न किया करे। अभी हमारे कौन बच्चे रो रहे है।"

"कहा है न! थाली रख दो और अपना काम करो।"

"आपकी सेवा से बडा और मुझे क्या काम है ?"

"मुझे तुम्हारी सेवा की भूख नही है। ले जाओ थाली को।"

राजेश के इस अकारण क्रोधावेश को देख राजेश्वरी की आँखो मे आँसू छलक आये। वह थाली को रसोई मे रखकर सिसकियाँ भरने लगी। राजेश कुछ देर चुपचाप खडा रहा। उसे किसी अज्ञात शक्ति से एक झटका सा लगा। झटके साथ ही, उसके पाँव रसोई की ओर बढने लगे। रसोई मे पहुँच उसने राजेश्वरी को दोनो हाथो से ऊपर उठा लिया। उसने जैसे ही राजेश्वरी को हृदय से लगाया वह गद्‌गद् हो गई। उसकी आँखें गीली थी परन्तु मुख पर मुस्कान इधर-उधर लुढक रही थी। राजेश्वरी की देह एक ही क्षण मे ढीली हो गई। वह जैसे फिसल पडी हो। उसने राजेश के पाँवो पर सिर टिका दिया। राजेश फूट पडा—

"मुझे क्षमा कर दो मेरी राजो। मेरी आँखो मे दिल्ली की रगीन तितलियो के पखो की छाया ने पडकर मुझे अन्धा सा बना दिया था। अब तुम्हारे अनुराग की प्रकाश किरणे उस अन्धकार को लील गई है। सत्य मानो अब वह छाया इन आँखो के कभी निकट भी नही आयेगी।"

राजेश्वरी उठी और राजेश के मुख पर हाथ रख कर खडी हो गई। उस समय उसकी दृष्टि राजेश की आँखो मे गडी हुई थी।

"तो क्या अब मुझे बोलने भी नही दोगी ?"

राजेश्वरी कुछ न बोल पाई। उसने अपने दोनो हाथ फिर राजेश की ग्रीवा मे डाल दिये। दृष्टि से दृष्टि अब भी टकरा रही थी। राजेश

ने सीधे हाथ की एक उगली से राजेश्वरी के कपोल को छूते हुए कहा—

"अच्छा अब भोजन एक साथ करेगे ' खाना जल्दी लाओ ।"

राजेश्वरी उठी और रसोई से थाली लगा कर ले आई। राजेश ने पहला कौर अपने हाथ से उसी को खिलाया ।

राजेश्वरी को लगा—जैसे यह मेरे जीवन की सबसे सुन्दर घडी है ।

२६

शब्द बाण का घाव तीर और तलवार से भी अधिक होता है । रजनी ने यह पढा था । उस दिन राजेश के शब्दो से यह अनुभव भी कर लिया। जब वह राजेश से प्रताडना पाकर सडक पर आई उसे चक्कर सा आ गया । उसके पाव लडखडाने लगे । जैसे उस पर वज्राघात हो गया हो । राजेश के शब्द "मै तुम्हे नही जानता" उसकी श्रुतियो मे न भरने वाला घाव कर रहे थे । राजेश से यह आशा उसे स्वप्न मे भी न थी ।

जीवन पथ मे निरन्तर पाषाणो से टकराने के पश्चात् पगो मे कठोरता आ जाती है । रजनी तो न जाने कितनी चट्टानो से टकरा चुकी है । सदैव के समान वह सभली । उसने साहस बटोर कर आगे बढने का निश्चय किया । कुछ देर तक वह भारी पगो से सडक पर यू ही आगे बढती रही । वह इस समय केवल एक ही बात सोच रही थी अब मै कहाँ जाऊँ ? एक बार उसने सोचा मिल के मालिक सेठ करोडीमल से मिलूँ । सेठ लोग चाहे दिखावे के लिए ही क्यो न हो, परन्तु होते है दयावान । जब वह शिक्षा काल मे छात्रवृत्ति दे सकते हैं, तो क्या कोई कार्य नही देगे ।

रजनी नें अपने इस निश्चय का स्वयँ ही विरोध कर दिया । धर्मार्थी के होते हुए सेठ जी से कोई भी आशा व्यर्थ है। दूसरे वह अब इस स्थिति मे है । भला सेठ जी धर्म के कट्टर समर्थक मुझे माता बनते कैसे देख सकेंगे । मै तो अब उनकी दृष्टि मे केवल एक दुराचारिणी ही रह गई हूँ । वह फिर करोल बाग की ओर बढती ही चली गई । जिस समय वह अजमल खाँ पार्क के पास पहुँची, ग्यारह बज चुके थे। उसने निश्चय किया—थोडी देर यहाँ शान्ति से बैठकर भावी निश्चय की व्यावहारिकता पर विचार करूँगी ।

रजनी एक पेड की छाया मे हरी घास पर बैठ गई। वहाँ बैठते ही उसे कुछ शान्ति सी मिली । चिन्तन के भार से जब उसका मस्तिष्क थक जाता है, उसे सदैव नीद आ जाती है । किन्तु आज उसे प्रकृति नटी ने थपकिया देकर सोने के लिए विवश कर दिया। वह गहरी नीद मे डूब गई । लगभग दो घण्टे तक वह अचेत सोती रही । एक बजे जब वह उठी, उसने ऐसा देखा—हाथ मे सोने की चूडी न थी। कब निकली चूडी । उस की समझ मे नही आया। कुछ देर वह सज्ञा शून्य सी शान्त बैठी रही। चूडियाँ राजेश के सुहाग की स्मृति थी। एक सवेरे बिक गई और दूसरी इस समय किसी की भेंट चढ गई। चूडियों के सोने का आर्थिक सकट इतना न था जितना रजनी इसे मानसिक प्रश्न समझ कर हत्प्रभ सी हो गई थी ।

रजनी को इस समय राजेश पर भी कुछ देर के लिये क्रोध उमड पडा । सचमुच राजेश ने मेरे जीवन को ऐसी विषय पहेली बना दिया है, जिसको अब विधाता भी न सुलझा सकेगा । हल्की फुल्की मुस्कानो से मेरे सर्वस्व को छीनकर राजेश अब चैन की बशी बजाना चाहता है। जो सुख देता है, उसे दु ख भी देने का अधिकार है। वह स्मरण कर रजनी का क्रोध कुछ शान्त हो गया। उसने निश्चय किया— एक दिन मै राजेश की आँखो से भ्रम के पर्दे हटाकर दम लूँगी ।

रजनी साहस बटार कर उठी, और पार्क मे ही दूसरे स्थान पर बैठ गई। जैसे वह उस स्थान को अशुभ मान बैठी हो जब वह दूसरे

स्थान पर सिर झुकाये बैठी थी, उस समय एक युवक उसके पास आया। वह रजनी से बोला—

"कहिए देवी जी ! क्या सारा दिन पार्क मे ही बिताना है ?"

रजनी ने दृष्टि उठाकर ऊपर देखा, और एक ही क्षण मे फिर दृष्टि झुका ली। उसकी लुभावनी आकृति को देख युवक का हृदय उमड आया। उसके स्वर मे कोमलता आई।

"देखो बहन। पार्क मे भले घर की लडकियो को सोना नही चाहिए। यहाँ सब ही प्रकार के आदमी आते है।"

"ठीक है मेरे भाई। अब मैं आपसे पूछती हूँ, जिसका कोई घर ही न हो वह सोने के लिए कहाँ जाये। जिस पृथ्वी पर मैं सो रही थी, आखिर वही तो है सबकी अन्तिम सेज। फिर बताओ मैंने क्या अपराध किया है।

युवक ने देखा— रजनी की आँखो मे आँसू उबलना चाहते है और वह उनका बलपूर्वक दमन कर रही है। वह बोला—

"लो बहन अपनी चूडी। यह तुम्हे एक शिक्षा दी है। भविष्य मे पार्क मे कभी न सोना।"

"धन्यवाद भाई। सचमुच तुमने बडा उपकार किया है।"

युवक वहाँ से चला गया। उसके जाते ही रजनी को लगा—ईश्वर के घर न्याय है। मेरी चूडी मिल गई। इसका सीधा अर्थ है जिसके सुहाग का चिन्ह ये चूडी है, वह भी मिलकर ही रहेगा। रजनी फिर वहाँ से उठकर चल पडी। उसने निश्चय किया इस समय कुछ भोजन कर सध्या को धर्मशाला मे रहूँगी।

रजनी ने सडक पर चलते हुए एक फल वाले से एक गिलास सन्तरे का रस पिया। उसको पीकर वह सडक पर चलती ही चली गई। वह चलती-चलती तेलीवाडे पहुँच गई। धर्मशाला का वहाँ उसने पता पूछा। उसे एक छोटी सी धर्मशाला बहुत खोज के पश्चात् मिल गई। धर्मशाला किसी सेठ की थी, और उसके प्रबन्धक एक वृद्ध ब्राह्मण थे। वह उनसे साहस बटोरकर बोली—

"मुझे धर्मशाला मे ठहरना है बाबाजी।"

"धर्मशाला तो है ही ठहरने के लिए बेटी। अब तुम यह बताओ तुम्हारा सामान कहाँ है ? और तुम अकेली क्यो हो ?"

रजनी इस कथन को सुनकर कुछ देर हत् वाक्य बनी रही। वह क्या कहे ? उसकी समझ मे ही नही आया। उसको शान्त देख पडित जी उसकी आकृति को पढते हुए से बोले—

"बोलती क्यो नही बेटी ? नाम पता तो लिखवाना ही होगा।"

इस समय रजनी की आँखें आँसुओ से भर गई। वह बोल कुछ न पाई। वृद्ध ने विश्वास कर लिया। इस युवती के जीवन मे कोई रहस्य अवश्य है। इसको ठहराने से पहले जानकारी भी आवश्यक है। वृद्ध अनुभवी ब्राह्मण के मन मे रजनी के प्रति इस समय करुणा भी उमड रही थी। वह धर्म सकट मे पड गया। कुछ विचार कर वह बोला—

"देखो बेटी। यहाँ ठहरने के लिए जो नियम है मै उनका पालन करूँगा। और यदि तुम मुझे रोने का कारण बता दो, तो जो मुझसे बन सकेगा, तुम्हारी सहायता भी करूँगा।"

रजनी ने फिर सक्षेप मे अपनी व्यथागाथा वृद्ध को सुना दी। वृद्ध की अनुभवी आँखो ने भी कुछ पढा। उस समय उसको विश्वास हो गया। रजनी का प्रत्येक शब्द उसके हृदय पर अकित होता हुआ चला गया। उसने मन ही मन निश्चय किया। क्यो न इसको घर पर ठहराया जाये।" कुछ विचार कर वृद्ध बोला—

"यदि उचित समझो तो तुम बेटी बनकर घर हमारे साथ भी ठहर सकती हो। धर्मपुत्री स्वीकार कर मै जो हो सकेगा, तुम्हारी और सहायता भी कर सकूगा और वहाँ तुम्हे पिता के साथ माता भी मिल जायेगी।"

रजनी को जैसे तिनके का सहारा मिल गया हो। कुछ विचार कर वह श्रद्धा भरे स्वर मे वृद्ध से बोली—

"कहाँ है पिताजी ! आपका घर ?"

"मकान क्या है वह भी एक छोटी सी कोठरी है। बारहटूटी

पर। चालीस वर्ष से हम उसी मे रहते है। किराया पाँच रुपये है। इसीलिए उसमे दिन बिता रहे है हम दो प्राणी है। तुम्हारे बहन भाई सात बच्चे थे, परन्तु आँखो के सामने कोई नही। सब भगवान के प्यारे हो गये। कहो तो तुम्हे तुम्हारी माता से मिला दूँ।"

रजनी अपनी भूल कुछ देर तक वृद्ध ब्राह्मण के विषय मे सोचती रही। रजनी ने पाया सचमुच दुनियाँ मे एक से अधिक एक दुखिया पडा है। रजनी के मन के एक कोने मे कही पर कुछ शका अकुरित थी। उसने उसका दमन किया। वह जानती है—विश्वास देकर ही पाया जा सकता है। वह बोली—

"यह तो मेरा सौभाग्य होगा बाबा, जो आप जैसे माता-पिता की सेवा का अवसर मुझे मिल जाय। कितनी देर मे चलोगे आप?"

"अभी चलो बेटी! पहले तुमको ही घर पर छोड आता हूँ।"

दोनो फिर वहाँ से चल पडे। दस मिनट मे जब वह दोनो कोठरी मे पहुँचे वृद्धा खाना बनाकर लेटी हुई थी। वृद्ध बोला—

"अरे देखो! हम तुम्हारे लिए पढी-लिखी बेटी लाये है।"

वृद्धा ब्राह्मणी ने अपने दोनो खुर्दरे हाथ रजनी के सिर पर टिका दिए। रजनी को इस समय जो कुछ अनुभव हुआ, वह उसे जीवन का प्रथम अनुभव जान पडा। यह सुख उसे राजेश के हाथो से भी कभी अनुभव नही हुआ था। उसने कुछ नया जीवन सा पा लिया वहाँ पहुँच उसे विश्वास हो गया। यहाँ कोई छल या कपट पास-पडौस मे भी नही है। वृद्ध और वृद्धा दोनो के मुख पर वात्सल्य भावना का सागर उमड रहा था। वृद्धा फिर रजनी के बच्चे के समान ही अपने पास बिठाकर उससे बातो मे खो गई। वृद्ध ने बात की श्रखला भग की—

"पहले खाना तो बनाओ। बातें पीछे ही कर लेना।"

"खाना तो बना रखा है। आप भी अभी खायेगे क्या?"

"पहले बिटिया को खिलाओ। मै तो अभी धर्मशाला जाऊँगा।'

"नही पिताजी! मै आपके साथ ही खाऊँगी।"

"नही बेटी हमारी चिन्ता मत करो। तुम खाना खालो।"

रजनी इस समय सोचने लगी—यह देवता भी इसी दुनियाँ मे रहते है, जिनको दूसरो की चिन्ता मे अपनी चिन्ता ही नही है विपरीत इसके वह भी मानव समुदाय इसी दुनियाँ मे है जो दिन-रात दूसरो को चिन्तित बनाये रहते है। वह बोली—

"आप कितनी देर मे आयेगे पिताजी ?"

"मुझे तो एक घन्टा लग जाएगा बेटी।"

"कोई बात नही। मै आपके साथ ही खाऊँगी।"

वृद्ध चला गया। उसके जाते ही रजनी ने वृद्धा को भी सारी कहानी कह सुनाई। दूसरी ओर वृद्धा ने भी आप बीती सक्षेप मे रजनी के सम्मुख प्रस्तुत किया। रजनी ने वृद्धा को धैर्य बँधाया। बातो मे एक घण्टा पल भर मे ही बीत गया। उसी समय वृद्ध भी वहाँ आ गया। वह आते ही बोला—

"अभी बाते ही कर रही हो। लाओ खाना दो जल्दी। बडी भूख लगी है। बिटिया भी तो भूखी होगी।"

दोनो खाना खाने बैठ गये। उसी समय वृद्ध बोला—

"देखो बेटी। सुख और दु ख के अद्भुत मिश्रण का नाम ही तो जीवन है इसीलिये जीवन की यात्रा मे हमे फूल और शूल दोनो से प्यार करना चाहिए। आपत्तियो से घबराने वाला व्यक्ति जीवन यात्रा के महत्त्व को जान ही नही सकता। सृष्टि के अज्ञात चित्रकार ने दु ख निरपेक्ष सुख का निर्माण ही नही किया।"

"बडा कठोर है इस सृष्टि का निर्माता बाबा।"

"वृद्धा से चुप न रहा गया। वह बोली—

"बेटी को खाना खा लेने दो। तुमने तो बीच मे ही पढाई आरभ कर दी। बहुत दिन पडे है इसके लिये तो।"

"सारे जीवन मे यह प्रथम अवसर मिला है कि किसी को बच्चा कहकर शिक्षा दूँ। और बीच मे ही टोक दिया।"

वृद्धा भी फिर बातो मे जुट गई और तीनो उस रात बारह बजे सोये।

इस रात्री रजनी ने कोई स्वप्न नही देखा।

२७

अगले दिन रजनी जब सोकर उठी सात बज चुके थे। वृद्धा उस समय पूजा पाठ से निवृत होकर खाना बना रही थी। वृद्ध धर्मशाला जाने के लिए तत्पर थे। रजनी ने उठते ही दोनो को हाथ जोडकर प्रणाम किया। प्रणाम का उत्तर दे वृद्ध रजनी से बोला—

"तुम कही जाओगी तो नही, बेटी ?"

"जाना तो मुझे कही नही है पिता जी। एक विचार अवश्य है, यदि आज्ञा हो तो प्रस्तुत करूँ ?"

"कहो बेटी ! आज्ञा को क्या बात है। हम तो चाहते है तुम हमारे पास निश्चित रहो। रूखी-सूखी जो हम खायेगे तुम्हे पहले खिलायेगे।"

"मैं चाहती हूँ कोई नौकरी खोज लूं। इसी विषय मे कही जाना है।"

"मै तो इस पक्ष मे ही नही हूँ कि लडकियाँ नौकरी करे। मुझे इस समय सत्तर रुपये मिलते है। इनसे हम तीनो का निर्वाह हो ही जायेगा। फिर बताओ तुम्हे, नौकरी की क्या आवश्यकता है ?"

"ठीक है पिता जी। फिर भी मै समझती हूँ, मुझे नौकरी करनी ही पडेगी। अब से ही खोज करूँगी तब कही महीनो मे जाकर नौकरी मिलेगी।"

"जब जरूरत होगी तो देखा जायेगा। अभी पानी से पहले पाल क्यो बाँधती हो। अभी तो कार्य चल ही रहा है।"

वृद्धा ने कुछ वृद्ध का समर्थन किया—

"हाँ बेटी ! अभी तुम्हे नौकरी नही करनी है।"

"देखो माता जी ! जमाना अब बदल गया है। लडकियाँ अब प्रत्येक क्षेत्र मे कार्य कर रही है। आप देखेगी, सेना मे भी लडकियो का प्रवेश हो गया है। फिर बताइये मै नौकरी कैसे न करूँ। मैने बी० ए० पास किया है। इसीलिये मुझे तो नौकरी करनी ही चाहिए। ईश्वर ने जहाँ आपको सन्तान दी है, वही पर मुझे भी तो माता-पिता की सेवा का शुभ अवसर दिया है। इसीलिए मुझे इस अवसर का लाभ उठाना चाहिए।"

वृद्धा उठी और वृद्ध के कानो मे चुपके से कुछ कहा। पत्नी की सुनकर वृद्ध रजनी से बोले—

"देख लो बेटी ! इस समय तुम नौकरी की स्थिति मे नही हो। चार महीने पश्चात् ही कर लेना।"

रजनी समझ गई कि माता जी ने कानो मे क्या कहा है। उसकी गर्दन लज्जा के भार से झुक गई। उसको शान्त देख वृद्धा बोली— "चलो फिर खोज लो बेटी। नौकरी मे बुराई भी क्या है। आजकल तो वह स्त्रियाँ भी नौकरी करती है, जिनके पति हजारो कमाते है। हमारा तो आगे चलकर खर्च भी बढने वाला है। आज तीन है तो आगे चार हो जायेगे। इतना ध्यान रहे जल्दी लौटना।"

इस समय वृद्धा के पोपले मुख पर हल्की मुस्कान थी। वृद्ध न जाने कौन सी मधुर कल्पनाओ मे खोये हुए थे। रजनी की दृष्टि अब भी नीचे झुकी हुई थी। वृद्ध ने विषय परिवर्तन किया—

"अब तुम खाना बन्द करके चाय तो बनाओ। बातो मे यह भी भूल गई कि बेटी को चाय भी पिलानी है। जानती नही हो आजकल के युवक और युवतियाँ तो चाय के बिना चल ही नही सकते। रजनी के सिर मे तो दर्द भी हो रहा होगा। जल्दी करो।"

"ऐसी बात नही है पिता जी ? मुझे तो सब कुछ सहने की आदत हो गई है। कल तो चाय क्या रोटी भी शाम को ही मिली थी।"

वृद्धा ने शीघ्रता से तीन कप चाय तैयार की। वृद्ध चाय पीकर सीधे धर्मशाला चले गये। उनके जाते ही वृद्धा से रजनी ने कहा—

"यदि आप की आज्ञा हो तो दो घन्टे के लिये चली जाऊँ ?"

"चली तो जाओ, पर कही भटक न जाना। अपना काम करके सीधी घर चली आना। तुम विश्वास करो रजनी ? हम निर्धन अवश्य है। फिर भी अपनी सन्तान के प्रति कर्तव्य को जानते है। उसका हम पालन करेंगे। इस समय तुम कही भटकती फिरो यह हम नही चाहते।"

"क्या कह रही हो माता जी ! जितनी भटक चुकी हूँ क्या वह कम है। इस समय तो मुझे केवल आपके प्यार की ही भूख है। इतना अवश्य है कि उस प्यार को मै भार बनकर ग्रहण करना नही चाहती। मै जिस पवित्र अधिकार को पाना चाहती हूँ उसी ने मुझे मेरे कर्तव्य को पढाया है।"

"अच्छा चलो पहले खाना खा लो फिर कही जाना।" रजनी भोजन कर सीधी इर्विन अस्पताल पहुँच गई। उसने निश्चय किया क्यो न नर्स बनकर देश की सेवा करूँ। अस्पताल मे प्रार्थना पत्र देकर जब वह वहाँ से लौटी, न जाने उसे क्या सूझी—राजेश के पास को चल वह रोहतक रोड पहुँची तीन बजे होगे। राजेश साईकल द्वारा मिल जा रहा था। रजनी को उसने देख लिया। वह फिर घृणा भरी चचल दृष्टि डाल सीधा वहाँ से चला गया।

राजेश पर क्रोध भी आया—"किस निर्मोही को मैने अपना सर्वस्व दे दिया।" धीरे-धीरे वह अपने आप से ही कहने लगी—

"सचमुच रजनी तू भूल से मक्खी निगल गई है। और अब जब तक उसे उगल न लेगी चैन नही पड सकता। यही वह युवक है जिसकी वासना के भार को ढोती हुई तू इधर-उधर भटक रही है। विपरीत इसके यह है कि मुँह उठा कर भी तुझे नही देखता। आखिर ऐसी क्या बात है ? इसमे जो तू इससे पृथक होना ही नही चाहती।

जो तुझे भूल गया तू भी उसे भूल जा। प्रेम के दुग्ध पात्र मे अब घृणा की खटाई पड गई है। इसीलिये मन्थन करने से क्या लाभ।"

रजनी को अज्ञात शक्ति से उत्तर मिला—

"देखो रजनी ग्रहण की समाप्ति पर चाँद और सूर्य और भी अधिक सुहावने होते है। पतझर काल की सूनी डाली पर वसन्त ऋतु मे सुमनो की शोभा कितनी मनोहर होती है। तूफान के पश्चात मन्थर गति से प्रवाहित पवन सम्पूर्ण रात्री सोने वालो को थपकियाँ देकर सुलाती है। अमावस्या के अन्धकार को आँखो मे बसाने वाला व्यक्ति ही चाँदनी के महत्व को जान सकता है। इसीलिये इस समय अधीर न हो।"

कुछ देर रोहतक रोड पर खडी रहने के पश्चात् रजनी ताँगे द्वारा सीधी सदर बाजार आ गई। वृद्धा के मन मे, कही यह आशका विद्यमान थी—कही इस का इधर-उधर को मुँह न उठ जाये। यौवन काल मे युवक और युवतियाँ शीघ्र ही निर्णय को कार्यान्वित कर देते है। रजनी को देखते ही वृद्धा की आशका भोर का तारा बन गई। वह तुरन्त चाय बनाने लगी। रजनी ने वृद्धा को रोकते हुए कहा—

"मै चाय नही पिऊँगी माता जी, आप बैठ जायँ।"

"तुम थक गई होगी बेटी। थोडी चाय अवश्य पियो।"

"तो फिर मै बनाती हूँ। आप पिताजी को सूचित कर दो कि चाय तैयार है। कुछ देर मे वह आजाये। साथ ही पियेगे।"

वृद्धा जब तक वृद्ध को बुलाकर लाई, रजनी ने चाय तैयार कर दी। तीनो ने एक साथ चाय पी और फिर वृद्ध बोला—

"थोडा मोम तो गर्म करो बेटी मेरे पैरो मे बिवाई खुल रही है।" रजनी ने मोम गर्म करके वृद्ध की बिवाइयो मे भर दिया। वृद्ध उस समय चारपाई पर लेटा सुखी कल्पनाओ मे खोया हुआ था। वह मन ही मन प्रार्थना भी कर रहा था "हे विधाता! तूने जिस मेरे पुन्य के फल से यह सलोनी बेटी दान की है, उसी फल के रूप मे मेरी प्रार्थना है कि

इसको मृत्यु पर्यन्त मुझसे अलग न करना। दो अन्धो के हाथ मे एक लाठी तो होनी ही चाहिए। आज तक मै दुर्भाग्य की सराहना करता रहा हूँ और अब मैं सौभाग्यशाली बनकर जीवन की अन्तिम यात्रा समाप्त करना चाहता हूँ। दयालु भगवान मुझ पर दया रखना।'

रजनी भी इस समय मन ही मन अपने भाग्य की सराहना कर रही थी। पिता रूप मे उसे अब ही किसी की सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ है। उसी समय वृद्ध ने करवट बदली। रजनी ने देखा—वृद्ध का कुर्ता कमर मे फटा हुआ है। वह उठी और सुई धागा लेकर चारपाई पर बैठकर सीने लगी। वृद्ध बोला—

"क्या कर रही हो बेटी ? बूढो का क्या दिखावा है।"

रजनी मन मे सोचने लगी—एक ओर पाँवो मे बिवाई फटी है और दूसरी ओर कमर से कुर्ता। तीसरी ओर हृदय भी न जाने कितनी बार काँच के टुकडे बन चुका है। फिर भी विधाता की कृपा के आभारी हैं। दूसरी ओर वह भी दुनियाँ है जिसका काम ही दूसरो को कुचलते हुये आगे बढते जाना है। वह बोली—

"अब आप धर्मशाला तो नही जायेगे ?"

"बस जा रहा हूँ बेटी तुम आराम करो।"

"मैं अब खाना बनाऊँगी। माता जी को रसोई से छुट्टी।"

"जैसी तुम्हारी माँ बेटियो की इच्छा। मै चला।"

वृद्ध के जाते ही रजनी खाना बनाने लग गई। वृद्धा उस समय चारपाई पर लेटी हुई आत्म विभोर हो रही थी। अनुपम सुन्दरी रजनी को खाना बनाते हुए देख उसे लग रहा था—जैसे वह दुनियाँ की सौभाग्यशाली स्त्री हो। उसकी दृष्टि रजनी पर जमी थी।

खाना तैयार कर रजनी कुछ लिखने बैठ गई। जब तक वृद्ध धर्मशाला से आये वह लिखती ही रही। वृद्ध आते ही बोले—

"क्या लिख रही हो बेटी ?"

"एक कहानी लिख रही हूँ पिताजी।"

"तो फिर हमे भी सुनाओ ।"

"आप पहले खाना खा ले फिर सुनाऊँगी ।

दोनो फिर खाना खाने बैठ गये । वृद्धा प्रसन्न चित खाना खिलाती रही । खाना खाते हुए ही वृद्ध बोला—

"देखो बेटी ! प्रत्येक प्राणी की जीवन वाटिका मे एक मधुमास ऐसा जरूर आता है जिसकी प्रत्येक प्रात मे स्फूर्ति, सुमनो मे सौरभ, पगडडियो मे पगो की गुदगुदाहट और लताओ मे मनो मुग्धकारी लावण्यता पाई जाती है । प्राणी का धर्म है कि वह आशा और विश्वास के हाथो मे धैर्य की पतवार थमा कर ससार सागर मे जीवन नौका को डाल दे । तट मिलेगा अवश्य मिलेगा, मेरी यह दृढ धारणा है ।"

"अब तो मेरी भी यही धारणा है पिताजी ।"

"और मेरी भी यही धारणा है" वृद्धा ने समर्थन किया । "तुमने कुछ समझा भी या यूँ ही हाँ मे हाँ मिला दी ।' वृद्ध बोले ।

"मै सब समझ रही हूँ । आपने सात दर्जे क्या पढ लिए, किसी को बोलने भी नही देते ।"

"अच्छा, पहले थोडी सब्जी दो और फिर बताओ, हमने क्या कहा है ? बातो मे खाना खिलाना ही भूल गई ।"

सब्जी देते हुए वृद्धा बोली—

"आपने कहा है कि मुझे बुढापे मे बेटी मिल गई ।"

"यह तो तुमने हमारी बातचीत का अर्थ बताया है ।

"हमे तो अर्थ ही चाहिए । और क्या करना है ?"

रजनी इस समय चुपचाप दोनो के मनोविनोद पर विचार कर रही थी— "कितनी प्रसन्न है ये भोली आत्माये । मेरे भार को वहन करते हुए भी समझ रहे है कि यह ईश्वर की कृपा है । नही जानते कि मेरी जैसी अभिनेत्री किस समय कौनसा अभिनय कर बैठे । ये भूल गये है इस दिल्ली मे मेरी जैसी तन की उजली और मन की मैली युवतियो का जाल बिछा हुआ है ।

उसी समय वृद्ध ने रजनी की विचार श्रृंखला तोड दी ।

"क्या सोच रही हो बेटी । अपनी माँ से रोटी तो माँगो ।"

रजनी की इस बार हँसी न रुक पाई । उसको हँसता देख वृद्धा भी खिलखिलाकर हँस पडी । वह थाली मे रोटी रखती हुई बोली—

"अब आप पढे हुए होने का गर्व न करे । अब तो मेरी बेटी आप से भी ज्यादा पढी लिखी है । बी० ए० पास है, बी० ए० पास ।"

वृद्ध फिर विनोद भरे स्वर मे बोले—

"अब यह बताओ, पानी कब मिलेगा ? '

पानी देते हुए वृद्धा बोली—"न जाने मुझे आज क्या हो गया हे ।"

"कही भाग तो नही पी ली है तुमने ?"

"अब आप पानी पीकर आराम करे । मुझे भी भूख लगी है ।"

"अच्छा अब कहानी सुनाओ बेटी । तुम्हारी माँ खाना खायेगी ।"

"अभी तो कहानी अधूरी है पिताजी ।"

"समझ लो अब पूरी हो गई ।"

"क्या कहा पिताजी आपने ? '

"यही कि तुमने आप बीती को कहानी का रूप दिया होगा ।"

रजनी ने सोचा—"मनोविज्ञान के कितने पडित है मेरे वृद्ध पिता सचमुच शिक्षा व्यवहारिक जीवन के क्रियात्मक अनुभव का ही नाम है । शिक्षित राजेश मुझे आज तक नही समझ पाये और ये है कि प्रथम मिलन मे ही मुझे सम्पूर्ण रूप से पढ लिया है । कुछ देर शात रहकर वह बोली—

"आप ठीक समझे है पिताजी । मैने आप बीती ही लिखी है ।"

"तो फिर कल कहानी को पूर्ण कर किसी पत्रिका मे भेज देना । '

"विचार तो मेरा भी यही है ।"

वृद्ध फिर अपनी पत्नी से बोले—"क्या तुम एक चारपाई नही लाई आज ? '

"आपने कहा कब था चारपाई के लिए ?"

"कुछ अपनी बुद्धि से भी कर लिया करो।"

"कल अवश्य ले आऊँगी। मुझे आज ध्यान ही नही रहा।"

"आज क्या हो गया है तुम्हारे ध्यान को।"

"बेटी को देखते-देखते पेट ही नही भरता।"

उसी समय रजनी ने बिस्तर जमीन पर ही बिछाया। तीनो फिर सो गये।

रजनी आज भी गहरी नीद मे डूबी रही।

२७

धर्मार्थी जी के लिए राजेश अब सिर का दर्द बनता जा रहा है। लाख प्रयत्न करने पर भी उसके पजे न उखड सके। धर्मार्थी जी ने मजदूरो मे जो नये प्रचार आरम्भ किये थे राजेश ने सबकी कली खोल दी है। वह कितने वार करते हैं राजेश उन्हे काटता चला जा रहा है। साथ ही वह धर्मार्थी जी की कली भी खोलता जा रहा है। कुछ मजदूरो को छोड सब ही राजेश के साथ है। मिल का सबसे बडा गुन्डा 'धन्नू पहलवान' अपने दल बल सहित धर्मार्थी जी का अग रक्षक बना रहता है। उसके चार और साथी, उसी के समान हृष्ट-पुष्ट है। वे क्वाटरो मे प्रत्येक समय भ्रमण करते रहते है। गुन्डो से धर्मार्थी जी ने कह दिया है—"तुम्हारी खुली छूट है, जो चाहो करो। पीछे मै सब देख लूँगा।"

धन्नू आदि गुन्डो को छूट तो मिली हुई है परन्तु उन्होने अभी तक किया कुछ भी नही है। मजदूरो के सगठन से वे कुछ डरने लगे है। एक की दवा दो वाली बात सिद्ध हो गई है। मजदूरो ने कह दिया है—यदि किसी को टेडी निगाह से भी किसी गुन्डे ने देख लिया तो जान

की खैर नही। गुन्डो से इसीलिए किसी का बाल बाँका भी नही हो सका है। हाँ इतना अवश्य है कि धर्मार्थी से वे जेब को गर्म अवश्य कर लेते है।

अब मिल मे भी धर्मार्थी जी जब चाहे तब आ जाते है। उनकी नीद हराम हो गई है। जब से सेठ जी ने इन्हे फटकारा है उनकी आँखो के सम्मुख मिल की दीवारे ही खडी रहती हे। जैसे राजेश दीवारो को भी उठाकर ले जायेगा। उन्होने अब राजेश को प्रेम बाण से भी घायल करने का निश्चय कर लिया है। उस दिन जब धर्मार्थी जी साढ़े नौ बजे कार द्वारा मिल आ रहे थे— उनको मिल के द्वार पर खडा राजेश दिखाई दे गया। स्वाभानुकूल उन्होने ब्रेक लगा दिया। वे सकेत से राजेश को पास बुलाकर कोमल स्वर मे बोले—

"यहाँ कैसे खडे हो भाई राजेश ?"

"यह तो सार्वजनिक स्थान है मैनेजर साहब।"

"अरे यार तुम तो प्रत्येक समय चिंगारी बने रहते हो ?"

"तो फिर आप जल बन जाइये। सीधा उपाय है।"

"मुझे यह अवसर तो देते ही नही हो तुम ?"

"मैंने तो लिखित रूप मे भी अवसर दिया है तुमको।"

"मजदूरो की बात छोडो। कहना है तो कुछ अपनी कहो।"

"मजदूरो से भिन्न तो मै कुछ भी नही हूँ धर्मार्थी जी।"

"यह तुम्हारी सबसे बडी भूल है। इन मजदूरो को मै तुमसे भी कुछ अधिक जानता हूँ। तुम समझते हो इन्हे मधुमक्खी और ये है पूरे बिच्छू। इनका डक उन्ही के हाथ मे गडता है जो इन्हे ऋषि राज के समान दया का अधिकारी मानते है। दु ख तो यही है तुम विश्वास भी नही करते।"

"हो सकता है आपकी बात सत्य हो।"

"देखो राजेश थोडा व्यवहारिक बनना सीखो। अभी तुम जवान हो। तुम्हारा नया खून है। इसीलिए आदर्शों के भार को पीठ पर लादे

फिर रहे हो याद रखो एक दिन तुम्हे यह भार असह्य होकर ही रहेगा ।"

"तो फिर जल्दी क्या है ? समय आने दीजिए व्यवहारिक भी बन ही जायेगे। कुछ दिन आदर्शों के भार को भी तो ढोना ही चाहिए ।"

"चलो फिर जैसी तुम्हारी इच्छा ।" कहते हुए धर्मार्थी जी गाडी स्टार्ट कर मिल के अन्दर चले गये। राजेश वही पर खडा रहा। धर्मार्थी जी ने कार्यालय मे जाते ही सबसे पहले धन्नू को बुलाया। उस के आते ही वह बोले—

"क्या समाचार है धन्नू पहलवान ?"

"सब ठीक है साब ! कहो क्यो बुलाया है ?"

"तुम्हारी पार्टी कुछ कमजोर सी दिखाई देती है ।"

"नही साब ! आप हुक्म करो ।"

"तुम्हे एक बहुत ही टेढा काम करना है ।"

"जरूर साब ! हम तो है ही टेढे कार्यों के लिए। कहिए ।"

"समझ लो, तुम्हे राजेश की मरम्मत करनी है ।"

"बहुत ठीक । अब यह बताईये अधूरी या पूरी ।"

"इसका क्या मतलब है ?"

"अधूरी का मतलब हड्डी पसली तोडना है और पूरी का मतलब इसको दूसरी दुनियाँ ही दिखा देना है ।"

'तो फिर पूरी ही करो । अधूरी से यह नही मानेगा ।"

"बहुत ठीक । सात दिन मे काम हो जायेगा। बस इनाम तैयार कर लो।

"पाँच सौ रुपये इनाम दूँगा धन्नू । तनख्वाह तुम्हे मिलती ही रहेगी ।"

"सौ रुपये पीने के लिए और दिलाइये ।"

"लो, ये लो ।" धर्मार्थी जी ने सौ का नोट धन्नू को दे दिया। नोट को जेब मे रखकर धन्नू बोला—

"आप बेफिक्र रहे। साले की हड्डियाँ भी नही मिलेगी किसी को।" धर्मार्थी जी जैसे कुछ हल्के हो गये हो।

वह बोले—"मेरी तो इसने नीद ही हराम कर दी है।"

"और हम इसकी जिदगी को हराम कर देगे।"

"शाबाश धन्नू! मैने तो आज जाना है तुझे अच्छी तरह से।"

"आपका नमक खाते है साब! आपका काम तो हमे करना ही चाहिए।"

अब भी तो मिल के गेट पर खडा है दुष्ट राजेश।

"ऐसे नही साब! हम तो धोके से मारेगे।"

"होशियारी तो यही है तुम्हारी।"

"अपने काम मे सब होशियार होते है सरकार।"

धन्नू फिर वहाँ से चला गया। उसके जाते ही धर्मार्थी जी कुछ विचार मग्न हो गये। उनके अन्दर से आवाज उठी—

"इतने क्रूर न बनो धर्मार्थी। जीवन की सत्यता को जानो।"

धर्मार्थी जी ने इस ओर कोई ध्यान नही दिया। वह फिर मजदूरो की माँगो पर विचार करने लगे। उनकी मागें पढते ही क्रोध बढने लगा। उन्होने अपने आप से ही कहा— दुष्ट के साथ दया का प्रश्न नही उठता। प्रत्येक दृष्टि से उसे समझा लिया। वह ऐसा नेता का बच्चा बना है कि सुनता ही नही।

माँगो पर धर्मार्थी जी कोई निर्णय नही कर सके। वे फिर कार्य द्वारा सीधे सेठ जी के पास विचार-विमर्श के लिए चल दिये। जब वे वहाँ पहुचे साढे बारह बज चुके थे। सेठ जी उस समय कोठी के बरामदे मे आराम कुर्सी पर पडे कुछ सोच रहे थे। धर्मार्थी जी प्रणाम कर चुपचाप सामने पडी कुर्सी पर बैठ गये। सेठ जी जैसे सोते से जागे हो। वे बोले—

"तुम इस समय यहाँ क्यो आये हो?"

"एक जरूरी काम से आना पडा है आपके पास।"

"बोलो" फिर क्या बात है ? बैठ क्यो गये ?"

"मिल मजदूरो की कुछ मागो के विषय मे विचार करना है आपसे ।"

"यह काम मेरा नही तुम्हारा है ।"

"ठीक है आपकी बात । फिर भी कुछ बाते ऐसी है जो आपके बिना विचार किये हो ही नही सकती । मजदूरो को तो अब पर निकलने लगे है ।"

"अभी क्या है । आगे देखना, ये उडान भी भरेगे ।"

"इससे पहले तो हम इनके पर ही काट देगे ।"

"तुम कुछ नही कर सकते । कल तक कहा करते थे, मेरे मिल में राम राज्य है और अब कहते हो यहाँ रावण की सेना खडी हो गई है ।"

"आप चिन्ता न करे । मैं सब देख लूँगा ।"

"तो यहाँ क्या करने आये हो ?"

धर्मार्थी जी ने नीचे गर्दन झुका ली । सेठ जी फिर बोले—

"यह सब गडगड कौन कर रहा है मिल मे ?"

"बी० ए० पास नवयुवक है । पहले मजदूरो को पढाया करता था, और अब अपना कुछ प्रभाव जमा, नेता बनना चाहता है ।"

"तो क्या तुम पढे लिखे नही हो । तुमने विदेश मे भाड ही झोका है क्या ? तुम्हे ईट का जवाब पत्थर से देना नही आता । इस प्रकार तो वह एक दिन मिल का मालिक ही बन बैठेगा ।"

"वह दुष्ट चौबीसो घन्टे ही मजदूरो मे पडा रहता है । मजदूरों को आप जानते ही है, गुड की डली दिखाकर चाहो तो दस मील दूर ले जाओ ।"

"तो फिर तुम वहाँ अडतालीस घन्टे पडे रहा करो ।"

"अच्छी बात है अब मै उसको भगाकर ही दम लूँगा ।"

"कुत्ते भगाने से भाग कर फिर लौट आते है, कभी सोचा है

तुमने । भूखा कुत्ता पेट भर कर ही तो जायेगा । इसीलिए सीधा उपाय है टुकडा डाल दो । पेट भर जायेगा, आप ही चला जायेगा ।"

"टुकडा तो डाल कर देख लिया है सेठ जी ।"

"तो फिर जो चाहो करो, मेरा सिर क्यो खा रहे हो ?" मेरा समय तो अब भगवान की भक्ति करने का है । जब से मन्दिर बना है मेरा मन तो अब किसी कार्य मे लगता ही नही है । जी चाहता है, बस मन्दिर मे ही हर समय भगवान के दर्शन करता रहूँ ।'

"उलझी बातो पर तो आपकी सलाह लेनी ही पडती है ।"

"बेकार की बाते छोडो । पहले मुझे यह बताओ जिन लोगो ने इस मन्दिर के निर्माण मे सहयोग दिया है उनकी कुछ सेवा की है तुमने या नही । काम तो आगे भी पडता ही रहेगा । मैने निश्चिय किया है जब तक जीवित हूँ यह मन्दिर बनाता ही रहूँगा ।"

"इस ओर से आप निश्चिन्त रहे । जो हमारा सहयोगी है, हम भी उसके लिये तन, मन, धन से हाजिर है ।"

"ऐसा होना भी चाहिए । हाथ को हाथ धोता है । जो अपना है उसको अपनाओ और जो अपना शत्रु हो उसे धूल मे मिलाओ । यही नीति है ।"

"ऐसा ही होगा भविष्य मे । आप चिंता न करे ।"

"नीति से काम लेना सीखो । तुमने पढा नही है—चाणक्य ने अपने शत्रुओ पर किस प्रकार विजय पाई थी ?"

"अब मै देख लूंगा ।" कहते हुए धर्मार्थी जी खडे हो गए । उनको खडा देख सेठ जी बोले—

"अच्छा अब जाओ । जो उचित समझो कर लेना ।"

धर्मार्थी जी जब मिल मे पहुँचे डेढ बज चुका था । उन्होने जाते ही चाय मगाई और साथ ही राधा को भी कार्यालय से अपने कमरे मे बुला लिया । राधा से आते ही बोले—

"आज तो हमारे सिर मे दर्द है राधा ।"

"तो फिर मालिश करा लीजिए।"

"किससे करायें यह भी तो बताओ ?"

"आप जैसो के लिए सिर दबाने वालो का क्या अभाव है इस दुनियाँ मे। एक चाहो हजार सिर केवल चले आयेगे।"

"आज तक एक तो मिला नही, हजार की बाते कर रही हो।"

"खोजने वालो ने तो भगवान को भी पा लिया है, धर्मार्थी जी।"

"तो फिर कुछ देर के लिए तुम ही भगवान बन जाओ।"

"दु ख तो यही है आप भगवान से भी खिलवाड करना चाहते हैं।"

"आजकल आपकी सखी रजनी कहाँ है ?"

"इस दूसरे भगवान को भी आप ही खोज लीजिए।"

"तुमने रजनी के जीवन का रहस्य नही बताया कभी।"

"समझ लीजिए, वह राजेश के मन की मालिक है।"

"अच्छा ! यह तो आज नई बात प्राप्त हुई है।"

"आपको नवीनता की खोज मे आनन्द आता है न, इसीलिए यह एक नवीनता और प्राप्त हो गई है।"

"अच्छा अब आज्ञा दीजिए।" राधा खड़ी होकर चल पडी। उसी समय चाय आ गई। धर्मार्थी जी ने राधा को रोका, परन्तु वह धन्यवाद कहकर चुपचाप चली गई।

२८

रात्री के अन्धकार मे चलने वाले पथिक को प्रात काल की प्रथम किरण जिस दिवस का सकेत करती है, रजनी को अब वही संकेत करती है, रजनी···सकेत प्राप्त हो गया है। एक ओर माता-पिता का पवित्र स्नेह, दूसरे होने वाले बच्चे के प्रति आशाये और तीसरे नौकरी के लिये दिए हुए प्रार्थना-पत्र की स्वीकृति। उसकी जीवन पालिका की तीन डोरियाँ उसे मिल गई है। अब केवल एक डोरी राजेश की अनुकूलता ही उसके हाथ से दूर है। फिर भी वह अब किसी सीमा तक सन्तुष्ट हैं। उसे जीवन का लक्ष्य तो मिला। वह अब अपने जीवन पथ के महत्वपूर्ण मोड पर आ गई है।

रजनी कभी-कभी प्रयत्न करती है। अतीत को भूल जाऊँ। होता इसके विपरीत है। अतीत उसकी आँखो के साम्मने नाचने लगता है। भावनाये जब उसे व्याकुल बनाती हैं, वह उनको थपकियाँ देकर सुला देती है। वह स्वय से कहती है—

"जीवन केवल भोग नही है। सुखद जीवन क्षणिक ही होता है। उसकी स्मृतियाँ भावी जीवन का बल होती है। भोग की कोई सीमा नही है। सयम का जीवन मे भोग से भी अधिक महत्त्व है।" किसी समय जब वह बहुत उदास होती है तो माता-पिता उसका धैर्य बधा देते हैं। उनका स्नेह भरा हाथ जब उसके सिर पर पडता है, वह आनन्द विभोर हो जाती है। उसी समय वह निश्चय को दोहराती है—"जितना हो सकेगा इनकी जीवन पर्यन्त सेवा करूँगी।"

रजनी कई दिन से सोच रही है—

"एक बार राजेश से क्षमा याचना करके और देख लूं। आखिर मैने राजेश को अपना सर्वस्व दिया है। उसके हृदय के किसी कोने मे तो कही पर अतीत की स्मृतियो की रेखाये होगी ही। वह देवता न सही मनुष्य तो अवश्य है। शका के मेघ कभी तो सत्य के सूर्य को चमकने का अवसर देगे ही। आज उसने निश्चय कर लिया, राजेश के पास अवश्य जाऊँगी। मै अब उससे केवल विश्वास ही तो चाहती हूँ। उसे देखना ही होगा।"

सवेरे के आठ बजे होगे। पिताजी से आज्ञा लेकर रजनी राजेश से मिलने चल पडी। उसको वहाँ पहुचने मे एक घन्टा लगा। राजेश उस समय तैयार होकर मिल जा रहा था। रजनी ने राजेश को देखते ही हाथ जोडकर प्रणाम किया। उसने प्रणाम का उत्तर कुछ ऐसे स्वर मे दिया जैसे वह कुछ भार दब गया हो। रजनी ने तार के बजते ही जैसे स्वर पा लिया हो। वह बोली—

"क्या कही जल्दी जाना है आपको ?"

"यही समझ लो। कहिए क्या बात है ?"

"बाते तो बहुत है राजेश। दु ख तो यही है आपके पास सुनने का समय ही नही है। समय हो तो बाते करते युग बीत सकते है।"

"इस दुनियाँ मे किसके अरमान पूरे हुए है रजनी देवी।"

"देवी एक दो बार पहले भी कहा था आपने। कितना अन्तर है जब और अबके स्वर मे। क्या हो गया राजेश आपको ?"

"मुझे क्या हो गया है यह भी बताना होगा अब। अच्छा हो, यह तुम अपने ही हृदय से पूछ लो। और यदि हृदय नेत्रो की ज्योति अब समाप्त हो गई हो तो फिर विवेक की आँखो से ही देख लो। मुझे स्मरण है उस दिन का जब मैंने तुम्हे देवी कहकर तुम्हारे चरण स्पर्श किये थे। और आज जैसे उसके विपरीत इच्छा हो रही है।"

"यही न कि अब उन पगो को काट कर फेक दूं। यदि आपकी शका का इससे समाधान हो जाए तो यह भी करके देख लो।"

"देखो रजनी ! जो हुआ उसके लिए अब पश्चाताप करो, और फिर भूल जाओ । मैं अपने वैवाहिक जीवन से सन्तुष्ट हूँ । इसीलिए चाहता हूँ अब मेरे दूध मे कोई मक्खी नही पडनी चाहिए ।

"स्मरण करो, कभी आज की मक्खी आपके भाल की मणी थी ।"

"मैने अभी कहा है अतीत को भूल जाओ । यदि भविष्य के लिए कुछ हो तो अवश्य कहो । व्यर्थ मे समय नष्ट करने से क्या लाभ ?"

"तो क्या खडे-खडे ही सुनोगे । बैठ जाते तो अच्छा था ।"

"मुझे ऐसे ही सुनाओ, समय नही है ।"

"प्रथम तो यही कहना है कि दड देने से पहले दोषी के दोष पर विचार तो कर लो । कही ऐसा न हो, निर्दोष को दड देकर आप पछताये ।"

"मै न्यायधीश नही हूँ रजनी ।"

"और मै अब भी आपको अपना सर्वस्व समझती हूँ ।"

"यह भूल तो कभी मैंने भी की थी ।"

"प्रार्थना यही है एक बार आप उसी भूल की पुनरावृत्ति करके देखें ।"

"स्पष्ट कहो रजनी । तुम अब क्या चाहती हो ?"

"यही कि होने वाले बच्चे को पिता के प्यार से वचित न करो ।"

"लक्षाधीश पिता पाकर भी बच्चा प्यार से वचित रहेगा । समझ मे नही आई तुम्हारी बात ।"

"इतने निष्ठुर न बनो राजेश ! विश्वास करो मै वही हूँ ।"

"देखो रजनी ! मेरे और तुम्हारे मार्ग अब बिल्कुल भिन्न है । इसीलिए मेरी ओर से तुम कुछ भी करने के लिए स्वतत्र हो । मैं तुम्हारे मार्ग से अब हट गया हूँ, इसीलिए तुम्हे भी मेरे मार्ग से हट जाना चाहिए ।"

"मुझे दया की भीख भी नही देंगे आप ?"

"दया दीनो का अधिकार है समर्थ का नही। तुम शिक्षित हो, सुन्दर हो। तुम्हारे तो इस दुनियाँ मे हजार बन जायेगे।"

"तो क्या मुझे आप वैश्या से भी पतित समझते हो।"

"वैश्याओ की वर्षा नही होती रजनी। सयम भग होने पर कोई भी स्त्री वैश्या की सज्ञा पा सकती है।"

"क्या भूल गये अपने अन्तिम विदाई के समय के आर्शीवाद को ?"

"तुम्हे भी स्मरण होगा, मैने वह सब नियति पर छोड दिया था।"

"तो क्या मैने अपना सर्वस्व नही दिया आपको ?"

"और प्रतिदान मे मैने भी तो अपना सर्वस्व दिया था, आपको।"

"समर्पण मे नारी का बलिदान अधिक होता है राजेश।"

"यह तुम्हारी भूल है रजनी। मेरे विचार से सरसता बलिदान न होकर केवल भोग मात्र है। और यदि बलिदान मान भी ले तो समर सत्ता के समान ही बलिदान भी समान ही होना चाहिए। मुझे तो आश्चर्य होता है नारी के वाक् छल पर। कभी यह अबला थी तो सदैव अपना पक्ष प्रबल रखा। और आज यह समान अधिकार प्राप्त करके भी अपना पक्ष प्रबल मानती है।"

"जानते हो क्यो ? लो सुनो, मै बता रही हूँ। भ्रम ''के परिणाम को सदैव नारी को ही भोगना पडता है। और अब मै भी वही भोग रही हूँ।"

"तुम कुछ भी कहो रजनी! वीणा तारो के टूटने पर नहीं बजती।"

"रजनी ने निष्कर्ष निकाल दिया—चुटकी बजाकर पर्वत को आकाश की गेद बनाया जा सकता है किन्तु पुरुष की शकाओ को मिटाना सम्भव नही है। सचमुच इस शकित मनोवृति ने राजेश को चाँद के समान कलकित कर दिया है।" विषय बदल कर वह बोली—

"मेरी छोटी बहन के तो दर्शन करा दो मुझे।"

राजेश ने तुरन्त राजेश्वरी को कमरे से बाहर बुलाकर कहा—
"देखो ये देवी तुमसे मिलना चाहती है।"

राजेश फिर वहाँ से चला गया। रजनी को राजेश्वरी छोटे कमरे के अन्दर ले गई। अन्दर चारपाई पर बिठा कर बोली—

"कहिए बहन जी! क्या सेवा करूँ। आपकी ?"

"कुछ नही बहन दर्शनो के लिये आई थी, सो कर लिए। विवाह मे तो बाबूजी ने हमे बुलाया ही न था।"

"क्या मै आपका पूरा परिचय जान सकती हूँ।"

"तो क्या राजेश बाबू ने कभी मेरे बारे मे कोई चर्चा नही की ?"

"अब समझी! आप वही बहन है जिनसे ये विवाह चाहते थे ?"

"ऐसा ही समझ लो।"

"आपकी तो रोज ही चर्चा होती है यहाँ पर। मुझसे कहा करते है तुम भी ऐसी ही बन कर दिखाओ। बहुत बडाई करते है आपकी।"

इस कथन को सुनकर रजनी के उन घावो पर मरहम लग गया जो राजेश के वाक् बाणो से उसके हृदय मे हो गये थे। वह बोली—
"यहाँ राधा नाम की लडकी तो नही आती ?"

"आती तो है, हाँ लौटकर वैसे ही जाती है जैसे आती है।"

"उनका यहाँ आना अच्छा नही है।'

"आप चिंता न करे। आपके सच्चे स्वामी को मै सुरक्षित रखूँगी।"

"आपके सच्चे स्वामी"—सुनकर रजनी गद्‌गद् हो गई। उसने मन मे सोचा-कितनी चतुर और महान है यह युवती। कुछ देर शान्त रहकर बोली—

"अब तो राजेश मुझसे घृणा करते है बहन।"

"देखो मेरी बहिन। उनकी तो वे जाने। हाँ मै आपको अपनी बडी बहन ही समझती हूँ। वे पहले आपके है और पीछे मेरे। आप जब आयेंगी, आपका बडी बहन के नाते ही स्वागत होगा।"

"तुम कितनी महान हो मेरी छोटी बहन।"

"महान मैं नही हूँ मेरी बडी बहन। महान तो आप हैं। आपकी माँग मे जिन हाथो ने सिन्दूर भरा है वे मेरे तो पीछे ही बने है। सच पूछो तो मैंने आपके अधिकार को छीन कर एक महान पाप किया है।"

रजनी इस कथन को सुनकर सोचने लगी—अल्प शिक्षित होकर भी कितनी त्याग और बलिदान की प्रतिमा है यह नारी। सचमुच शिक्षित मानव हृदय की उदारता और विशालता को भूल जाता है। यह भी नही जानती, मेरे जैसी तितली कब किस ओर उड जाए। रजनी ने उसी समय हाथ की अंगूठी निकाली। यह वही अगूठी थी, जो राजेश ने कभी स्मृति-चिन्ह रूप मे भेट की थी। उसने अगूठी राजेश्वरी की उँगली मे पहनाते हुए, उल्लास भरे स्वर मे कहा—

"यह मेरी तुच्छ भेट स्वीकार करो बहन।"

"यह क्या कह रही है आप।"

"छोटी बहन को प्रथम मिलन की भेट दे रही हूँ।"

"यह कभी नही हो सकता मेरी बहन।"

राजेश्वरी ने अगूठी रजनी के हाथ मे पहना दी। और बोली—

"यह तो सुहाग की निशानी है पगली। तुझे तेरा सुहाग दिलाकर ही रहूँगी।" वह फिर खडी होकर चाय बनाने लगी। रजनी उसी समय बोली—"चाय मे वह स्वाद कहाँ है मेरी बहन, जो तुम्हारे पास बैठने मे है। इसीलिए कुछ देर मेरे पास और बैठ जाओ।"

रजनी ने शीघ्र चाय तैयार कर अगीठी पर दाल रख दी। दोनो फिर एक साथ चाय पीती हुई बातो मे जुट गई। रजनी बोली—"अब कब आयेगे राजेश ?"

"उनका कोई ठीक समय ही नही है आने का। आये तो अभी आ जाये और न आये तो शाम तक भी न आये।"

"अच्छा बहन अब मैं चली। फिर कभी आऊँगी।"

"अच्छा तो यह है कि आप रोज ही आया करे। मै उनके मन से भ्रम को निकाल कर फेक दूँगी।"

"जैसी आपकी इच्छा।" कहती हुई रजनी फिर खडी हो गई। राजेश्वरी ने चलते समय उसको हाथ जोडकर प्रणाम किया। प्रणाम का उत्तर देकर जब रजनी सडक पर आई, वह सोच रही थी —

राजेश कुछ निर्दोष दिखाई देता है अब। भला ऐसी स्त्री को पाकर वह अब किसकी कामना कर सकता है। यदि अब भी उसका मन स्थिर न हो, तो मै कहूँगी, राजेश सचमुच एक चचल भ्रमर के अतिरिक्त और कुछ भी नही है। राजेश्वरी के विषय मे रजनी सोच रही थी—राजेश्वरी कितनी उदार है मेरे प्रति। मै तो किसी समय राजेश को राधा की आँखो से भी बचाया करती थी। और यह कहती है आप प्रतिदिन आया करे।

जब रजनी घर पहुची बारह बज चुके थे। उसने जाते ही खाना खाया। और फिर वह दिन मे ही चादर तान कर सो गई।

२१

राधा की प्रकृति मे आजकल मौलिक परिवर्तन होता जा रहा है। वह प्रत्येक समय क्रुद्धसी रहती है। क्यो ? यह वह स्वय भी नही जानती। उसके क्रोध का बिन्दू कौन है ? उसने अभी भी निश्चय नही किया। वह चारो ओर दृष्टि उठाती है। उसे जो भी दिखाई देता है शत्रु ही जान पडता है। सर्व प्रथम देखती है माता-पिता को। सोचती है—इन्होने मेरा लालन-पालन अवश्य किया है। फिर भी ये अपने सम्पूर्ण उत्तरदायित्व से मुक्त नही हुए। बुढापे मे मेरे सिर का भार बन गये है। ये जैसे मेरे दोनो पाँवो की दो बेडियाँ है। किसी ओर भी नही बढने देते। इन्होने मुझे सब कुछ करने की छूट दे रखी है फिर भी जो मै चाहती हूँ, वह कर नही सकती।

राधा जहाँ कार्य करती है वहाँ मनचले युवको का अभाव नही। उन सबको देखकर भी राधा खिन्न हो जाती है। अब वह जीवन को केवल क्रीडा स्थल नही समझती। उसे अब उस जीवन की भूख है जो कर्त्तव्य की शृ खलाओ से आनन्द देती है। वह अब समर्पण कर किसी को सर्वस्व रूप मे पाना चाहती है। राजेश उसके शिक्षाकालीन जीवन के निकट आने वाला प्रथम युवक है। वह चाहे कुछ ही समय के लिए आया, यौवन के भावो को उसी ने गुदगुदाया है। यौवन के उषाकाल मे आने वाले पुरुष को स्त्री प्रयत्न करके भी आजीवन नही भूल पाती। राजेश उसके जीवन मे वही स्थान रखता है।

राजेश को राधा से रजनी को छीन लिया। राधा यह कभी नही भूलती। इसीलिए तो वह अधूरी शिक्षा छोड नौकरी के लिए विवश हो गई थी। उसे विश्वास हो गया था कि अब मै परीक्षा मे सफल न हो पाऊँगी। शिक्षा काल मे युवक और युवतियो को या तो प्रेमानुभूति होनी ही नही चाहिए और यदि उस अनुभूति के वह निकट पहुँच जाए तो उसकी तृप्ति आवश्यक है। शिक्षा काल मे सयम का प्रथम स्थान है। यह एक साधना का समय होता है। यदि सयम की बॉध मे कही दरार पड जाए तो फिर जल को स्वतत्र रूप मे बहने का अवसर मिलना चाहिए। राधा इस सौभाग्य से वचित हो एक दिन कालिज छोडने के लिए विवश हो गई थी। राजेश और रजनी उसके जीवन मे किसी न किसी रूप से पुन आये। उसने उदारता से उनका सत्कार किया और वे अपने लक्ष्य को पाकर फिर अलगाव कर बैठे।

राधा ने पत्रो द्वारा अनेक मित्र बनाये। अब वह इन सबको व्यर्थ समझती है। उसकी दृष्टि मे मित्र कोई नही। वह मित्र केवल पत्र है। उसे अब पत्रो की भूख नही है। वह मित्र चाहती है ऐसा मित्र जिसको वह सच्चा और अभिन्न मित्र कह सके। यूं तो धर्मार्थी जी भी यथा समय स्वयं को राधा का प्रिय सिद्ध करते है। राधा जानती है यह सब ढोग है। जिस नारी के मन में पुरुष के लिए श्रद्धा नही जागी, समझ लो वह उसे प्यार नही करती। धर्मार्थी वही पुरुष है। राधा को उसकी

बातो मे दुर्गन्ध सी आने लगती है। वह जानती है ये सज्जन केवल मुँह से बोलते है, हृदय तो न जाने ये कहाँ नीलाम कर चुके है।

राधा को यह जानकर कुछ प्रसन्नता हुई थी कि रजनी अब राजेश के जीवन से दूर चली गई है। जब उसने देखा—राजेश्वरी ने राजेश को मुट्ठी मे बन्द कर लिया, उसके आश्चर्य मिश्रित दुख का ठिकाना न रहा। उसे यह विश्वास ही न था कि राजेश्वरी राजेश को जीत पायेगी। रजनी के हटते ही उसे अपना मार्ग साफ दिखाई दे गया था। और अब पहले से भी अधिक अन्धकार दिखाई देने लगा है। राजेश अब उससे कुछ बचकर चलता है। राधा उतनी ही उसकी ओर खिंचती जा रही है। पुरुष जितनी नारी की उपेक्षा करता है, वह उतनी ही उससे सापेक्ष होना चाहती है और जब वह भोगी लोलुप बनकर उसके पीछे दौडता है वह भी दूर भागती है।

कई दिन से राधा तर्क वितर्क करती आ रही है। आज उसने जैसे निष्कर्ष निकाल लिया हो। राजेश्वरी यदि राजेश के जीवन से पृथक हो जाए तो राजेश को पाना मेरे लिये बच्चो का खेल बन जायेगा। आखिर मैं सुन्दर हूँ। सुन्दर नारी किस पुरुष की दृष्टि को अपनी ओर नही खीच सकती। सुन्दरता वह जादू है जिसके वशीभूत तो देवता भी हो गये है। फिर मै राजेश ो क्यो नही पा सकती। राधा ने निश्चय कर लिया—राजेश्वरी को राजेश से पृथक करके ही दम लूँगी। यदि वह मेरा नही बना, तो मै उसको किसी अन्य का भी बनता हुआ इस जीवन मे नही देख सकती। निश्चय करते ही राधा को लगा जैसे वह अनाधिकार चेष्टा कर रही है। उसने स्वय से कहा—कोई बात नही दुनिया मे प्रत्येक प्राणी सदैव अपने सुख के लिये जीता और मरता है। फिर ऐसा करने मे मै ही पीछे क्यो रहूँ।

उस दिन शनिवार था। राधा तीन बजे घर आ गई। कुछ देर विश्राम कर वह राजेश्वरी से मिलने चल दी। जब वह वहाँ पहुँची, राजेश घर पर नही था। वह राजेश्वरी से विनम्र स्वर मे बोली—

"नमस्कार भाभी जी। कहो क्या समाचार है।"

"नमस्कार राधा ! आओ बैठो ।"।

"भाई साहब कहाँ गये है इस समय ?"

"वह तो प्रत्येक समय ही दौड-धूप मे लगे रहते है आजकल ।"

"और आप यहाँ अकेली ही मक्खियाँ मारती रहती है ।"

"मक्खियाँ क्यो मारती । उनकी प्रतीक्षा करती रहती हूँ ।"

"और कोई नई बात हो तो सुनाओ ।"

'नई यह है कि बहन जी आई थी ।"

"कौन बहन जी ? क्या रजनी आई थी ।"

"बिल्कुल वही ! बडी अच्छी है बेचारी ।"

"क्या आप भी बुरे भले को पहचान कर लेती है ?"

"तो क्या तुम्हारे विचार से गाँव मे जन्म लेने वाले मूर्ख ही होते है । मेरे पति का जन्म भी तो गाँव मे ही हुआ है । देखती न हो, उनके चारो ओर दिल्ली की लडकियाँ किस तरह मधुमक्खी की भाँति चक्कर काटती रहती है । मैने तो एक नजर मे ही बहन जी को पहचान लिया ।"

"नाराज न होना भाभी मैंने तो यूँ ही मजाक मे कह दिया है ।"

' सचमुच राधा ! बहन जी तो बहुत अच्छी है । मै तो चाहती हूँ हम दोनो के साथ वह भी रहे । अब तो मै इसके लिए प्रयत्न करूँगी ।"

"बडी भोली हैं भाभी जी आप ।"

"मै भोली और वह चतुर हैं । दोनों की जोडी मिल गई । यदि दोनो ही चतुर होते तो लडाई झगडे ही होते रहते ।"

"तो आपको रजनी बहन बहुत अच्छी लगती है ?"

"जो अच्छा हो वह तो सबको अच्छा लगेगा ।"

"और मैं कैसी लगती हूँ आपको ? '

"यूँ तो ससार मे सब ही अच्छे हैं ।"

इस कथन से राधा पीड़ित हो गई । पीडा का दमन कर वह बोली—

"भाई साहब ने बोलना तो खूब सिखा दिया है आपको ।"

"अभी तो बहुत कुछ सीखना है उनसे ।'

"जादू कर दिया है भाई साहब पर आपने ।"

"यह तो नारी का पहला धर्म है । यदि पुरुष को खुले साँड की तरह छोड दिया जाये तो वह इधर-उधर डडे खाता फिरेगा ।"

"बडी चतुर हो गई है आप ।"

"पहले मूर्ख कहा । फिर भोली कहा । फिर जादूगरनी बताया और अब चतुर बता रही हो । क्या हो गया है तुमको राधा ? सच पूछो तो मैं कुछ भी नही हूँ ।"

"अच्छा छोडो अब इस प्रसग को । अब यह बताओ चाय पिला-ओगी या नही । मै सीधी दफ्तर से आ रही हूँ ।"

"चाय अवश्य पिलाऊँगी । वह भी आने वाले है । फिर तीनो ही साथ ही पियेगे । कुछ देर इन्तजार का भी मजा ले लो ।"

"आज तो आपकी बातो मे कुछ मिठास नही है भाभी ।"

"मिठास का तुम्हे करना भी क्या है । तुम चटपटी हो, इसीलिये तुम्हे चटपटी बाते सुना रही हूँ । बोलो ठीक है न ।"

"अच्छा बहुत सुन ली । अब यह बताओ, कल घर पर ही रहोगी न । आप मुझे चपटटी बना रही है, और मै कल आपको मीठी बनाऊँगी ।"

राधा फिर वहाँ से चली गई । उसके जाते ही राजेश्वरी खाना बनाने लग गई । उसे पाच बजे तक खाना तैयार करना पडता है । राजेश खाना खाकर मजदूरो को पढाने जाता है । ठीक पाँच बजे जब राजेश आया खाना तैयार था । आते ही राजेश्वरी ने हाथ धुलाकर थाली लगाई । थाली को राजेश के सम्मुख रखकर वह बोली—

"आज मै खाना खाते ही आपसे बहुत लडूँगी ।"

"क्यो ? ऐसी क्या भूल हो गई हमसे ?"

"भला वताओ तो सही, आपने ऐसी भली देवी को छोडकर मेरे जैसी मूर्ख को पल्ले से बाँध लिया है ?"

"तुम पगली हो अभी। तुम्हे आदमियो की पहचान नही है। गाँव मे मोर तो देखा ही होगा। कितना सुन्दर होकर साँप को निगल जाता है."

"आप कह रहे हो तो मान लेती हूँ। नही तो मेरी आत्मा यह नही मानती।"

"शहरो की लड़कियो को तुम अभी नही जानती हमे इतने दिन हो गये है दिल्ली मे। अभी तक हम भी धोखा खा जाते है पहचान करने मे।"

"देखो जी! आप मुझसे पढे लिखे अधिक है, ठीक है। फिर भी आप नारी को नही पहचान सकते। आप ही क्या, कोई भी पुरुष नारी को नही पहचान सकता। बताओ क्यो? पुरुष जब भी सुन्दर नारी की पहचान करता है, उसके मन मे खलबली सी मच जाती है। ऐसी स्थिति मे भला वह क्या पहचान कर सकता है नारी की।"

"तो फिर तुमने पहचान लिया है रजनी को।"

"बिल्कुल पहचान लिया है अपनी बड़ी बहन को।"

"चलो फिर उसको यही रख लो अपने पास।"

"आपकी आज्ञा के बगैर तो मै तिनका भी नही तोड सकती। हाँ यदि आप आज्ञा दे दे तो मै उनको अवश्य ही यहाँ रख लूँ।"

"शीघ्रता न करो, ठन्डा करके ही खाना अच्छा होता है।"

"मैने तो जब से उन्हे देखा है अपने से ही घृणा हो गई है। ऐसा लगता है जैसे मै सारस के जोडे की शिकारी बन गई हूँ।"

"व्यर्थ की बाते छोडो। पानी लाओ।"

राजेश्वरी दौड कर पानी लाई। राजेश पानी पीकर बोला—

"रजनी और राधा मे से तुम्हे कौन सी अच्छी लगती है।"

"गाय और भेड मे से आप ही बताये कौन महान है।"

"अब तो तुम्हारे पर निकल आये है राजेश्वरी।"

"यह सब आपकी कृपा का ही फल है।"

"अच्छा अब यह बताओ तुमने रजनी मे क्या देखा है ?"

"यह भी पूछने की बात है उनमे अपनापन साफ दिखाई देता है।"

"कभी यह भ्रम मुझे भी हो गया था।"

"कभी नही। मेरे विचार से भ्रम तो आपको अब हो गया है।"

"अब तो तुम मेरी भी शिक्षक बनती जा रही हो।"

"ऐसा न कहो मेरे स्वामी। आपकी तो मै सदा दासी रहूँगी।"

राजेश खाना खाकर जब खडा हुआ उसने सब्जी मे सने हाथ से राजेश्वरी के मुँह पर चपत लगा दी। राजेश्वरी मुँह पोछती हुई बोली—"यह क्या किया आपने यदि थप्पड ही मारना था तो दूसरे हाथ से ही मार देते।"

"पहले पानी लाओ। फिर हाथ धुलवाओ। इस समय देर हो रही है देवी जी।" और फिर राजेश हाथ धोकर पढाने चला गया। राजेश्वरी को आज बिना पिये ही एक बोतल का नशा था।

३०

किसी से अपनी कहना और उसकी सुनना, यही है किसी भी सच्चे सम्बन्ध का मूल महत्त्व। रजनी जब राजेश के निकट आई उसके इस अभाव की पूर्ति हो गई। उसने अपने सम्पूर्ण अतीत को राजेश के सामने प्रस्तुत किया। भविष्य के लिए न जाने कितने कल्पनाओ को महल बनाए। और वह सब अब सन्ध्या का स्वप्न बन कर रह गए है। जब से रजनी वृद्ध ब्राह्मण की छत्र छाया मे आई है निरन्तर आशा-वादी बनती जा रही है। अतीत मे वह अपने कल्पित जीवन साथी को अपनी जीवनी के अध्याय पढकर सुनाया करती थी, और अब वह सच्चे

सरक्षक को सब कुछ सुना कर हल्की हो जाती है। उसे यदि छीक भी आ जाये तो भी वह वृद्ध को सुनाये बिना नही रहती।

उस दिन रात को भी जब वृद्ध ब्राह्मण धर्मशाला से आये, रजनी ने उनको सारी बाते सुनाईं। राजेश्वरी के आदर्श व्यवहार की रजनी ने विस्तृत व्याख्या की। वृद्ध को यह सब सुनकर कुछ सन्तोष हुआ। उसने सब कुछ सुन कर धीमे स्वर मे कहा—

"आने जाने मे तो कोई बात नही है बेटी। देखना तो यह है कि कही वह तुम्हारे आने जाने का भार तो अनुभव नही करते है।"

"यह तो ठीक है पिताजी! राजेश तो मेरी परछाईं से भी दूर भागते है। आज भी उनके व्यवहार मे असीम कटुता थी।"

"इसीलिये तो कह रहा हूँ रजनी। तालो हमेशा दोनो ही हाथों से बजती है। मान न मान मै तेरा मेहमान वाली कहावत को सिद्ध करने से मनुष्य का सम्मान धूल मे मिल जाता है।"

"अब तो मै केवल छुट्टी को ही जा सकती हूँ वहाँ।"

"क्यो ? और दिन क्या बात है ?"

"मुझे नौकरी मिल गई है अस्पताल मे।"

"मुझे बताया भी नही। क्या करती रहती हो माँ बेटी दोनो ?"

"माता जी को तो कुछ भी पता नही है पिताजी। यह तो सब कुछ मैने ही किया है। खाली बैठे मन नही लगता। सोचा कुछ पेट-पूजा के साथ देश सेवा भी क्यो न की जाये।"

"यह तो बडी अच्छी बात है बेटी। देश सेवा से बडा तो कोई धर्म ही नही है। ईश्वर तुम्हे तुम्हारे लक्ष्य मे अवश्य सफल बनायेगा।"

"इसीलिये तो मैने नर्स बनना उचित समझा है।"

"देखो रजनी! कहने के लिये तो हम सब ही देश भक्त हैं। परन्तु सत्य यह है कि हममे से कुछ एक को छोड कर सबके सब केवल पेट भक्त बन कर ही आचरण करते है। मैं चाहता हूँ यदि तुम नौकरी करो तो सच्चे अर्थों मे ही देश भक्त बनकर चलो। तुमने पढा है हमारा

देश राष्ट्रीय एकता और देश भक्ति के अभाव मे ही हजारो वर्ष पराधीनता की बेडियो मे जकडा रहा है। आज वे बेडियाँ हमने तोड दी है। उनके तोडने वाले क्रमश हमसे विदा होते जा रहे है। इसी से हमारा उत्तरदायित्व बढता चला जा रहा है। हमारा धर्म है, हम उन त्यागी महापुरुषो की आत्म-शान्ति के लिये अपने उत्तरदायित्व को समझे। सयम से जीवन को शक्तिशाली बनाये। सत्य से आत्मा का उत्थान करें। अहिसा से परोपकार और न्याय से सुरक्षा को सदैव के लिये जीवित कर दे।

हमारे देशवासी आज अपनी स्वार्थ की सीमाओ मे तेली का बैल बन कर घूम रहे है। हम पहले अपना घर भरते है। घर से निकले तो परिवार को देखा। परिवार से आगे बढे तो सम्बन्ध और जाति के जटिल बन्धनो मे बध गये। कोई सज्जन इससे निकला तो प्रान्तीयता को गले का हार बना बैठा। इससे आगे बढने की जब बारी आती है तो हमारी भावनाओ का स्रोत पूर्णरूप से शुष्क हो जाता है। देश को देने के लिए हमारे पास कुछ बचता ही नही है। इसीलिये मै चाहता हूँ—तुम जिस कार्य को करो देश हित को ही ध्यान मे रख कर करना। कार्य वही है जो कर्तव्य को समझ कर किया जाता है।

तुम्हे एक विचार और करना है रजनी। तुम्हारा कार्य रोगी और घायलो की सेवा सुश्रुषा करना है। देखा जाता है इस कार्य को करने वाली कुछ युवतियाँ नकचढी सी हो जाती है। रोगियो की उपेक्षा और घायलो से घृणा करने वाली किसी भी युवती को यह कार्य कभी नही करना चाहिये। हमारी व्यापक उत्तरी सीमा किस समय कितने बडे संघर्ष का कारण बन जाये, यह कोई नही जानता। हमारे साथ मैत्री घात कई बार हो चुका है। हमने जिसको विश्वास दिया, उसी से बदले मे अविश्वास पाया। अब इसीलिये हम सचेत हो गए है। हमे अब ईंट का जवाब पत्थर से देना है। हम अहिसावादी वीर है। दुष्ट पर दया की भूल अब हम नही करेगे। हमे दिखाना है, जिस देश मे अहिंसा के अमर पुजारी जन्म लेते है, वही पर शकर भगवान के प्रलयकारी

नृत्यकारो का भी अभाव नही है। भारतीय वीर उसी सिंह के समान है जो जागने पर पॉव बढाकर पीछे कभी नही हटाता। जानती हो रजनी सिंह को चलते हुए पगो मे कॉटे भी लग सकते है। नर्सो का कर्त्तव्य है वह उन कॉटो को निकालने के लिये वीर सिहो के साथ चलने की शक्ति सचित करे। और यह शक्ति तुम्हे भी सचित करनी है।

जिनको हमने जीना सिखाया, वही हमको आँखे दिखाये, भला यह कैसे सहा जा सकता है। हमे उनकी ऑखे निकालनी है। सत्य मानो रजनी! जब मुझे उत्तरी सीमा की उस रक्त रजित होली की याद आती है तो मेरा खून खौलने लगता है। जी चाहता है शत्रु की सारी सेना के लिये कपिल मुनि का अभिशाप बन जाऊँ।"

वृद्धा जो अब तक शान्त बैठी थी. चुप न रह सकी। वह बोली—"आज क्या सारी ही कथा कह कर दम लोगे ?"

"तुम्हे नीद आ रही है तो सो जाओ। मुझे तो आज कुछ कहना ही है।"

वृद्धा शान्त हो गई। रजनी उस समय मन मे सोच रही थी—

यदि यह गरिमा देश के प्रत्येक युवक मे आ जाये तो भारत दुनियाँ के सम्पूर्ण दानवो को धूल मे मिला कर ही दम ले। वह बोली—

"कृपया यह और बताइये, निजी भावना को भुलाया कैसे जाए ?"

"भावना भुलाई नही जाती बेटी। उसे व्यापक बनाया जाता है।"

रजनी को आज विश्वास हो गया —मैने जिनको पिता रूप मे पाया है, वह केवल धर्मशाला के व्यवस्थापक ही नही एक सच्चे शिक्षक भी है। आन्तरिक सन्तुष्टि का अनुभव कर वह बोली—

"यदि आपकी आज्ञा हो तो कल रविवार को और मिल आऊँ राजेश्वरी से।"

"देख लो! चली जाना। यह ध्यान रहे कोई ऐसी वैसी बात न हो जाय। वह दो यात्री अब अपनी जीवन नौका मे बैठे चले जा रहे है। तुम्हारा धर्म है, उन्हे आशीर्वाद दो कि उनकी यात्रा सफल हो सके। वे अपने तट पर सकुशल पहुँच जाये।"

"यदि आपका ऐसा विचार है तो मै नही जाऊँगी।"

"जाने को मै नही रोकता बेटी। मै तो केवल यही चाहता हूँ कि तुम जीवन को सच्चे अर्थो मे जान जाओ। भोग की अपेक्षा जिन्होने त्याग को जीवन मे अधिक महत्व दिया है। उन्होने ही अमरता को पाया है। शेष भोगी तो कीडे-मकोडो के समान जन्म लेते है और मरते ही रहते है। कौन जानता उन बेचारो को ?"

वृद्धा अभी सोई नही थी वह फिर भडक उठी—"कुछ रजनी भी तो पढी है या सब आप ही पढाओगे।"

इस बार वृद्ध के बोलने से पहले ही रजनी बोल पडी—

"आप सो जाये माता जी, हमे अभी नीद नही आ रही है।"

इस बार वृद्ध ने अपनी पत्नी की बात पर ध्यान दिया—

"अब तुम भी सो जाओ बेटी। समय बहुत हो गया है।"

तीनो फिर सो गये। रजनी को नीद कुछ देरी से आई। वह फिर भी चार बजे उठ गई। दैनिक कार्यों से निवृत्त हो उसने जब चाय तैयार कर ली तो वृद्ध और वृद्धा को भी जगा दिया। दोनो ने हाथ मुँह धोकर रजनी के साथ चाय पी। और फिर वृद्ध धर्मशाला चले गये। रजनी ने आज प्रथम बार खाना भी बनाया। वृद्धा को आज उसने कोई भी कार्य नही करने दिया। लगभग ग्यारह बजे तक वह सम्पूर्ण कार्यों से निवृत्त होकर तैयार हुई और फिर राजेश्वरी से मिलने चल दी। जब वह वहाँ पहुची एक बज चुका था। रजनी ने जाते ही देखा—

राजेश्वरी कमरे मे फर्श पर अचेत पडी है। उसका मुँह झागो से भरा हुआ है। पास मे कुछ पेडो के कण और पकौडियाँ पडी है। राजेश्वरी की यह दशा देख, रजनी शोक के सागर मे डूब गई। उसके पाँव डगमगा गये। उसका सिर चकराने लगा। वह दोनो हाथो से सिर को दबाकर राजेश्वरी के पास बैठ गई। उसकी बुद्धि जैसे क्षीण हो गई हो। वह कुछ भी नही सोच पाई। उसके आँसू भी आँखो मे सूख गये। केवल इस समय रजनी के ये शब्द दीवारो से टकरा रहे थे।

"हाय मैं लुट गई। हाय मै मर गई। हाय यह क्या हुआ?"

उसी समय वहाँ राजेश आ गया। एक ही दृष्टि मे यह सब दृश्य देख वह चीख पडा—

"हाय मै मर गया। हाय नागिन तूने यह क्या किया?"

राजेश ने पागल सा बन कर रजनी के गले को दोनो हाथो से दबा लिया।

"ओ दुष्ट, नीच, हत्यारी, तूने मेरे हरे-भरे घर को उजाड़ कर ही दम लिया।"

गले को दबाने से रजनी की आँखे लाल हो गईं। वह इस समय बाघ के पजो मे मृगी बनी हुई थी। उसी समय हल्ला-गुल्ला सुनकर वहाँ पास-पडौस के स्त्री पुरुष एकत्र हो गये। कुछ ने राजेश्वरी को देखा—उसके प्राण पखेरू उड चुके थे। कुछ ने रजनी को छुडाया—वह भी राजेश की बज्र मुष्टि की जकडन से अचेत हो गई थी। एक पडौसी ने पुलिस को फोन किया। पाँच मिनट मे ही वहाँ पुलिस का उडनदस्ता पहुँच गया। उस समय राजेश बिलख-बिलख कर चीख कर रहा था। रजनी उसके पास बरामदे में पडी थी। उसके बाल बिखरे हुए थे।

पुलिस फिर राजेश्वरी के मृत शरीर रजनी, और राजेश को थाने ले गई। राजेश्वरी की मृत देह निरीक्षण के लिए भेज दी गई। रजनी को जाते ही हत्यारो की कोठरी मे बन्द कर दिया। तलाशी मे उसके पास कुछ नही निकला। राजेश की दशा इस समय पागलो जैसी थी। वह चीख रहा था—'तुम कहाँ चली गईं राजेश्वरी? तुम्हारे बिना मैं क्या करूँगा इस हत्यारी दुनियाँ मे? रजनी से कहो वह मुझे भी विष देकर तुम्हारे पास पहुँचा दे। मुझे क्षमा करना देवी इस नागिन को मैने ही पाला था। इससे कहो मुझे भी डस ले।"

राजेश्वरी की मृत्यु की सूचना मिल मे भी वायुवेग से पहुच गई। वहाँ से 'सूका' सहित सैकडो मजदूर दौड पडे। थाने मे मजदूरो का जमघट सा लग गया। पुलिस ने अपनी आरम्भिक सम्पूर्ण कार्यवाही पूर्ण करके लगभग छह बजे तक राजेश्वरी की मृत देह को लौटाया।

ठीक सध्या के सात बजे शमशान घाट पर राजेश्वरी का दाह सस्कार हुआ। उस समय तक टैक्सी द्वारा 'सूका' राजेश के पिता और माता को भी यहाँ ले आया था।

दाह सस्कार की समाप्ति पर जब सब शमशान से लौटने लगे, तो राजेश ने चिता से तपित धूल को उठाकर माथे से लगा, मन ही मन कहा—मुझे क्षमा कर देना देवी। तुम्हारे बिना मै इस निर्मोही ससार मे बहुत दिन नही रहूँगा।"

और फिर दु ख के सागर मे डूबे सब वहाँ आ गये।

३१

पापी जब पाप के पथ पर पग बढाता है—उसकी आत्मा उसे धिक्कारती है। वह जब बधिर बन जाता है, तो आत्मा भी मूक हो जाती है। पाप के पश्चात् आत्मा दूने वेग से फिर सचेत होती है। इस समय कुछ वज्र हृदय व्यक्ति ही उसका दमन कर पाते है। किन्तु जिनका हृदय कोमल है और जो भावान्ध होकर पाप कर बैठते है उनसे आत्मा का दमन सम्भव नही। राधा के साथ भी यही हुआ। जब वह राजेश्वरी को पेडो मे विष खिलाकर गई, उसकी आत्मा चीखने लगी—

"ओ नीच हत्यारी! क्या बिगाडा था तेरा उस बेचारी ने? अकारण ही तूने बेचारी निरपराध की जीवन लीला समाप्त कर दी। खिलने से पहले ही तूने एक कली को डाली से काट कर फेक दिया। हरे भरे घर को उजाड कर धूल मे मिला दिया।

उस रात राधा ने खाना नही खाया। थाली मे रखी रोटियाँ उसे फाड खाने के लिए दौडती सी दिखाई देने लगी। माता-पिता ने उसकी

उदासी का कारण पूछा। वह कुछ भी न बोल पाई। उसकी आकृति विकृत होती चली गई। मुख पीला सा पडने लगा। पास पडोस के सभी स्त्री-पुरुष राजेश के घर एकत्र हुए। राधा इस समय उल्टे मुँह चारपाई पर पडी रही। पाँवो से जैसे वह पगु बन गई हो। उसका हृदय जोर-जोर से धडकने लगा। वह जिस ओर देखती उसे उजाड सा दिखाई देता। उसका मस्तिष्क चिन्तन के भार से फटने लगा।

राधा को उस रात एक पल के लिए भी नीद नही आई। आधी रात उसने एक कपडा कसकर सिर पर बाँधा। इससे भी वह न सो पाई। उसका शरीर तपने लगा। पाप की आन्तरिक तपन जैसे उसे झुलस रही हो। प्रात काल तक उसके सम्पूर्ण अग ढीले हो गये। वह फिर ठण्डी सी होने लगी। सवेरे पाँच बजे तक राधा के मस्तिष्क का सन्तुलन नष्ट होता चला गया। बुद्धि और मन के जिस सयोग ने राजेश्वरी के हत्याकाँड मे सहयोग दिया था, अब निर्जीव से बन गये। और फिर राधा चीख पुकार करने लगी—

"हाय मै मरी ? हाय मैने यह क्या किया ? क्यो मारा बेचारी को।"

चीखती हुई राधा जब । उसके माता पिता ने उसे पकडना चाहा। वह झटका मारकर उनसे छूट गई। दोनों फिर उसके साथ ही सडक पर आ गये। उन्हे लग रहा था, राधा को किसी बीमारी ने अक-स्मात घेर लिया है। राधा की चीख पुकार सुनकर पास पडोस की स्त्रियाँ वहाँ एकत्र हो गई। उन्होने देखा राधा भूतनी सी बनी हुई है। वे सब सोचने लगे क्या हो गया है इस सुन्दर लडकी को। डायन सी दिखाई दे रही है। राधा अब भी चीख रही थी।

"मैने मारा है राजेश्वरी को। उसने मुझसे राजेश को छीन लिया था। देखूँ मेरा कोई क्या करता है। मुझे दण्ड दो। मै हत्यारी हूँ।"

राजेश उस समय घर पर ही था। उसके माता पिता उसको इस समय सान्तवना दे रहे थे। राधा चीखती हुई उनके पास आ गई। उसके पीछे उसके माता-पिता और कुछ स्त्री-बच्चे भी थे। दौडती चीखती

राधा राजेश के चरणो पर गिर गई। वह अब भी पुकार रही थी—

"मैने मारा है आपकी पत्नी को। मुझे दण्ड दो। देखूँ भला तुम मेरा क्या करते हो। चलो मुझे कहाँ ले चलते हो। मै वही तुम्हारे साथ चलूँगी, जहाँ तुम जाओगे। अब तुम मुझे छोड नही सकते। मुझे गला घोट कर मार दो। मै हत्यारी हूँ। हाय मैने क्या किया?"

राजेश को निश्चय कर लेने मे एक पल भी न लगा। यह पाप रजनी ने नही, इस दुष्ट ने किया है। पाप के भार से इसका बुद्धि सन्तुलन नष्ट हो गया है। पुलिस को सूचना दी गई। तुरन्त वहाँ पुलिस का उडन दस्ता आया और विधिवत कार्य कर राधा को पकडकर ले गया। थाने मे राधा से पुलिस ने सम्पूर्ण भेद ले लिया। विष कहाँ से और किस प्रकार प्राप्त हुआ, यह भी रहस्य खुल गया। पुलिस ने राजेश से पूछताछ की उसने स्पष्ट कह दिया।

"मैने उस समय रजनी को वहाँ पाया था इसीलिए मेरा विश्वास पुष्ट हो गया कि हत्यारी यही है। रजनी से मेरा कुछ समय पूर्व प्रेम सम्बन्ध रहा था। इसीलिए मेरे निश्चिय को अधिक बल मिल गया। इस समय यह निश्चित है कि रजनी निर्दोष है।

प्रात काल समाचार पत्र मे यह सूचना प्रकाशित हो चुकी थी - रजनी नामक एक युवती ने एक विवाहित युवती को विष देकर मार दिया। अभियुक्ता का मृत पत्नी के पति से अनुचित सम्बन्ध था। अभियुक्ता को पकड लिया गया है।"

पुलिस ने रजनी को छोडने मे बहुत ही सावधानी से काम लिया। कुत्तो से अपराधी की जाँच कराई। कई साक्षी ली। समाचार पत्रो को सूचना दी गई। और फिर सन्ध्या तक सम्पूर्ण कार्यवाही पूर्ण कर पुलिस ने रजनी को मुक्त करने का निश्चय किया। जब पुलिस वाले रजनी के पास पहुँचे वह कोठरी मे अचेत पडी थी। उसी स्थिति मे उसे बाहर लाकर सन्तरे का रस दिया गया। वह कुछ सचेत हुई। आँखे खोलते ही उसने देखा—राजेश सवेदना की मूर्ति बना बैठा है। रजनी को देखते ही उसने आँखे झुका ली।

मुरझाई लता के समान रजनी लडखडाते पाँवो से थाने के बाहर कुछ देर चुपचाप बैठी रही। जब वह घर पहुँची रात्रि के ग्यारह बज चुके थे। वृद्ध और वृद्धा उसी के विषय मे बाते कर थे। उन्हे इस विषय मे कोई ज्ञान ही न था। समाचार पत्र वे पढते नही। दिल्ली की कौलाहल पूर्ण जिन्दगी से बेखबर रहते है। वे तो सोच रहे थे, रजनी का किसी ओर मुँह उठ गया है। वह अब शायद नही आयेगी।

रजनी को देखते ही दोनो ने उस पर आँखे गडा दी। दोनो एक साथ ही पुकार पडे—

"कहाँ थी बेटी कल से ? हम तो रात भर नही सो सके।"

रजनी ने चारपाई पर बैठकर धीरे से सारी कथा कह सुनाई। इस समय दोनो की सूखी आँखो से इस हृदय-विदारक घटना को सुनते ही अश्रुधारा फूट पडी। कुछ देर दोनो शान्त बैठे रहे। वृद्धा कुछ सम्भलकर उठी और चाय बनाने लग गई। वृद्ध रजनी से बोला।

"यह तो बहुत बुरा हुआ बेटी। क्या उस मूर्ख लडकी ने ?"

"भगवान ही जाने पिताजी। वैसे तो वह इतनी बुरी न थी। न जाने उसे क्या हो गया। मुझे तो विश्वास ही नही होता कि यह नीच कर्म उसने किया है। देखने मे तो वह बहुत भली दिखाई देती थी।"

"मनुष्य आकृति से अच्छा या बुरा नही होता, बेटी। देखना तो यह है कि उसकी आत्मा कितनी उज्जवल है। इसके साथ ही यह न भूलो कि भले से भला आदमी भी कभी-कभी ऐसा भूल कर बैठता है जिसकी उससे स्वप्न मे भी आशा नही होती। अन्धी भावना की इसीलिए तो मैने आलोचना की थी। मै तुम्हे रोकना भी चाहता था लेकिन स्पष्ट नही कहा।"

वृद्धा ने चाय प्यालियो मे डालते हुए कहा—

"जो कुछ कहना हो, साफ-साफ क्यो नही कह दिया करते।"

"तुम जिन बातो को नही जानती उनमे अपनी टाग न अडाया करो। रजनी भूखी होगी। अब जल्दी खाना बनाओ।"

वृद्धा इस डाट के साथ चुपचाप खाना बनाने लग गई।

रजनी बोली—

"भविष्य मे ऐसी भूल नही करूँगी पिताजी ।"

"मेरी अच्छी बेटी ! मुझे तुमसे यही आशा थी ।"

"यही नही पिताजी ! आप तो अब अपनी सम्पूर्ण आशाओ को ही मेरे प्रति केन्द्रित कर दे । मुझे लगता है विधाता मेरी अन्तिक परीक्षा ले चुके है । यह सब आपकी ही सदभावनाओ का ही फल है कि मै आज मौत के मुँह से भी सुरक्षित चली आई हूँ ।"

"ठीक है बेटी हमारी तो बुढापे की अब तुम ही दृष्टि हो ।"

"बहन राजेश्वरी की मृत्यु कितनी दुखद है पिताजी ।"

"इससे बडा दुख और क्या हो सकता है बेटी । क्या किया जाये इस समय । कोई उपाय ही नही है इसका ।

"सचमुच पिताजी । देवी थी राजेश्वरी बहन ।"

"देवी-देवताओ का यह युग नही है रजनी । पशुओ की इस दुनियाँ मे भले आदमियो को जीने ही कौन देता है । सत्य मानो बेटी इस काल मे अतीत से भी अधिक मानवता के शिकारी पैदा हो गये है । आज का मानव दया से शून्य है । उसके मुख पर हिंसा वृत्ति की रेखाये अकित होती जा रही है ।"

"परन्तु नारी की हृदय तो दया का पालना होता है पिताजी ।"

"देखो रजनी ! कार्यक्षेत्र मे आने से नारी का नारीत्व आज कुछ धीमा पडता जा रहा है । इसीलिए तो आज नारी सब कुछ कर बैठती है ।"

"क्या यह विचार आपका प्रत्येक नारी के विषय मे है ।"

'नही बेटी ! सब एक जैसे नही हो सकते । चन्दन के वृक्ष को झूला बनाकर भी नाग उसका कुछ नही बिगड पाते ।"

"मेरी एक शका का समाधान करेगे क्या आप ?"

"तुम खाना खाओ और मै शका समाधान करूँ । बोलो क्या बात है ?"

"मुझे लगता है कुछ दोष मेरा भी है ।"

"यह तो तुम अपनी आत्मा से पूछ कर देख लो।'

"राजेश के जीवन मे यदि मै न आती तो उन्हे यह दुख देखने ही न पडते। यही हे मेरी दृष्टि मे मेरा दोष।"

"नही रजनी ? मै यह नही मान सकता। यदि कुछ अशो मे कोई दोषी है भी तो वह राजेश ही है। तुम दोपी नही हो सकती।"

"क्षमा करना पिताजी। मेरी आत्मा नही कहती कि मै उन्हे दोषी स्वीकार करूँ। इस विषय मे यदि दोषी है तो हम दोनो ही है।"

"देखो रजनी ! यही राजेश का दोष है कि तुम उसे दोषी होने पर भी दोषी नही मानती। विपरीत इसके वह तुम्हे निर्दोष होने पर भी दोषी मानता है। उसका धर्म था, विवेक की आँखो से तुम्हारी परख करता। आज वह तुम्हे जो दण्ड दे रहा है वह उतनी ही बडी हिसा है जितनी राधा ने की है। राधा का अपराध प्रकट हो गया है। इसीलिए वह दडित होगी। विपरीत इसके कोई प्रमाण न होने से राजेश निर्दोष बना बैठा है। दुनियाँ मे अपराधी वही है जिसका अपराध सप्रमाण सिद्ध हो जाये। विश्वास करो रजनी ! कितने ही आदमी इस दुनियाँ मे ऐसे है, जिन्हे तुरन्त मृत्यु दण्ड मिलना चाहिए। कुछ ऐसे भी निकल आयेगे जिनको हजार बार फाँसी देकर भी दण्ड की पूर्ति नही होगी। किन्तु प्रमाणो के अभाव मे या अपनी सत्ता के बल पर मुह धोकर उज्जवल बने बैठे है। वह अपराधी नही है। यह ठीक है। फिर भी पापी वह अवश्य है।"

वृद्ध का यह कथन रजनी के हृदय मे उतर गया। पानी पीकर वह बोली—

"और यदि भविष्य मे अपनी भूल को स्वीकार कर ले।"

' उस स्थिति मे राजेश दोष मुक्त हो सकता है। मेरे विचार मे तो पश्चाताप के पश्चात् अपराधी को दड मिलना ही नही चाहिए। पश्चाताप की ज्वाला मनुष्य के दूषित विचारो को झुलस कर क्षार बना देती है। और फिर मनुष्य ऐसे ही चमक उठता है जैसे आग मे तपने

से कचन । दण्ड से तो अपराधी कभी-कभी और 'भी अधिक अपराध करने को उद्यत हो जाता है ।

"अब इसे सोने भी दोगे या आज ही सारी पढाई करोगे । तुमने तो पाठशाला ही खोल दी । ' ये शब्द वृद्धा के थे ।

इस बार वृद्धा की बात पर ध्यान दिया गया और फिर तीनो सो गये । रजनी सोते समय सोच रही थी—विचित्र विडम्बना है मेरा जीवन । एक रात सोती हूँ तो दूसरी को जागना पडता है ।

कुछ देर चिन्तन के बाद उसे नीद कब आई यह वह भी नही जानती । सवेरे जब वह उठी नौ बज चुके थे ।

३२

धर्माथी जी को राजेश्वरी की मृत्यु की सूचना अगले दिन उस समय मिली, जब वह कार्यालय मे आये । मिल मे यह चर्चा जोरो पर थी । उनको इस बात का बहुत दुख हुआ कि यह सूचना कल ही क्यो न मिली । लगभग सोलह घण्टे इस शुभ सूचना से वचित रहे । उस दिन सध्या को वह पॉच बजे कार्यालय से चले गये थे । प्रात काल समाचार पत्र पर वह साधारण दृष्टि ही डालते है । कार्यालय मे वह समाचार पत्र अवश्य पढते है इसके साथ ही वह जिस पत्र को पढते है उसने यह सूचना प्रकाशित भी न की थी । उनको इस बात पर कुछ क्रोध भी आया । एक बार तो उन्होने पत्र के सम्पादक को इस बारे मे पत्र लिखने की बात भी सोची । फिर न जानें क्यो विचार बदल दिया ।

वास्तव मे धर्मार्थी जी इस घटना को अपने जीवन की सबसे बडी सफलता मान रहे थे । क्रिया का कर्त्ता चाहे कोई हो, परन्तु भोक्ता वह स्वयँ को ही समझ रहे थे । उनका इस समय राजेश ही सर दर्द है ।

इस घटना से उन्हे लगा—अब राजेश की गतिविधियाँ या तो समाप्त हो जायेगी या शिथिल पड जायेगी। पत्नी की मृत्यु और वह भी रजनी के द्वारा, सुनते ही धर्मार्थी जी को लगा जैसे उन्होने मैदान मार लिया है। उनकी इच्छा तो थी मिठाई बाँटने की। वह कुछ सोच कर ऐसा न कर सके। उन्हे यह पता है कि इस प्रकार उनकी बची हुई प्रतिष्ठा भी धूल मे मिल जायेगी। दिखाने के रूप मे उन्होने सबसे दुख ही प्रकट किया। सबके साथ उन्होने भी कहा—"बुरा किया रजनी ने।"

कल से धर्मार्थी जी कुछ उदास भी थे। बात यह हुई—धन्नू गुँडे पर धर्मार्थी जी को बहुत विश्वास था। वह समझते थे, मिल के सभी मजदूर उसकी परछाई से भी भयभीत हो जाते है। जब से उन्होने राजेश की मृत्यु का षडयन्त्र रचा, तब से वे कुछ हलके से हो गये थे। हुआ कुछ भी नही। कल उन्हे सुनने को मिला—कुछ मजदूरो ने धन्नू और उसके साथियो की अच्छी तरह मरम्मत कर दी है धन्नू की तो अच्छी भली रूई सी धुन दी गई है। वह अब मजदूरो के सम्मुख भीगी बिल्ली बन गया है। इस बात से धर्मार्थी जी बहुत दुखी थे। उनको लग रहा था जैसे उनका दायाँ हाथ टूट गया है। शराब पीने के लिये सौ रुपये दिये और सब धूल मे मिल गये। और अब उन्हे लगा जैसे उनकी सम्पूर्ण मनोकामना स्वत ही पूर्ण हो गई है।

राजेश्वरी की मृत्यु सम्बन्धी सूचना की कटिंग को धर्मार्थी जी ने सभाल कर अपने पास रख लिया। उनको जब पता चला—कि कुछ मजदूर भी कल शाम शव-यात्रा मे सम्मिलित हुये है तो उन्होंने ऐसे मजदूरो की नामाकन सूची तैयार कर ली। जो मजदूर ड्यूटी छोड कर गये थे, उनको तो दडित करने का निश्चय किया। उस दिन धर्मार्थी जी ने एक निश्चय और किया—मजदूरो मे खुल कर प्रचार किया जाये। वह लगभग ग्यारह बजे क्वार्टरो मे भ्रमण के लिये चल दिये। इस समय उनके साथ चार मजदूर भी थे।

धर्मार्थी जी ने सारे क्वाटरो मे प्रचार कराया—जो आदमी ऐसे चाल-चलन का है उसका क्वार्टरो मै आना कहाँ तक उचित है। हमारी बहन बेटियाँ कभी-कभी घरो मे अकेली भी रहती है। क्या पता

ऐसे आदमी का किस समय क्या कर बैठे। कितनी ही लडकियाँ वह इधर से उधर कर चुका है। पैसा पास नही। झूठ सच बोलकर पेट पालता है। चाहता है कोई नौकरी मिल जाय। भला ऐसे प्राणी को नौकरी दी जा सकती है। नौकरी के लिये हाथ का सच्चा और चरित्र का पक्का आदमी होना चाहिए। वह तो चाहता है भोले मजदूरो का सगठन बनाकर एक दिन मिल मे हडताल करा दूँ। सेठ जी को झुका-कर फिर हडताल खत्म कराने की बात कहूँ। इस प्रकार सेठ जी को दस पाँच हजार की गोली बनाकर चम्पत हो जाऊँ।

क्वार्टरो मे प्रचार के पश्चात धर्मार्थी जी ने अपने कार्यालय मे आकर उन मजदूरो को अपने पास बुलवाया जो कल ड्यूटी छोडकर राजेश के घर गये थे। सबके इकट्ठा हो जाने पर उन्होने एक छोटा सा भाषण दिया—

जिस लडकी ने राजेश की पत्नी को विष दिया है, वह वही बहन जी है, जो कुछ दिन पहले यहाँ कार्य करती थी। उसका राजेश से बहुत पहले का अनुचित सम्बन्ध चला आ रहा है। वह अब गर्भवती भी है। इसमे सारा दोष राजेश का ही है। वह अपनी गाँव की पत्नी को मारना ही चाहता था। उसने यह कार्य कराया उस लडकी से। अब आप लोगो को सोचना चाहिए कि आप सब का जाना वहाँ कहाँ, तक उचित था। किसी के दुख मे हमे जरूर शामिल होना चाहिए। परन्तु यहाँ तो यह दुख नही बल्कि राजेश के मन की बात हुई है। फिर आप लोग वहाँ क्यो गये। कुछ विचार तो किया होता। और यदि जब नहीं तो अब ही विचार कर देख लो।

धर्मार्थी जी की बात मजदूरों के हृदय मे उतर गई। उनको लगा —जैसे सचमुच हमने बहुत बडी भूल की है। सबके सब राजेश से मन ही मन घृणा करने लगे। बोले वे कुछ नही। उनको शान्त देखकर धर्मार्थी जी ने अपने रग को पक्का किया।

"मैं अपने छोटे भाइयो को दण्ड कोई नही दूँगा। भूल मुझसे भी हो सकती है। मै तो चाहता हूँ अब कोई भूल आप न करे। अभी चार

दिन पहले मजदूरो ने धन्नू की दिल खोलकर घुनाई की है । यह सब राजेश के कहने से ही हुआ है यह भी मै जानता हूँ । फिर भी मैने किसी से कुछ नही कहा । धन्नू को आप जानते नही । उस पहलवान को हमने राजेश जैसे गुन्डो से छुटकारे के लिये ही रखा है । दुख की बात है आप उसे ही गुडा समझते है । अब जो हुआ सो हुआ । आगे ध्यान रखना ।"

मजदूर वहाँ से जब क्वार्टरो मे गये तो उन्होने धर्मार्थी जी की जय-जयकार के नारे लगाने आरम्भ कर दिये । सारे क्वार्टरो मे राजेश के नाम से भी घृणा उत्पन्न होने लगी । धर्मार्थी जी उस समय कितने प्रसन्न थे, यह स्वयँ भी नही जानते । उस दिन वह कार्यालय से पॉच बजे नही उठे । जिस समय साढे पॉच बजे तो उन्हे पता चला—रजनी ने राजेश की पत्नी को विष नही दिया । यह सारा कॉड तो राधा ने किया है। राधा इस समय पकड ली गई है । यह बात कुछ ही देर मे सारे मिल मे फैल गई । वायु के प्रवाह मे जैसे उलटा मोड आ जाये । अधिकतर मजदूर सोचने लगे—

कही ऐसा तो नही है, राधा से धर्मार्थी जी ने यह काड करा दिया हो । राधा इनकी कान पकडी चेली थी । हो सकता है वह अबोध लडकी इस घाघ की बातो मे आ गई हो । छह बजे मजदूरो की इस शका को बल भी मिल गया । उसी समय जब मिल मे पुलिस आ गई और फिर धर्मार्थी जी से पूछताछ होने लग गई ।

बात यह हुई—राधा ने थाने मे जाकर पागलपन मे जाने क्या कुछ कहा । पुलिस सब कुछ नोट करती गई । कई बार राधा ने धर्मार्थी जी का नाम भी लिया । पुलिस ने फिर गहराई से अध्ययन किया । पता चला राधा मिल मे काम करती है । धर्मार्थीजी से उसकी घनिष्ठता है । दूसरी ओर राजेश और धर्मार्थी जी एक दूसरे कट्टर विरोधी है । पुलिस ने सदेह निवारण के लिये इस काड मे धर्मार्थी जी को भी घसीट लिया । रस्सी को सॉप बनाना पुलिस के बॉये हाथ का खेल है । बस वह सीधी मिल पहुँच गई । उसके आते ही धर्मार्थी जी के होश उड गये । उनकी

सारी प्रसन्नता पर पाला सा पड गया ।

पुलिस धर्मार्थी जी को अपने साथ थाने मे ले गई। वहाँ पहुच कर कुछ ही देर मे धर्मार्थी जी ने अपना मुँह उज्जवल कर लिया । उन्होने पुलिस को कितनी भेट चढाई यह तो वही जानते होगे। हाँ इतना अवश्य है कि कुछ न कुछ देकर ही पिंड छुडाया ।

वहाँ से मुख उजला कर धर्मार्थी जी सीधे मिल पहुँचे। वहाँ उन्होने प्रचार कराया—राधा के चरित्र के बारे मे पुलिस ने धर्मार्थी जी से जानकारी प्राप्त की थी । उन्होने कह दिया—राधा हमारे मिल मे काम अवश्य करती थी। परन्तु हम उसके निजी चरित्र के बारे मे कुछ नही जानते । धर्मार्थी जी को इस प्रचार के पश्चात् कुछ सन्तोष अवश्य हुआ, फिर भी वह पूर्ण सन्तुश्ट नही थे । उनकी सम्पूर्ण आशाये जैसे धूल मे मिल गई हो ।

रात को जब धर्मार्थी जी दस बजे कोठी पर पहुँचे, नौकर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे । उन्होने उस दिन भोजन नही किया। वह जाते ही चारपाई पर थके हुए गधे के समान पडकर करवट बदलने लगे। उन्हे नीद नही आई । वह सारी रात्रि सोचते रहे ।

भगवान बचाये इन लडकियो से । आज ही पगडी उछल जाती। अब मै किसी लडकी को अपने कार्यालय मे नही रखूँगा । ये तो बेपैदी के लोटे के समान होती है। कब किस ओर को लुढक जाये, यह कोई नही जानता धर्मार्थी जी ने अपने दोनो कान पकडकर प्रतिज्ञा की–अब मै इन लडकियो से सौ कोस दूर बचकर चलूँगा। इनकी निकटता तो प्राणो का अच्छा भला जजाल है। धर्मार्थी जी के मन मे एक बात और चक्कर काट रही थी—हो सकता है राधा ने मेरा नाम अपनी सहायता के रूप मे ही लिया हो । पागलपन मे आदमी समय अमिट सत्य की अभिव्यक्ति करता है ।

राधा से हमारा कुछ न कुछ रागत्मक सम्बन्ध था। हमने उससे जब जो भी जी मे आया कहा । उसने कभी अपवाद नही किया। यदि कभी किसी बात का बिरोध भी किया तो ऐसी वाणी मे जिससे कानो

मे अमृत वर्षा सी हो गई। निश्चित उसने हमे अपना समझ कर सहायता के लिए स्मरण किया है।

धर्मार्थी जी को यह भी विश्वास हो गया—कि पुलिस यहाँ राजेश की प्रेरणा से आई थी। खाने पीने का उसे थोडा अवसर मिल जाये, फिर तो वह तिनके का पहाड बना देती है। राजेश ने यहाँ भी मरते-मरते मेरे मुँह पर थप्पड मार दिया है। इस दुष्ट के बच्चे को जब तक उचित दड नही मिलेगा यह अपनी हरकतो से बाज नही आयेगा। यह मेरी प्रतिष्ठा का भविष्य मे भी शत्रु बना रहेगा। इसका पत्ता यहाँ से काटना ही होगा। अब प्रश्न यह है कि अब इसको यहाँ से हटाया कैसे जाय। धन्नू और उसके साथी तो अब चूहो की पचायत हैं, घन्टी कोई नही बाँध सकता।

धर्मार्थी जी ने इस रात एक बात पर और विचार किया—राजेश अब स्त्रियो के जाल से मुक्त हो गया है। वह पुनः इस जाल मे फँसेगा भी नही। इसीलिए वह अब पूरा कर्मठ बन जायेगा। साधु अब वह बन नही सकता क्योकि आज इस ढोगी सम्प्रदाय को रोटियाँ मिलना कठिन है। नौकरी उसे मिलना साधारण कार्य नही है। पुलिस या फौज में स्वस्थ आदमी ही काम कर सकता है। और वह अब सूई खाया सा पक्का साम्यवादी बन जायेगा। इसलिए हो सकता है चौबीस घटे ही भविष्य मे मेरे पीछे पडा रहे। इसीलिए उचित है उससे सहानुभूति का प्रदर्शन कर उसको अपना बना लिया जाये। सच्चे अर्थो मे यदि वह अपना न बन सका तो न सही, दिखावे के रूप मे ही सही। उसे अब अपनाने मे ही काम चलेगा।

अन्त मे धर्मार्थी जी ने यही निश्चय किया—राजेश को एक बार प्रेम-बाण से ही घायल करके देखूँ।

"विवाह तो करना ही है बेटा। पॉव की जूती जद टूट जाती है तो दूसरी पहनी जाती है।"

राजेश ने मन मे सोचा—गृह लक्ष्मी की तुलना पैरो की जूती से। विचित्र है हमारी सामाजिक मान्यताये। और फिर कहते है कि इस ससार मे हमारा सामाजिक ढॉचा सबसे श्रेष्ठ है। प्रकट रूप मे उसने कहा—

"आप शान्त ही रहे तो अच्छा है माता जी।"

दोनो इस कथन के पश्चात् कुछ नही बोले। राजेश भी वहॉ से उठकर मन हल्का करने के लिए सडक पर आ गया। उसने देखा कुछ मिल मजदूर सूका सहित उसकी ओर आ रहे हैं। सबने आते ही प्रणाम किया, और फिर मिल की सम्पूर्ण गतिविधियो का सक्षेप मे परिचय दिया। सब कुछ सुनकर राजेश बोला—

"अभी मेरा मन कुछ ठीक नही है। भाइयो मै पन्द्रह दिन बाद मिल मे आऊँगा और फिर देखूँगा, वहॉ के क्या समाचार हैं।" वह फिर सूका से कहने लगा – घर पर माताजी सहित पिताजी भी ठहरे हुए है। चाहो तो उनसे मिलते जाओ।

और फिर वह सब रमानाथ जी से मिलने घर चले गये। राजेश ने यूँ ही सामने दृष्टि उठाई। उसने देखा—

रजनी एक वृद्ध के साथ उसी ओर आ रही है। उसको विशेष आश्चर्य न हुआ। उसने निश्चय किया—रजनी शोक प्रदर्शन के लिए ही आ रही होगी। वृद्ध को साथ देखकर राजेश को कुछ जिज्ञासा अवश्य हुई। रजनी ने पास आकर हाथ जोडकर प्रणाम किया और वृद्ध चुपचाप खडे हो गये। राजेश ने प्रणाम का उत्तर दिये बिना ही दृष्टि नीचे झुका ली। वृद्ध बोला—

"बेटी राजेश्वरी की मृत्यु का समाचार पाकर हमे असीम दुख हुआ है बेटा राजेश। कितनी दुष्टता की है उस लडकी ने।"

राजेश ने एक क्षण वृद्ध के मुख पर पडी हुई झुर्रियो को पढा।

एक बार उसकी दृष्टि रजनी से टकराई। वह धीरे से बोला—

"क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूँ।"

"मेरा परिचय ही क्या है बेटा ! यही तेलीवाडे की एक धर्मशाला मे यात्रियो के आवागमन की व्यवस्था करता हूँ। कुछ दिनो से यह रजनी मेरे यहाँ ठहरी हुई है। समझ लो अब यह मेरी बेटी बन गई है। इसीलिये इसके साथ ही आपके शोक मे सम्मिलित होने आया हूँ।'

"क्या रजनी को आप पूर्ण रूप से जानते है ?"

"कुछ अवश्य जानता हूँ परन्तु तुमसे अधिक नही।"

"तो आप इस समय इमे रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए लाये है ?"

"नहीं बेटा ! मै इतना मूर्ख नही हूँ कि ऐसे अवसर पर इस बात को लेकर तुम्हारे पास आऊँ। रजनी और तुम्हारा सम्बन्ध तुम दोनो की इच्छा पर निर्भर करता है। हाँ इतना अवश्य है मैं रजनी को भविष्य मे पिता के प्यार से वचित नही रहने दूँगा।"

"आप इस दुष्टो की दुनियाँ मे कुछ पहले के आये हुए मानव है बाबा।"

"हाँ बेटा मेरी आयु इस समय सत्तर वर्ष हो चुकी है।"

"अच्छा फिर मै आपसे किसी और दिन मिलूँगा। इस समय तो मेरे मस्तिष्क का सन्तुलन ठीक नही है।"

"अच्छा बेटा जब कहो मैं मिलने आ सकता हूँ। इस समय तो भगवान से प्रार्थना करनी है कि वह शत्रु को भी सद्बुद्धि दान करे।"

राजेश मन मे सोचने लगा —' दुर्बलता मनुष्य मे कितने थोथे आदर्शो को जन्म दे देती है। कहते है शत्रु को भी सद्बुद्धि दान करने की प्रार्थना करो। यह नही कि शत्रु का पत्थर से सिर फोड कर उसे स्वर्गधाम पहुचा दे। दुष्ट पर दया भी भला कोई न्याय है।" वह बोला—

"आप मेरे पास कभी अकेले आये तो अच्छा हो।"

इस कथन को सुनते ही रजनी सडक के दूसरी ओर चली गई।

उसके जाते ही वृद्ध राजेश से कोमल स्वर मे बोला—

"बोलो बेटा, क्या बात है ? इस समय तो मै अकेला ही हूँ ।"

"इस समय तो मै कुछ कहने की स्थिति मे नही हूँ बाबा ।"

"मुँह आई बात न रोको बेटा । हो सकता है मै कुछ उत्तर दे सकूँ ।

"ठीक है आपकी बात । फिर भी मैं इस समय कुछ नही कह पाऊँगा । क्या करूँ, बात होठो से बाहर ही नही आती ।"

"तुम तो यही कहना चाहते हो कि रजनी अच्छी लडकी नही है । अब मै तुम्हे इस बात का उत्तर देता हूँ । रजनी क्या है ? यह तुमने कभी भी विवेक की आँखो से नही देखा । रजनी जैसी आदर्श लडकी चिराग लेकर ढूँढने से भी नही मिल सकती । मेरे बाल धूप मे नही पके है । चालीस वर्ष तक एक धर्मशाला मे आने जाने वालो के न जाने कितने चेहरे मैने पढे है । उन सब मे रजनी के मुख पर मैने जो पाया वह न कभी देखा, और न ही भविष्य मे देख पाऊगा ।"

"आपने देखा बहुत है बाबा । फिर भी मै कहूँगा आपने आजकल के जमाने की पढी-लिखी लडकियो को नही देखा ।"

"तुम्हारी भूल है बेटा ! मैने उस जमाने मे सातवी कक्षा पास की है, जिस समय के चौथी पास आज के बी० ए० पास को दस साल पढा सकते है । इसीलिये तुम मेरी बात का बहिष्कार नही कर सकते । रजनी कुछ दिनो मे माता बनने वाली है । मैं अपनी धर्म पुत्री के नाते उसकी जो बन सकेगी, सेवा करूँगा । अच्छा होता तुम होने वाले बच्चे को पिता के प्यार से वञ्चित न करते ।"

"अन्त मे आप मूल बात पर आ ही गये ।"

"हाँ बेटा ! आज नही तो कुछ दिन पश्चात् मुझे यही सब तुमसे कहना था । बातचीत मे आज ही व्यक्त कर दिया है ।"

"ठीक है बाबा । इस विषय पर भविष्य मे ही विचार करना उचित होगा । इस समय तो मै आपसे क्षमा ही चाहूँगा ।"

"अच्छा बेटा ! भगवान तुम्हे शान्ति दे। आपका निश्चय कुछ भी हो। हम तो आपको अपना सम्बन्धी ही समझते है।"

"और भविष्य मे मै भी आपको अपना सरक्षक समझूँगा।"

"तुम्हारी बात तुम जानो। हमारा तो निश्चय अटल है।"

उसी समय रजनी भी उनके पास आ गई। उसकी आँखे इस समय आँसुओ से गिली थी। वृद्ध रजनी को रोती देखकर बोले—

"यदि तुमको कुछ कहना हो तो कह लो बेटी।"

"अधो के आगे रोने से आँखे ही फोडनी है पिताजी। इसीलिए कुछ भी कहना इस समय व्यर्थ है। जिसको खडा नही दिखता उसको बैठा ही क्या दिखाई देगा। जब ये स्वस्थ मन थे, कुछ न सुन सके। तो भला अब ये क्या सुनेंगे। इस समय तो इनके ऊपर इतना बडा ब्रजाघात हुआ है, जिससे इनके मस्तिष्क का सन्तुलन बिगड सा गया फिर बताइए अब ये क्या सुन सकेंगे ?"

वृद्ध इस समय भाव विभोर हो रहे थे। वह राजेश से बोले—

"सुन रहे हो बेटा, इन शब्दो को ?"

"सुन ही नही रहा बल्कि समझ भी रहा हूँ।"

"तो फिर कोई उत्तर है तुम्हारे पास।"

"समय पर बन सका तो उत्तर भी दूँगा।"

"क्या उत्तर देगे आप ? एक देवी का इस प्रकार दुखद अन्त हो ही गया है। एक मै हूँ, किसी दिन रोती-पीटती इस निर्मोही ससार से विदा हो ही जाऊँगी। मै तो चाहती हूँ भगवान मेरी छोटी बहन को स्वर्ग मे स्थान दे और उनकी आत्मा को शान्ति दे। यही मेरी प्रार्थना है। कितना निष्ठुर है विधाता मुझे कुछ दिन इन दोनो को हँसते-खेलते देखने का भी अवसर नही दिया।"

इस कथन के साथ ही राजेश की आँखे आँसुओ से भर गई। वह आँसुओ को पोछता हुआ भर्राई वाणी मे बोला—

"देखो रजनी ! दुर्बल गलियो मे भटक कर मैंने जीवन का पथ

पा लिया है । अब मेरा निश्चय है पीछे नही लौटूँगा ।"

"कौन कहता है आपसे पीछे लौटने के लिए । आप आगे बढ कर विवाह करे । मै तो फिर वही आशीर्वाद दूँगी अपनी होने वाली बहन को ।"

"यह समय व्यर्थ की बातो का नही है रजनी ।"

"मैने व्यर्थ की बाते न कभी की है और न ही करूँगी । आप मुझे मेरे भाग्य पर छोड कर कुछ भी करने के लिए स्वतत्र है ।"

इस कथन के साथ ही रजनी चल पडी और वृद्ध भी उसके साथ ही चल दिये ।

राजेश उन्हे भूले पथिक की तरह खडा-खडा देखता रहा ।

३४

जिज्ञासा भरी निवृति का समय अन्त मे आ ही गया । रजनी आज कल मे माता बनने वाली है । वृद्ध ने इस शुभ अवसर के लिए सम्पूर्ण व्यवस्था कर ली है । उसके पास सारे जीवन की कमाई लगभग सात सौ रुपये थी । सौ रुपये महीने तीन मास से रजनी लाकर दे रही है । एक हजार रुपये मे से रजनी के लिए एक गर्म कोट सिला हुआ ही खादी ग्रामोद्योग से खरीद लिया है । दस सेर शुद्ध घी की व्यवस्था कर ली है । नर्स होने से रजनी के लिए अस्पताल मे व्यवस्था सुविधापूर्वक हो गई है । साढे सात सौ रुपये वृद्ध के पास शेष है ।

एक सप्ताह से रजनी छुट्टी पर है । वृद्धा प्रत्येक समय उसके पास बैठी रहती है । खाना भी वह उसी समय बनाती है जब वृद्ध घर पर आ जाते है । वृद्धा का आदर्श है—रजनी के पास से न उठना । रजनी को खाने के लिए सप्ताह भर से दूध, डबल रोटी और फल दिये जा

रहे है। अनुभवी वृद्धा का विश्वास है—"दूध अधिक पिलाने से सन्तान शुभ वर्ण होती है।"

कोठरी मे वीरो और सन्तो के चित्र लाकर टाँग दिये गये है। वे समझते है—इस प्रकार सन्तो और वीरो के दर्शनो से सन्तान धर्म और कर्म दोनो दृष्टि से वीर होती है। वृद्धा ने कुछ चिन्ह देखकर विश्वास कर लिया है—"रजनी पुत्रवती ही होगी।" वृद्धा इस बात को कई बार वृद्ध से भी कह चुकी है। दोनो जब एकान्त मे बातचीत करते हैं फूले नही समाते। जहाँ एक पैसे की आवश्यकता है वहाँ इस समय चार खर्च करते है। होने वाले बच्चे के लिए वृद्ध ने न जाने मन ही मन क्या सोचा हुआ है। एक आने की बीडी मे सारा दिन बिताने वाला वृद्ध बच्चे के लिए खिलौने खरीदने के लिए सौ रुपये की योजना बनाये बैठा है।

कुछ पश्चिमी विचारको ने प्रेम और सहानुभूति को स्वार्थ सापेक्ष बताया है। वृद्ध का आचरण यहाँ इस सत्य का अपवाद है। वृद्ध की आयु का अन्त निकट है।

यह जानकर भी वह विश्वास कर बैठा है—मेरे स्नेह का यह तन्तु अमरता लेकर आया है। उसका जीवन जैसे सार्थक हो गया है। वृद्धा उससे भी दो पग आगे है। दिन मे दस बार रजनी के भाल पर हाथ रखती है। उसको तिल बराबर भी हिलने-डुलने नही देती। शीत की लहर से बचने के लिए प्रत्येक समय अगीठी ही जलाये रहती है। रजनी को रात मे कई बार देखती और उसे कपडा उढाती है।

सन्ध्या के पाच बजे होगे। वृद्धा दौडती हुई धर्मशाला गई और वृद्ध के कान मे कुछ कह कर आ गई। वृद्ध दौडे हुए गये और एक टैक्सी लेकर घर आ गये। रजनी को टैक्सी मे लेकर दोनो अस्पताल पहुँच गये।

रजनी नर्सों के बीच घिर गई और वृद्ध तथा वृद्धा घर आकर बैठ गये। उस समय हवा कुछ ठन्डी थी। दोनो के पास वस्त्र साधारण थे। फिर भी उन्हे इस समय शीत का कोई ज्ञान न था। दोनो कुछ मधुर

कल्पनाओ मे खोये हुए थे। वह बारह बजे तक एक बरामदे मे शान्त भाव से बैठे रहे। नियम के अनुसार उनको अस्पताल से निकाला नही गया। उन्हे बारह बजे सुनने को मिला—

"पुत्रवती रजनी अब बिलकुल ठीक है।"

दोनो सुनते ही उल्लास मे डूब गये। सारी रात्रि वही पर जागकर बिदा दी। दोनो अस्पताल से पाँच बजे घर लौट कर आये। वृद्धा तुरन्त कुछ पीने की सामग्री ले अस्पताल चली गई और वृद्ध धर्मशाला से छुट्टी लेकर राजेश को सूचित करने चल दिया। उसे विश्वास था—पुत्रवती रजनी को राजेश पत्नी के रूप मे अवश्य स्वीकार कर लेगा। मनुष्य महान होने पर भी कही दुर्बल अवश्य होता है। राजेश तो आर्थिक युग का एक युवक ही है। रजनी अब नौकर भी है। वह तो रजनी को स्वीकार कर स्वयं को सौभाग्यशाली समझेगा। भावना मे यदि दोनो एक न भी हुए तो व्यवहार के लिए ही सही। दोनो जब साथ रहेगे, एक दिन हृदय भी स्वच्छ हो ही जायेगे। दूरी का भ्रम निकटता की दृष्टि से एक दिन समाप्त हो जाता है। नारी अपने सतीत्त्व की ज्योति मे शकाओ के अन्धकार को एक क्षरण मे समाप्त कर देती है।

वृद्ध जब राजेश के पास पहुचा वह घर ही था। उसने देखते ही वृद्ध को पहचान लिया। चारपाई से उठ प्रणाम कर राजेश वृद्ध से बोला—"आइये।"

"अब क्या समाचार है तुम्हारे बेटा राजेश?"

"सब ठीक है पिताजी! आप सुनाइये।"

"मै क्या सुनाऊँ बेटा! विधाता ने तुम्हे जो दुख दिया है वह तो अविस्मरणीय ही है। फिर भी एक शुभ सूचना लेकर तुम्हारे पास आया हूँ। यदि अवसर हो तो कह दूँ।"

"आप बुजुर्गों की बाते न सुनने के समय का प्रश्न ही नहीं उठता।"

"तो फिर सुनो बेटा रजनी एक पुत्र की माँ बन गई है।"

"यह तो बडी अच्छी बात है। ईश्वर बच्चे को प्रसन्न रखे।"

"उस दिन मै कहना भूल गया। रजनी को अस्पताल मे नौकरी भी मिल गई। शायद उसने आपको कभी बताया भी हो ?"

"यह और भी अच्छी बात है।"

"इस समय केवल इतना कहने से कार्य नही चलेगा राजेश।"

"इससे अधिक और मै कह ही क्या सकता हूँ ?"

"कहना ही नही बेटा, तुम्हे कुछ करना भी चाहिए।"

"आप तो जानते है इस समय मैं कुछ भी करने की स्थिति मे नहीं हूँ।"

"करना क्या है राजेश। अपनो को अपनाने का प्रश्न है केवल।"

"अपने पराये की परिभाषा तो बडी जटिल है, पिताजी।"

"जटिल तो ससार मे कुछ भी नही है, प्रिय राजेश। तुम मुझे पिता और मैं तुम्हे बार-बार पुत्र कह रहा हूँ। जानते हो कितना सुख है इसमे तुम्हारा और मेरा। अब यदि तुम मुझे यहाँ से उठा दो, तो वह हम दोनो का उतना ही बडा दुख भी बन जायेगा। बस मेरे विचार से यही है अपना और परायापन। किसी भी मधुर सम्बन्ध मे कर्त्तव्य और भावना का समावेश होता है। इन दोनो मे से जहॉ भावना प्रधान है, वहाँ सम्बन्ध की गहराई है और जहाँ कर्तव्य प्रधान है वहॉ सम्बन्ध की व्यापकता स्वयँ सिद्ध हो जाती है। तुम स्वयँ विचार करके देख लो।"

"और जहाँ कर्तव्य और भावना मे से कुछ भी न हो।"

"तो फिर वहा धर्म के महत्व को स्वीकार कर लिया जाये।"

"क्या बतायेगे यह धर्म क्या वस्तु है ?"

"आत्मा की स्वीकृति ही धर्म है राजेश।"

"अच्छा अब मै आपके लिये चाय लाता हूँ।'

"मै तुम्हारी चाय नही पी सकूँगा बेटा।"

"क्यो ? इसमे क्या बात है ?"

"देखो राजेश ! रजनी मेरी पुत्री है और हमारे निश्चयानुसार तुम उसके पति हो। इसीलिए तुम्हारा पानी भी मैं नही पी सकता।" राजेश ने मन मे सोचा—एक राधा के माता-पिता है जो उसकी कमाई पर दिन बिता रहे है। दूसरे उनके विपरीत ये वृद्ध है जो सम्बन्ध के कच्चे धागो को जोडते फिर रहे है। वह बोला—

"आप किस युग की बाते कर रहे है बाबा। इस युग मे तो लडकियो की कमाई खाई जाती है। आप तो एक कप चाय मे ही धर्म भ्रष्ट समझ बैठे।"

"मुझे बाबा न कह कर यदि पिताजी ही कहो तो अच्छा है राजेश।"

"क्षमा करना मै भूल गया था।"

"अब सुनो चाय की बात मै इस बात का कट्टर विरोधी हूँ कि लडकियो की कमाई खाई जाये।"

"यह तो एक रूढिवादी परम्परा है, पिताजी !"

"देखो राजेश रूढियाँ सब ही व्यर्थ नही होती। बहुत सी रूढियाँ तो ऐसी है, जिनको तोडकर आज हम केवल पाप भागी ही बने है। याद रखो, हमारे देश की प्रत्येक रूढि के पीछे कोई न कोई सत्य अवश्य छिपा हुआ है। इसीलिए रूढियो की उपेक्षा मत करो।"

"क्या बता सकेंगे, सन्तान विहीन वृद्ध और वृद्धाओ का बुढापा निर्धनता की स्थिति मे किस प्रकार व्यतीत हो सकता है ?'

"इसका उत्तर तो सीधा है। उनकी देखभाल करना सरकार का धर्म है। जो सरकार अपने वृद्धो को रोटी नही दे सकती, वह सरकार ही निर्जीव है। वृद्धो का आर्शीवाद देश के लिए उतना ही आवश्यक है जितना फूल के लिए सुगन्ध और रात के लिये चाँदनी।"

एक बात और बतायेगे आप ?"

"एक नही दो। हमने जीवन का क्रियात्मक अध्ययन किया है बेटा।"

"क्या लडकियो को विवाह नही करना चाहिए।"

"यह कौई पूछने की बात है। मेरी दृष्टि मे तो एक अविवाहित युवती गर्मी की ऋतु मे तपी हुई उस मृगी के समान है जो छाया और जल की खोज मे प्रत्येक समय भटकती रहती है। न जाने इस युग मे कुछ युवतियो को अविवाहित रहने का क्या भूत सवार हो गया है। लता चाहे मकान की छत पर चढ जाये, वायु के झोके उसे इधर-उधर झुकाये बिना नही रहते। मै समझता हूँ तुम मेरी बात समझ गये होगे।"

राजेश को लगा—वृद्ध की बातें अनुभूतियो की गहराई पर आधारित है। वह जैसे उनसे कुछ पा रहा हो। वह बोला—

"यह बात भी मेरे विचार से पुरानी पड गई है इस युग मे।"

"सत्य कभी पुराना नही होता राजेश। यौवन काल मे किसी भी स्थिति मे प्राणी प्रकृति की पुकार का दमन नही कर सकता। खूँटे से खुलकर जैसे जानवर इधर-उधर भटकता रहता है, यही दिशा अविवाहित युवक और युवतियो की है। उनके लिए बन्धन अनिवार्य है।"

"अच्छा अब यह बताइये आपकी क्या सेवा करूँ?"

"इस बात का अभी तुमने अवसर ही नही दिया है मुझे।"

"मुझे अवसर न देने वाला न मान कर यदि अपना सेवक समझें तो अच्छा है। कहिए मेरे योग्य क्या सेवा है।"

"यही कि मेरे साथ अस्पताल चलो। रजनी ने बुलाया है।"

"यह तो सम्भव नही है पिताजी।"

"अभी तो तुम कह रहे थे मुझे आज्ञा दीजिए। मैं सेवक हूँ।"

"मैंने आपकी सेवा की बात की थी और आप इस विषय को दूसरी ओर खीच ले गये। इस विषय मे तो मुझे क्षमा कर दीजिए।"

"मेरे साथ चलने मे तुम्हे क्या आपत्ति है राजेश?"

"देखिए पिताजी! प्रथम तो अभी मेरा मन ही स्वस्थ नही है। दूसरे अभी मेरी आत्मा ने भी आज्ञा नही दी है। इसीलिये मै असमर्थ हूँ आपके साथ चलने मे।"

"देख लो राजेश ! कही ऐसा न हो, धर्म की आड मे तुम अधर्म कर बैठो । मैं चाहता हूँ तुम मेरी बात मान जाओ ।

"जो दड मै पा चुका हूँ, उसको सहन करने के पश्चात् अब मुझे किसी भी दड का भय नही है । आदरणीय ! जो हुआ जब वह देख लिया तो फिर जो होगा, वह भी देखा जायेगा ।"

"भूल पर भूल करना बुद्धिमानी नही है राजेश ।

"दड के सहन की सामर्थ्य होने पर भूल करने से मनुष्य को भय नही होता पिताजी ।"

"तो यह तुम्हारा अन्तिम निश्चय है ?"

"अभी तो आप यही समझ ले ।"

"साथ चलकर केवल बच्चे को देख लेते ।'

"समय आने दीजिए । सहज पकने से ही फल मीठा बताया गया है ।"

इस कथन के साथ ही वृद्ध उठे और सीधे अस्पताल को चले गये ।

६५

धर्मार्थी जी आजकल दिन-रात मिल मे ही रहते है । मिल का जो द्वार मजदूरो के क्वार्टरो की ओर है, उसके ऊपर दो कमरे है । वह उन्ही मे रहते हैं । मजदूरो की प्रत्येक बात का अब उन्हे तुरन्त पता चलता रहता है । प्रत्येक मजदूर उनसे आज्ञा लिये बिना ही जब चाहे, मिल सकता है । उन्हे अब विश्वास हो गया है मजदूर केवल प्रेम-भाव से ही वश मे आ सकते है । दमन का समय अब समाप्त हो गया है । मिल के बडे अधिकारी उनसे मिलने मे भय खाते है, और मजदूर घोड़े की भाति उछलते उनके पास चले जाते है । मजदूरो मे इस बात का

अनुकूल प्रभाव पडा है। राजेश कुछ दिनो से मिल मे आता नही है। इसीलिए भी मजदूर धर्मार्थी जी की मुट्ठी मे बन्द होने जा रहे है।

धर्मार्थी जी को अब विश्वास हो गया है—मिल मे राजेश के पजे अब नही जायेगे। राजेश के विरोध मे जमकर प्रचार किया जा रहा है। उसके चरित्र पर जी खोलकर कीचड उछाली गई है। यहाँ तक भी प्रचार किया गया है कि राजेश ने अपनी पत्नी को स्वय ही मरवाया है। अनेक बार एक सत्य की, सत्य सिद्ध करने के लिए यदि पुनरावृति की जाये वह सत्य बनकर ही रहता है। राजेश के विरोध मे भी यही किया जा रहा है। मजदूरो को, राजेश से विश्वास उठता जा रहा है।

मगलवार को धर्मार्थी जी व्रत पहले से ही रखते हैं। बन्दरो को चने डालने का नियम भी भग नही हुआ। अब उन्होने एक और आदेश जारी कर दिया है—"मिल क्वार्टरो से बन्दरो को कोई न भगाये। बन्दर यदि किसी को हानि पहुँचायेगे, तो हम उसकी पूर्ति कर देगे। किसी की पुरानी धोती भी यदि बन्दरो ने फाड दी तो उसको नई धोती दे दी गई। सेठ जी ने हर इकादशी को कुछ पुन्य करना निश्चय कर लिया है। यूँ तो वह पहले ही पुण्य आत्मा है न जाने कितने दीनो का वह उद्धार कर चुके है। किन्तु इस समय इकादशी का पुन्य केवल मजदूरों के निमित्त निश्चित किया गया है। प्रत्येक इकादशी को वह मिल मे अपने हाथो से कुछ न कुछ दान अवश्य देते है। कभी वह प्रत्येक क्वार्टरो मे चार-चार लड्डू बँटवाते है। कभी दो-दो सन्तरे या केले।

उस दिन धर्मार्थी जी ने रविवार को मनोरजन कार्यक्रम की जो मजदूरो को सूचना दी थी, उसकी तिथि बदल गई है। सेठ जी की इच्छा से यह कार्यक्रम इकादशी को निश्नित हुआ। इसके लिए नृत्य, सगीत और कवि सम्मेलन की व्यवस्था पूर्ण हो चुकी है। धर्मार्थी जी ने कुछ समय पूर्व मजदूर कल्याण कोष की स्थापना की थी। मनोरजन कार्यक्रम का सम्पूर्ण व्यय उसी कोष से होगा। वह समझते है मजदूरो को सबसे बडा अभाव मनोरजन का ही है। इस दृष्टि से वह सन्तुष्ट

होने चाहिये ।

इकादशी को प्रातःकाल ही मिल में हलचल सी मच गई । एक ओर मजदूरो को बॉटने के लिए लड्डू बनने आरम्भ हो गये । दूसरी ओर रगमच की सजावट होने लगी । इस बार लड्डू आकार मे कुछ बडे है । एक पाव भर चढेगे । प्रत्येक कारीगर को चार लड्डू दिये जायेगे । मिल के मुख्य द्वार को भली प्रकार कल ही सजा दिया गया था । सब कुछ होने पर भी धर्मार्थी जी को एक चिन्ता जोक की तरह चिपटी हुई है, कही पुरानी गडबड की पुनरावृति न हो जाय । मजदूरो को हल्ला-गुल्ला करते देर नही लगती । इसलिए वह मजदूरो के मन की बात जानने के लिए बहुत उत्सुक है ।

सवेरे के दस बजे होगे । उस समय धर्मार्थी जी सम्पूर्ण तैयारी का निरीक्षण कर रहे थे । उसी समय उनके पास धन्नू गुडा और उसके पॉच प्रमुख साथी आ गये । उनके प्रणाम का धर्मार्थी जी ने हाथ जोड कर उत्तर दिया । न चाहने पर भी वह उनसे बोले—

"कहो पहलवान धन्नू क्या समाचार है तुम्हारे ?"

"सब ठीक है शाब । आप कोई चिन्ता न करे ।"

"यह तो तुम पहले से ही कहते चले आ रहे हो । किया आज तक कुछ भी नही । तुम्हारी तो वही कहावत है नापो सौ गज और फाडो न एक गज भी ।"

"नही शाब । इस बार मैने नई टोली बना ली है । जब से झगडा हुआ मै बहुत सावधान हो गया हूँ ।"

"शावधान हो गये हो, या सावधान । पहले बोलना तो सीख लो । ऐसा लगता है जब से तुम्हारी पिटाई हुई है । तुम्हारी आवाज भी बदल गई है । सचमुच मुझे तुम्हारे उपर बहुत विश्वास था ।"

धन्नू इस व्यग्य से लाल हो गया । गर्व भरे स्वर मे वह बोला—

"अबकी बार कोई मौका आने दीजिए, मै सालो की धज्जियाँ उड़ा के रख दूँगा । जब तो मै धोके मे आ गया था ।"

"ऐसे ही उडाओगे, जैसे राजेश की उडाई है ।"

"उसका तो अब मैंने आना ही बन्द कर दिया है ।"

"वह तुम्हारे भय से नही हुआ बहादुर। उसकी पत्नी मर गई है ।"

"आप यकीन करो । अब यहाँ आयया, तो पत्नी के पास ही पहुच जायेगा ।"

"चलो फिर देखेगे । आज थोडा सावधान रहना ।"

"कह तो दिया सरकार आप चिन्ता न करे ।"

"एक बात याद रखना आज पीनी नही है ।"

"पीने के बिना काम कैसे चलेगा सरकार ।"

"एक दिन न पीने मे क्या मर जाओगे ।"

"चलिये फिर ऐसा ही होगा ।"

धन्नू अपने साथियो सहित वहाँ से चला गया। उसके जाते ही धर्मार्थी जी सारी व्यवस्था के निरीक्षण के लिए चल दिए। उन्होने एक चक्कर क्वार्टरो का भी लगाया। इस समय उनके साथ मिल के छोटे बडे कर्मचारियो का एक झुँड था। धर्मार्थी जी जान पडते थे जैसे कोई शिकारी अपने कुत्तो के साथ शिकार के लिए निकल पडा है। वह एक बजे तक क्वार्टरो मे घूमते ही रहे। इस समय उनके हाथ एक पल के लिये भी भाल से अलग नही हुए। जब थक गये, तो डेढ बजे अपने विश्राम कक्ष मे आकर उन्होने चादर तान ली।

चार बजे जब धर्मार्थी जी सोकर उठे, सारी व्यवस्था पूर्ण हो चुकी थी। एक बार उन्होने फिर सम्पूर्ण तैयारी को देखा। निश्चयानुसार पौने पाँच बजे दो नर्तकी दल बल सहित मिल मे पहुच गई। गायिका पाँच बजे आई। और फिर सबसे पीछे राजधानी के कविगरण वहाँ आने आरम्भ हो गए। धर्मार्थी जी इस समय नर्तकियो के पास से कहीं जाना नही चाहते, फिर भी सवा पाच बजे उनको स्वागत द्वार पर आना पड़ा। इस समय वहाँ पर सेठजी की प्रतीक्षा मे बहुत बडी भीड़ एकत्र थी। सबसे आगे धर्मार्थी जी खड़े थे। सेठ जी पाँच बजकर ठीक

पच्चीस भिनट पर वहाँ आये । धर्मार्थी जी ने उन्हे सहारा देकर कार से उतारा । और फिर स्वागत की सम्पूर्ण क्रियाओ के पश्चात् सब ही रग-मच की ओर चल पडे । सेठ जी बहुत धीरे-धीरे चल रहे थे । इसीलिए सबकी गति भी धीमी थी । अन्त मे सबने अपना स्थान ग्रहण कर लिया ।

सेठ जी परिवार सहित रग मच के ठीक सामने आराम कुर्सियो पर बैठे । उनकी मित्र मडली के लिये उनके पीछे कुर्सियाँ सुरक्षित थी । वे उन पर जम गये । तीसरी कुर्सी की पक्ति मे मिल के उच्च अधिकारी बैठाये गये । इन कुर्सियो के पीछे आज मजदूरो के लिये बैच बिछाये गये थे । वह कुछ उन पर अपना स्थान ग्रहण कर गये । बैच कम थे इसीलिए दो तिहाई मजदूरो के पीछे खडा रहना पडा । इसीलिए कुछ देर गडबड सी भी मची रही । अन्त मे सब शान्त हो गये ।

रगमच से पर्दा उठा और दो नर्तकी मृदग के स्वर के साथ नृत्य करती हुई दिखाई दी । उपस्थित दर्शको की दृष्टि उसी ओर खिच गई । इस समय दोनो नर्तकी कौनसा नृत्य प्रदर्शन कर रही थी, यह वहाँ एक दो को छोड कोई भी नही जानता था । पढे-लिखे व्यक्ति अपना कला सम्बन्धी ज्ञान प्रकट कर रहे थे । एक ने कहा—

"यह भाट नाट्य कला है ।" दूसरा बोला—

"भाट नाट्य कला नही मिया, भरत नृत्य कला है ।"

तीसरे ने सुधार किया—"नही यार यह कत्थक नृत्य है ।" कुछ ऐसे भी थे, जिन्होने नृत्य को राधा कृष्ण लीला कहकर ही अपनी जिज्ञासा को शान्त कर लिया । कुछ ऐसे भी थे, जो इस विषय मे कुछ न कहकर केवल नृतकियो के सुगठित अगो की लचक पर ही दृष्टि जमाये थे । मजदूरों की दृष्टि वस्त्र भूषण पर ही जमी हुई थी । कुछ नर्तकियो के वक्ष पर आँखे गडाये थे, और कुछ सुडौल जघाओ मे ही उलझ कर रह गये थे । सेठ जी की दृष्टि नर्तकियो के हाव भाव के साथ

गिरगट के समान रग बदल रही थी। धर्मार्थी जी इस समय किस लोक मे थे, यह वही जानते होगे।

दस मिनट तक नृत्य हुआ और फिर पर्दा गिर गया। पर्दा फिर उठा तो रगमच पर दो गायिका दिखाई दी। उन्होने एक ही पल मे अपनी मधुर तान से श्रोताओ की श्रुतियो को छीन लिया। गाना शृगार रस मे डूबा हुआ था। इस बार सेठ जी का मुँह ऐसा जान पड़ता था, जैसे वह खटाई खा रहे हो। उनके विषय मे सब जानते है। मन्दिर में वह भक्ति रस मे पके गीत सुनते है। सूर, मीरा, नानक आदि सन्तो के पद उन्हे बहुत प्रिय है। आज उन्होने चार गाने शृंगार रस के सुने। अन्दर से चाहे अच्छे ही लगे हो भी उन्होने ताली एक बार भी नहीं बजाई।

नृत्य और गान की समाप्ति पर कवि सम्मेलन हो ही न सका। सेठ जी समय के अभाव मे जैसे ही खडे हुए, सारे दर्शको मे गडबड़ मच गई। सेठ जी को विदा कर धर्मार्थी जी रगमच पर आकर खड़े हुये, और कुछ शान्ति स्थापित होने पर बोले—

"आज मेरे भाइयो ने कार्यक्रम को शान्त भाव से सूना, और देखा, इसके लिये मै उनका धन्यवाद करता हूँ।"

उसी समय उनके पास उपस्थित कविगण आ गये। धर्माथी जी ने प्रत्येक को किराये के लिये दस-दस रुपये दे कर अपना पिंड छुडवाया। उन्हे इस समय नर्तकियो और गायिकाओ के लिये चाय पानी की बहुत चिन्ता थी। वह फिर शीघ्र ही कार्यमुक्त हो उनके पास चले गये।

मजदूरो की टोलियां जब घर लौट रही थी, बात-चीत करती जा रही थी। धर्मार्थी जी का समर्थक कोई कह रहा था—

"सचमुच धर्मार्थी जी ने मिल मे नया जीवन डाल दिया है।"

कुछ कहते हुए जा रहे थे—"सेठ जी भी धर्माथी जी के हाथों में खेलते है।"

एक मन चला युवक कह रहा था —

"लडकियाँ क्या थी, यारो परियाँ थी परियाँ। इनको तो देखने से ही भूख भाग गई है।" एक युवक ने उसकी बात काट दी—

"यह बात नही है भाई। धर्मार्थी जी चरित्र के बहुत अच्छे हैं।

कुछ सोच रहे थे,—यह सब मजदूरो को बुद्धू बनाने का ढकोसला है। कुछ बेचारो को घर पहुचने की जल्दी थी। जाते ही चार लड्डू जो मिलेगे। दूसरी ओर धर्मार्थी जी ने कमरे मे पहुच कर देखा—खाने पीने की सम्पूर्ण व्यवस्था पूर्ण हो चुकी है। उनके जाते ही पीने का दौर चला और फिर सब भोजन पर जुट गये। उसी समय एक नर्तकी बोली—

"यहाँ पर नृत्य के जानकर तो बहुत ही कम लोग थे।"

धर्मार्थी जी ने उत्तर दिया—

"यह आपको मानना ही होगा कि सब रस मग्न हो गये।"

उसी समय एक गायिका बीच मे ही बोली—

"गाने मे तो विशेष रुचि थी नही श्रोताओ की।"

धर्मार्थी जी ने गायिगा का समर्थन किया—

"गाना तो रेडियो के कारण बहुत ही सस्ता मनोरजन हो गया है।"

भोजन के साथ साथ बात-चीत का कार्यक्रम भी नौ बजे तक समाप्त हो गया। इसके बाद गायिका तो विदा हो गई, और नर्तकियाँ उस रात वही ठहरी।

३६

रजनी अस्पताल से घर जा रही है। वह और उसका बच्चा पूर्ण स्वस्थ है, परन्तु मन रूप मे स्वस्थ नही कही जा सकती। वह आशा और निराशा के झूले मे झूल रही है। वह जब बच्चे को देखती है फूली नही समाती। पुत्र रत्न को पाकर वह समझ रही है, राजेश का वह अन्तिम आर्शीवाद पूर्ण हो गया। विपरीत इसके जब वह सोचती है— आर्शीवाद देने वाला अपने बच्चे को देखना भी नही चाहता। वह निराशा मे डूब जाती है। जब से वृद्ध ने बताया है— "राजेश बुलाने पर भी नही आया।" रजनी की आशा सवेदना मे बदल गई है। उसको विश्वास था—राजेश इस समय अवश्य आयेगा। जब न आया, तो रजनी ने स्वयं को सान्त्वना दी।— कोई बात नही! जब वह नही रहा, तो यह भी नही रहेगा। विधाता जब इतनी दया कर सकते है तो क्या इतनी न करेंगे। इस समय मे दो सत्य आत्माओ की छत्र-छाया मे हूँ। मुझे स्नेह का अवलम्बन भी मिल गया है। मेरे जीवन का कुछ लक्ष्य निश्चित हो गया है। मै अपने कर्त्तव्य से विचलित नही हूँगी। हो सकता है कभी राजेश की विवेक दृष्टि सत्य को देखने मे समर्थ हो जाये।"

रजनी दस बजे घर जायेगी। इस समय नौ बजे है। उसकी कुछ नर्स सखियाँ उसके पास एकत्र हो गई है। वह लगभग सभी मैट्रिक पास है रजनी का बी० ए० पास होने से इनमे कुछ विशेष सम्मान है।

इस समय उन्होने सम्मान की बात को भूलकर कुछ छेडछाड करने का मन ही मन निश्चय कर लिया है। वह आते ही मनोविनोद के कार्य-

क्रम मे जुट गई । उनमे से एक ने सबसे पहले घर पर दावत की बात चलाई। वह बोली—

"घर पर दावत मे शुद्ध घी की मिठाई खायेगे हम तो।"

दूसरी बोली—"जीजा जी को तो दिखाया ही नही है बहन जी ने।"

तीसरी बोली—"छिपाकर रखती है कही नजर न लग जाये।"

चौथी ने हठ की—"हम घर जायेगे और देखकर ही आयेगे।" पाँचवी बेचारी चुपचाप बच्चे से ही खेलती रही।

उसी समय वृद्ध और वृद्धा वहाँ आ गये।

उनको देखते ही, एक को छोड़ सबकी सब वहाँ से खिलखिला कर हँसती हुई वहाँ से चली गई। वृद्धा ने आते ही रजनी को गर्म दूध पिलाया और फिर वह बच्चे के पास बैठ गई। वृद्ध रजनी को तैयार देख टैक्सी लेने चले गये।

उनके जाते ही उपस्थित नर्स बोली—

"जीजा जी नही आयेंगे क्या?"

रजनी ने अन्दर की निराशा का गला घोटते हुए उत्तर दिया—

"वह दिल्ली से बाहर गये है।"

"क्या उनको सूचना नही भेजी गई?"

"सूचना तो भेज दी। कोई आवश्यक कार्य हो गया होगा।"

"जब आयेंगे तो हम उनकी खूब खबर लेंगे।"

वृद्ध उसी समय टैक्सी लेकर आ गये। वृद्धा ने बच्चे को अपनी गोद मे बहुत सम्भाल कर उठाया। रजनी भी उठी और नर्स के साथ धीरे-धीरे चलती हुई टैक्सी तक आई। वृद्ध और वृद्धा को नर्स हाथ जोडकर, लौट गई। और फिर तीनो टैक्सी द्वारा घर आ गये। वहाँ बिस्तर पहले ही तैयार था। रजनी आते ही मुँह ढाँप कर लेट गई। उस समय वृद्धा बोली—

"क्या नाम रखोगे मुन्नू का?"

"मुन्नू नाम भी रख रही हो, और फिर मुझसे पूँछ भी रही हो।'

"मुन्नू तो कुछ दिनो के लिये रख लिया है।"

"और यह सदैव चलता रहै तो क्या बुरा है ?"

"बडा होकर हमे गालियाँ रही देगा। कहेगा नाम भी रखना नही आया आपको।"

"बडा होकर तो बडा आदमी बन जायेगा, देवी जी। मैने जन्म के नक्षत्र देख लिये है। उस समय तो हजार नाम रखने वाले बन जाते है। इसी मुन्ना का मनी राम बनते देर नही लगती।"

"आप तो हर समय मास्टर जी बने रहते है।"

"जिसकी बेटी बी० ए० पास हो, वह क्या मास्टर भी नही है।"

"अच्छा अब यह बताओ खाना कौन बनायेगा।" हमे भूख ही नहीं है। रजनी जो कुछ कहे बना देना।"

"रजनी को तो दूध ही पिलाऊँगी।"

"मेरा तो विचार है सवेरे हलवा, दोपहर को दाल, और शाम को दूध दिया करो। फल जब इच्छा हो तब ही दे दिया।

"मै आपसे अधिक जानती हूँ, मुझे क्या बता रहे है।"

"क्यो नही जी, आप तो पूरी मास्टरनी है।"

"मास्टरो की घरवाली मास्टरनी ही तो होती हैं।"

"मुझे तो लगता है बुढापे मे तुम्हारे पर निकल आये हैं।"

"और आप पूरे हवाई जहाज ही बन गये है।"

अच्छा अब चाय बनाओ। बहँस न करो।"

वृद्धा उठी और चाय बनाने लग गई। वृद्ध रजनी से बोले—

"तबियत तो ठीक है बेटी।"

"हाँ पिताजी बिल्कुल ठीक हूँ।"

"मन भारी न करना बेटी ! सब ठीक हो जायेगा।"

"आप और माता जी का प्यार पाकर भी यदि मै मन भारी करूँ तो यह मेरी ही दुर्बुद्धि का दोष है।

"देखो बेटी। धर्म मे दृढ और कर्त्तव्य के प्रति सचेत व्यवक्ति का

"देख लो राजेश ! कही ऐसा न हो, धर्म की आड मे तुम अधर्म कर बैठो । मै चाहता हूँ तुम मेरी बात मान जाओ ।

"जो दड मै पा चुका हूँ, उसको सहन करने के पश्चात् अब मुझे किसी भी दड का भय नही है । आदरणीय ! जो हुआ जब वह देख लिया तो फिर जो होगा, वह भी देखा जायेगा ।"

"भूल पर भूल करना बुद्धिमानी नही है राजेश ।

"दड के सहन की सामर्थ्य होने पर भूल करने से मनुष्य को भय नही होता पिताजी ।"

"तो यह तुम्हारा अन्तिम निश्चय है ?"

"अभी तो आप यही समझ ले ।"

"साथ चलकर केवल बच्चे को देख लेते । '

"समय आने दीजिए । सहज पकने से ही फल मीठा बताया गया है ।"

इस कथन के साथ ही वृद्ध उठे और सीधे अस्पताल को चले गये ।

६५

धर्मार्थी जी आजकल दिन-रात मिल मे ही रहते हैं । मिल का जो द्वार मजदूरो के क्वार्टरो की ओर है, उसके ऊपर दो कमरे है । वह उन्ही मे रहते है । मजदूरो की प्रत्येक बात का अब उन्हे तुरन्त पता चलता रहता है । प्रत्येक मजदूर उनसे आज्ञा लिये बिना ही जब चाहे, मिल सकता है । उन्हे अब विश्वास हो गया है मजदूर केवल प्रेम-भाव से ही वश मे आ सकते है । दमन का समय अब समाप्त हो गया है । मिल के बडे अधिकारी उनसे मिलने मे भय खाते है, और मजदूर घोडे की भाति उछलते उनके पास चले जाते है । मजदूरो मे इस बात का

अनुकूल प्रभाव पडा है। राजेश कुछ दिनो से मिल मे आता नही है। इसीलिए भी मजदूर धर्मार्थी जी की मुट्ठी मे बन्द होने जा रहे है।

धर्मार्थी जी को अब विश्वास हो गया है—मिल मे राजेश के पजे अब नही जायेगे। राजेश के विरोध मे जमकर प्रचार किया जा रहा है। उसके चरित्र पर जी खोलकर कीचड उछाली गई है। यहाँ तक भी प्रचार किया गया है कि राजेश ने अपनी पत्नी को स्वय ही मरवाया है। अनेक बार एक सत्य की, सत्य सिद्ध करने के लिए यदि पुनरावृत्ति की जाये वह सत्य बनकर ही रहता है। राजेश के विरोध मे भी यही किया जा रहा है। मजदूरो को, राजेश से विश्वास उठता जा रहा है।

मगलवार को धर्मार्थी जी व्रत पहले से ही रखते है। बन्दरो को चने डालने का नियम भी भग नही हुआ। अब उन्होने एक और आदेश जारी कर दिया है—"मिल क्वार्टरो से बन्दरो को कोई न भगाये। बन्दर यदि किसी को हानि पहुँचायेगे, तो हम उसकी पूर्ति कर देगे। किसी की पुरानी धोती भी यदि बन्दरो ने फाड दी तो उसको नई धोती दे दी गई। सेठ जी ने हर इकादशी को कुछ पुन्य करना निश्चय कर लिया है। यूँ तो वह पहले ही पुण्य आत्मा है न जाने कितने दीनो का वह उद्धार कर चुके है। किन्तु इस समय इकादशी का पुन्य केवल मजदूरों के निमित्त निश्चित किया गया है। प्रत्येक इकादशी को वह मिल में अपने हाथो से कुछ न कुछ दान अवश्य देते है। कभी वह प्रत्येक क्वा-र्टरो मे चार-चार लड्डू बँटवाते है। कभी दो-दो सन्तरे या केले।

उस दिन धर्मार्थी जी ने रविवार को मनोरजन कार्यक्रम की जो मजदूरो को सूचना दी थी, उसकी तिथि बदल गई है। सेठ जी की इच्छा से यह कार्यक्रम इकादशी को निश्नित हुआ। इसके लिए नृत्य, सगीत और कवि सम्मेलन की व्यवस्था पूर्ण हो चुकी है। धर्मार्थी जी ने कुछ समय पूर्व मजदूर कल्याण कोष की स्थापना की थी। मनोरजन कार्यक्रम का सम्पूर्ण व्यय उसी कोष से होगा। वह समझते हैं मजदूरो को सबसे बडा अभाव मनोरजन का ही है। इस दृष्टि से वह सन्तुष्ट

होने चाहिये ।

इकादशी को प्रातःकाल ही मिल में हलचल सी मच गई। एक ओर मजदूरो को बाँटने के लिए लड्डू बनने आरम्भ हो गये । दूसरी ओर रगमच की सजावट होने लगी । इस बार लड्डू आकार मे कुछ बडे है । एक पाव भर चढेगे। प्रत्येक कारीगर को चार लड्डू दिये जायेगे । मिल के मूल द्वार को भली प्रकार कल ही सजा दिया गया था । सब कुछ होने पर भी धर्मार्थी जी को एक चिन्ता जोंक की तरह चिपटी हुई है, कही पुरानी गडबड की पुनरावृति न हो जाय । मजदूरो को हल्ला-गुल्ला करते देर नही लगती । इसलिए वह मजदूरो के मन की बात जानने के लिए बहुत उत्सुक है ।

सवेरे के दस बजे होगे । उस समय धर्मार्थी जी सम्पूर्ण तैयारी का निरीक्षण कर रहे थे । उसी समय उनके पास धन्नू गुडा और उसके पॉच प्रमुख साथी आ गये । उनके प्रणाम का धर्मार्थी जी ने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया । न चाहने पर भी वह उनसे बोले—

"कहो पहलवान धन्नू क्या समाचार है तुम्हारे ?"

"सब ठीक है शाब । आप कोई चिन्ता न करे ।"

"यह तो तुम पहले से ही कहते चले आ रहे हो । किया आज तक कुछ भी नही । तुम्हारी तो वही कहावत है नापो सौ गज और फाडो न एक गज भी ।"

"नही शाब । इस बार मैने नई टोली बना ली है । जब से झगडा हुआ मै बहुत सावधान हो गया हूँ ।"

"शावधान हो गये हो, या सावधान । पहले बोलना तो सीख लो। ऐसा लगता है जब से तुम्हारी पिटाई हुई है । तुम्हारी आवाज भी बदल गई है । सचमुच मुझे तुम्हारे उपर बहुत विश्वास था ।"

धन्नू इस व्यग्य से लाल हो गया। गर्व भरे स्वर मे वह बोला—

"अबकी बार कोई मौका आने दीजिए, मै सालो की धज्जियाँ उड़ा के रख दूँगा । जब तो मैं धोके मे आ गया था ।"

"ऐसे ही उडाओगे, जैसे राजेश की उडाई है।"

"उसका तो अब मैंने आना ही बन्द कर दिया है।"

"वह तुम्हारे भय से नही हुआ बहादुर। उसकी पत्नी मर गई है।"

"आप यकीन करो। अब यहाॅ आयेगा, तो पत्नी के पास ही पहुच जायेगा।"

"चलो फिर देखेगे। आज थोडा सावधान रहना।"

"कह तो दिया सरकार आप चिन्ता न करे।"

"एक बात याद रखना आज पीनी नही है।"

"पीने के बिना काम कैसे चलेगा सरकार।"

"एक दिन न पीने से क्या मर जाओगे।"

"चलिये फिर ऐसा ही होगा।"

धन्नू अपने साथियो सहित वहाॅ से चला गया। उसके जाते ही धर्मार्थी जी सारी व्यवस्था के निरीक्षण के लिए चल दिए। उन्होने एक चक्कर क्वार्टरो का भी लगाया। इस समय उनके साथ मिल के छोटे बडे कर्मचारियो का एक झुंड था। धर्मार्थी जी जान पडते थे जैसे कोई शिकारी अपने कुत्तो के साथ शिकार के लिए निकल पडा है। वह एक बजे तक क्वार्टरो मे घूमते ही रहे। इस समय उनके हाथ एक पल के लिये भी भाल से अलग नही हुए। जब थक गये, तो डेढ़ बजे अपने विश्राम कक्ष मे आकर उन्होने चादर तान ली।

चार बजे जब धर्मार्थी जी सोकर उठे, सारी व्यवस्था पूर्ण हो चुकी थी। एक बार उन्होने फिर सम्पूर्ण तैयारी को देखा। निश्चयानुसार पौने पाॅच बजे दो नर्तकी दल बल सहित मिल मे पहुच गई। गायिका पाॅच बजे आई। और फिर सबसे पीछे राजधानी के कविगण वहाँ आने आरम्भ हो गए। धर्मार्थी जी इस समय नर्तकियो के पास से कही जाना नही चाहते, फिर भी सवा पाच बजे उनको स्वागत द्वार पर आना पडा। इस समय वहाॅ पर सेठजी की प्रतीक्षा मे बहुत बड़ी भीड एकत्र थी। सबसे आगे धर्मार्थी जी खडे थे। सेठ जी पाँच बजकर ठीक

पच्चीस भिनट पर वहाँ आये । धर्मार्थी जी ने उन्हे सहारा देकर कार से उतारा । और फिर स्वागत की सम्पूर्ण क्रियाओ के पश्चात् सब ही रग-मच की ओर चल पडे । सेठ जी बहुत धीरे-धीरे चल रहे थे । इसीलिए सबकी गति भी धीमी थी । अन्त मे सबने अपना स्थान ग्रहण कर लिया ।

सेठ जी परिवार सहित रग मच के ठीक सामने आराम कुर्सियो पर बैठे । उनकी मित्र मडली के लिये उनके पीछे कुर्सियाँ सुरक्षित थी । वे उन पर जम गये । तीसरी कुर्सी की पक्ति मे मिल के उच्च अधिकारी बैठाये गये । इन कुर्सियो के पीछे आज मजदूरो के लिये बैंच बिछाये गये थे । वह कुछ उन पर अपना स्थान ग्रहण कर गये । बैंच कम थे इसीलिए दो तिहाई मजदूरो के पीछे खडा रहना पडा । इसीलिए कुछ देर गड़बड सी भी मची रही । अन्त मे सब शान्त हो गये ।

रगमच से पर्दा उठा और दो नर्तकी मृदग के स्वर के साथ नृत्य करती हुई दिखाई दी । उपस्थित दर्शको की दृष्टि उसी ओर खिंच गई । इस समय दोनो नर्तकी कौनसा नृत्य प्रदर्शन कर रही थी, यह वहाँ एक दो को छोड कोई भी नही जानता था । पढे-लिखे व्यक्ति अपना कला सम्बन्धी ज्ञान प्रकट कर रहे थे । एक ने कहा—

"यह भाट नाट्य कला है ।" दूसरा बोला—

"भाट नाट्य कला नही मिया, भरत नृत्य कला है ।"

तीसरे ने सुधार किया—"नही यार यह कत्थक नृत्य है ।" कुछ ऐसे भी थे, जिन्होने नृत्य को राधा कृष्ण लीला कहकर ही अपनी जिज्ञासा को शान्त कर लिया । कुछ ऐसे भी थे, जो इस विषय मे कुछ न कहकर केवल नृतकियो के सुगठित अगो की लचक पर ही दृष्टि जमाये थे । मजदूरो की दृष्टि वस्त्र भूषण पर ही जमी हुई थी । कुछ नर्तकियो के वक्ष पर आँखे गडाये थे, और कुछ सुडौल जघाओ मे ही उलझ कर रह गये थे । सेठ जी की दृष्टि नर्तकियो के हाव भाव के साथ

गिरगट के समान रग बदल रही थी। धर्मार्थी जी इस समय किस लोक मे थे, यह वही जानते होगे।

दस मिनट तक नृत्य हुआ और फिर पर्दा गिर गया। पर्दा फिर उठा तो रगमच पर दो गायिका दिखाई दी। उन्होने एक ही पल मे अपनी मधुर तान से श्रोताओ की श्रुतियो को छीन लिया। गाना शृगार रस मे डूबा हुआ था। इस बार सेठ जी का मुँह ऐसा जान पड़ता था, जैसे वह खटाई खा रहे हो। उनके विषय मे सब जानते है। मन्दिर मे वह भक्ति रस मे पके गीत सुनते है। सूर, मीरा, नानक आदि सन्तो के पद उन्हे बहुत प्रिय है। आज उन्होने चार गाने शृगार रस के सुने। अन्दर से चाहे अच्छे ही लगे हो भी उन्होंने ताली एक बार भी नहीं बजाई।

नृत्य और गान की समाप्ति पर कवि सम्मेलन हो ही न सका। सेठ जी समय के अभाव मे जैसे ही खडे हुए, सारे दर्शको मे गड़बड मच गई। सेठ जी को विदा कर धर्मार्थी जी रगमच पर आकर खड़े हुये, और कुछ शान्ति स्थापित होने पर बोले—

"आज मेरे भाइयो ने कार्यक्रम को शान्त भाव से सूना, और देखा, इसके लिये मै उनका धन्यवाद करता हूँ।"

उसी समय उनके पास उपस्थित कविगण आ गये। धर्मार्थी जी ने प्रत्येक को किराये के लिये दस-दस रुपये दे कर अपना पिंड छुडवाया। उन्हे इस समय नर्तकियो और गायिकाओ के लिये चाय पानी की बहुत चिन्ता थी। वह फिर शीघ्र ही कार्यमुक्त हो उनके पास चले गये।

मजदूरो की टोलिया जब घर लौट रही थीं, बात-चीत करती जा रही थी। धर्मार्थी जी का समर्थक कोई कह रहा था—

"सचमुच धर्मार्थी जी ने मिल मे नया जीवन डाल दिया है।"

कुछ कहते हुए जा रहे थे—"सेठ जी भी धर्माथी जी के हाथो में खेलते है।"

एक मन चला युवक कह रहा था—

"लडकियाँ क्या थी, यारो परियाँ थी परियाँ। इनको तो देखने से ही भूख भाग गई है।" एक युवक ने उसकी बात काट दी—

"यह बात नही है भाई। धर्मार्थी जी चरित्र के बहुत अच्छे हैं।

कुछ सोच रहे थे,—यह सब मजदूरो को बुद्धू बनाने का ढकोसला है। कुछ बेचारो को घर पहुचने की जल्दी थी। जाते ही चार लड्डू जो मिलेगे। दूसरी ओर धर्मार्थी जी ने कमरे मे पहुच कर देखा—खाने पीने की सम्पूर्ण व्यवस्था पूर्ण हो चुकी है। उनके जाते ही पीने का दौर चला और फिर सब भोजन पर जुट गये। उसी समय एक नर्तकी बोली—

"यहाँ पर नृत्य के जानकर तो बहुत ही कम लोग थे।"

धर्मार्थी जी ने उत्तर दिया—

"यह आपको मानना ही होगा कि सब रस मग्न हो गये।"

उसी समय एक गायिका बीच मे ही बोली—

"गाने मे तो विशेष रुचि थी नही श्रोताओ की।"

धर्मार्थी जी ने गायिगा का समर्थन किया—

"गाना तो रेडियो के कारण बहुत ही सस्ता मनोरजन हो गया है।"

भोजन के साथ साथ बात-चीत का कार्यक्रम भी नौ बजे तक समाप्त हो गया। इसके बाद गायिका तो विदा हो गई, और नर्तकियाँ उस रात वही ठहरी।

३६

रजनी अस्पताल से घर जा रही है। वह और उसका बच्चा पूर्ण स्वस्थ है, परन्तु मन रूप मे स्वस्थ नही कही जा सकती। वह आशा और निराशा के झूले मे झूल रही है। वह जब बच्चे को देखती है फूली नही समाती। पुत्र रत्न को पाकर वह समझ रही है, राजेश का वह अन्तिम आर्शीवाद पूर्ण हो गया। विपरीत इसके जब वह सोचती है— आर्शीवाद देने वाला अपने बच्चे को देखना भी नही चाहता। वह निराशा मे डूब जाती है। जब से वृद्ध ने बताया है— "राजेश बुलाने पर भी नही आया।" रजनी की आशा सवेदना मे बदल गई है। उसको विश्वास था—राजेश इस समय अवश्य आयेगा। जब न आया, तो रजनी ने स्वयं को सान्त्वना दी।— कोई बात नही ! जब वह नही रहा, तो यह भी नही रहेगा। विधाता जब इतनी दया कर सकते है तो क्या इतनी न करेंगे। इस समय मै दो सत्य आत्माओ की छत्र-छाया मे हूँ। मुझे स्नेह का आलम्बन भी मिल गया है। मेरे जीवन का कुछ लक्ष्य निश्चित हो गया है। मै अपने कर्त्तव्य से विचलित नही हूँगी। हो सकता है कभी राजेश की विवेक दृष्टि सत्य को देखने मे समर्थ हो जाये।"

रजनी दस बजे घर जायेगी। इस समय नौ बजे है। उसकी कुछ नर्स सखियाँ उसके पास एकत्र हो गई है। वह लगभग सभी मैट्रिक पास है रजनी का बी० ए० पास होने से इनमे कुछ विशेष सम्मान है।

इस समय उन्होने सम्मान की बात को भूलकर कुछ छेडछाड करने का मन ही मन निश्चय कर लिया है। वह आते ही मनोविनोद के कार्य-

क्रम मे जुट गई । उनमे से एक ने सबसे पहले घर पर दावत की बात चलाई। वह बोली—

"घर पर दावत मे शुद्ध घी की मिठाई खायेंगे हम तो।"

दूसरी बोली—"जीजा जी को तो दिखाया ही नही है बहन जी ने।"

तीसरी बोली—"छिपाकर रखती है कही नजर न लग जाये।"

चौथी ने हठ की—"हम घर जायेंगे और देखकर ही आयेंगे।" पाँचवी बेचारी चुपचाप बच्चे से ही खेलती रही।

उसी समय वृद्ध और वृद्धा वहाँ आ गये।

उनको देखते ही, एक को छोड सबकी सब वहाॅ से खिलखिला कर हँसती हुई वहाँ से चली गई। वृद्धा ने आते ही रजनी को गर्म दूध पिलाया और फिर वह बच्चे के पास बैठ गई। वृद्ध रजनी को तैयार देख टैक्सी लेने चले गये।

उनके जाते ही उपस्थित नर्स बोली—

"जीजा जो नही आयेंगे क्या ?"

रजनी ने अन्दर की निराशा का गला घोटते हुए उत्तर दिया —

"वह दिल्ली से बाहर गये है।"

"क्या उनको सूचना नही भेजी गई ?"

"सूचना तो भेज दी। कोई आवश्यक कार्य हो गया होगा।"

"जब आयेंगे तो हम उनकी खूब खबर लेंगे।"

वृद्ध उसी समय टैक्सी लेकर आ गये। वृद्धा ने बच्चे को अपनी गोद मे बहुत सम्भाल कर उठाया। रजनी भी उठी और नर्स के साथ धीरे-धीरे चलती हुई टैक्सी तक आई। वृद्ध और वृद्धा को नर्स हाथ जोडकर, लौट गई। और फिर तीनो टैक्सी द्वारा घर आ गये। वहाॅ बिस्तर पहले ही तैयार था। रजनी आते ही मुँह ढाँप कर लेट गई। उस समय वृद्धा बोली—

"क्या नाम रखोगे मुन्नू का ?"

"मुन्नू नाम भी रख रही हो, और फिर मुझसे पूंछ भी रही हो।'

"मुन्नू तो कुछ दिनो के लिये रख लिया है।"

"और यह सदैव चलता रहै तो क्या बुरा है ?"

"बडा होकर हमे गालियाँ रही देगा। कहेगा नाम भी रखना नही आया आपको।"

"बडा होकर तो बडा आदमी बन जायेगा, देवी जी। मैंने जन्म के नक्षत्र देख लिये है। उस समय तो हजार नाम रखने वाले बन जाते है। इसी मुन्ना का मनी राम बनते देर नही लगती।"

"आप तो हर समय मास्टर जी बने रहते है।"

"जिसकी बेटी बी० ए० पास हो, वह क्या मास्टर भी नही है।"

"अच्छा अब यह बताओ खाना कौन बनायेगा।" हमे भूख ही नहीं है। रजनी जो कुछ कहे बना देना।"

"रजनी को तो दूध ही पिलाऊँगी।"

"मेरा तो विचार है सवेरे हलवा, दोपहर को दाल, और शाम को दूध दिया करो। फल जब इच्छा हो तब ही दे दिया।

"मै आपसे अधिक जानती हूँ, मुझे क्या बता रहे है।"

"क्यो नही जी, आप तो पूरी मास्टरनी है।"

"मास्टरो की घरवाली मास्टरनी ही तो होती हैं।"

"मुझे तो लगता है बुढापे मे तुम्हारे पर निकल आये हैं।"

"और आप पूरे हवाई जहाज ही बन गये है।"

अच्छा अब चाय बनाओ। बहस न करो।"

वृद्धा उठी और चाय बनाने लग गई। वृद्ध रजनी से बोले—

"तबियत तो ठीक है बेटी।"

"हाँ पिताजी बिल्कुल ठीक हूँ।"

"मन भारी न करना बेटी! सब ठीक हो जायेगा।"

"आप और माता जी का प्यार पाकर भी यदि मैं मन भारी करूँ तो यह मेरी ही दुर्बुद्धि का दोष है।

"देखो बेटी। धर्म मे दृढ और कर्त्तव्य के प्रति सचेत व्यवक्ति का

होने चाहिये ।

इकादशी को प्रात काल ही मिल मे हलचल सी मच गई । एक ओर मजदूरो को बाँटने के लिए लड्डू बनने आरम्भ हो गये । दूसरी ओर रगमच की सजावट होने लगी । इस बार लड्डू आकार मे कुछ बडे है । एक पाव भर चढेगे । प्रत्येक कारीगर को चार लड्डू दिये जायेगे । मिल के मूल द्वार को भली प्रकार कल ही सजा दिया गया था । सब कुछ होने पर भी धर्मार्थी जी को एक चिन्ता जोक की तरह चिपटी हुई है, कही पुरानी गडबड की पुनरावृत्ति न हो जाय । मजदूरो को हल्ला-गुल्ला करते देर नही लगती । इसलिए वह मजदूरो के मन की बात जानने के लिए बहुत उत्सुक है ।

सवेरे के दस बजे होगे । उस समय धर्मार्थी जी सम्पूर्ण तैयारी का निरीक्षण कर रहे थे । उसी समय उनके पास धन्नू गुडा और उसके पाँच प्रमुख साथी आ गये । उनके प्रणाम का धर्मार्थी जी ने हाथ जोड कर उत्तर दिया । न चाहने पर भी वह उनसे बोले—

"कहो पहलवान धन्नू क्या समाचार है तुम्हारे ?"

"सब ठीक है शाब । आप कोई चिन्ता न करे ।"

"यह तो तुम पहले से ही कहते चले आ रहे हो । किया आज तक कुछ भी नही । तुम्हारी तो वही कहावत है नापो सौ गज और फाडो न एक गज भी ।"

"नही शाब । इस बार मैने नई टोली बना ली है । जब से झगडा हुआ मै बहुत सावधान हो गया हूँ ।"

"शावधान हो गये हो, या सावधान । पहले बोलना तो सीख लो । ऐसा लगता है जब से तुम्हारी पिटाई हुई है । तुम्हारी आवाज भी बदल गई है । सचमुच मुझे तुम्हारे उपर बहुत विश्वास था ।"

धन्नू इस व्यग्य से लाल हो गया । गर्व भरे स्वर मे वह बोला—

"अबकी बार कोई मौका आने दीजिए, मै सालो की धज्जियाँ उड़ा के रख दूँगा । जब तो मै धोके मे आ गया था ।"

"ऐसे ही उडाओगे, जैसे राजेश की उडाई है।"

"उसका तो अब मैने आना ही बन्द कर दिया है।"

"वह तुम्हारे भय से नही हुआ बहादुर। उसकी पत्नी मर गई है।"

"आप यकीन करो। अब यहाँ आयेगा, तो पत्नी के पास ही पहुच जायेगा।"

"चलो फिर देखेगे। आज थोडा सावधान रहना।"

"कह तो दिया सरकार आप चिन्ता न करे।"

"एक बात याद रखना आज पीनी नहीं है।"

"पीने के बिना काम कैसे चलेगा सरकार।"

"एक दिन न पीने से क्या मर जाओगे।"

"चलिये फिर ऐसा ही होगा।"

धन्नू अपने साथियो सहित वहाँ से चला गया। उसके जाते ही धर्मार्थी जी सारी व्यवस्था के निरीक्षण के लिए चल दिए। उन्होने एक चक्कर क्वार्टरो का भी लगाया। इस समय उनके साथ मिल के छोटे बडे कर्मचारियो का एक झुँड था। धर्मार्थी जी जान पडते थे जैसे कोई शिकारी अपने कुत्तो के साथ शिकार के लिए निकल पडा है। वह एक बजे तक क्वार्टरो मे घूमते ही रहे। इस समय उनके हाथ एक पल के लिये भी भाल से अलग नही हुए। जब थक गये, तो ड़ेढ़ बजे अपने विश्राम कक्ष मे आकर उन्होने चादर तान ली।

चार बजे जब धर्मार्थी जी सोकर उठे, सारी व्यवस्था पूर्ण हो चुकी थी। एक बार उन्होने फिर सम्पूर्ण तैयारी को देखा। निश्चयानुसार पौने पॉच बजे दो नर्तकी दल बल सहित मिल मे पहुच गई। गायिका पॉच बजे आई। और फिर सबसे पीछे राजधानी के कविगरण वहाँ आने आरम्भ हो गए। धर्मार्थी जी इस समय नर्तकियो के पास से कही जाना नही चाहते, फिर भी सवा पाच बजे उनको स्वागत द्वार पर आना पडा। इस समय वहाँ पर सेठजी की प्रतीक्षा मे बहुत बड़ी भीड एकत्र थी। सबसे आगे धर्मार्थी जी खडे थे। सेठ जी पाँच बजकर ठीक

पच्चीस भिनट पर वहाँ आये । धर्मार्थी जी ने उन्हे सहारा देकर कार से उतारा । और फिर स्वागत की सम्पूर्ण क्रियाओ के पश्चात् सब ही रग-मच की ओर चल पडे । सेठ जी बहुत धीरे-धीरे चल रहे थे । इसीलिए सबकी गति भी धीमी थी । अन्त मे सबने अपना स्थान ग्रहण कर लिया ।

सेठ जी परिवार सहित रग मच के ठीक सामने आराम कुर्सियों पर बैठे । उनकी मित्र मडली के लिये उनके पीछे कुर्सियाँ सुरक्षित थी । वे उन पर जम गये । तीसरी कुर्सी की पक्ति मे मिल के उच्च अधिकारी बैठाये गये । इन कुर्सियो के पीछे आज मजदूरो के लिये बैंच बिछाये गये थे । वह कुछ उन पर अपना स्थान ग्रहण कर गये । बैंच कम थे इसीलिए दो तिहाई मजदूरो के पीछे खडा रहना पडा । इसीलिए कुछ देर गडबड सी भी मची रही । अन्त मे सब शान्त हो गये ।

रगमच से पर्दा उठा और दो नर्तकी मृदग के स्वर के साथ नृत्य करती हुई दिखाई दी । उपस्थित दर्शको की दृष्टि उसी ओर खिच गई । इस समय दोनो नर्तकी कौनसा नृत्य प्रदर्शन कर रही थी, यह वहाँ एक दो को छोड कोई भी नही जानता था । पढे-लिखे व्यक्ति अपना कला सम्बन्धी ज्ञान प्रकट कर रहे थे । एक ने कहा—

"यह भाट नाट्य कला है ।" दूसरा बोला—

"भाट नाट्य कला नही मिया, भरत नृत्य कला है ।"

तीसरे ने सुधार किया—"नही यार यह कत्थक नृत्य है ।" कुछ ऐसे भी थे, जिन्होने नृत्य को राधा कृष्ण लीला कहकर ही अपनी जिज्ञासा को शान्त कर लिया । कुछ ऐसे भी थे, जो इस विषय मे कुछ न कहकर केवल नृतकियो के सुगठित अगो की लचक पर ही दृष्टि जमाये थे । मजदूरों की दृष्टि वस्त्र भूषण पर ही जमी हुई थी । कुछ नर्तकियो के वक्ष पर आँखे गडाये थे, और कुछ सुडौल जघाओ मे ही उलझ कर रह गये थे । सेठ जी की दृष्टि नर्तकियो के हाव भाव के साथ

गिरगट के समान रग बदल रही थी। धर्मार्थी जी इस समय किस लोक मे थे, यह वही जानते होगे।

दस मिनट तक नृत्य हुआ और फिर पर्दा गिर गया। पर्दा फिर उठा तो रगमच पर दो गायिका दिखाई दी। उन्होने एक ही पल में अपनी मधुर तान से श्रोताओ की श्रुतियो को छीन लिया। गाना शृ गार रस मे डूबा हुआ था। इस बार सेठ जी का मुँह ऐसा जान पड़ता था, जैसे वह खटाई खा रहे हो। उनके विषय मे सब जानते है। मन्दिर में वह भक्ति रस मे पके गीत सुनते है। सूर, मीरा, नानक आदि सन्तो के पद उन्हे बहुत प्रिय है। आज उन्होने चार गाने शृ गार रस के सुने। अन्दर से चाहे अच्छे ही लगे हो भी उन्होने ताली एक बार भी नही बजाई।

नृत्य और गान की समाप्ति पर कवि सम्मेलन हो ही न सका। सेठ जी समय के अभाव मे जैसे ही खडे हुए, सारे दर्शको मे गडबड़ मच गई। सेठ जी को विदा कर धर्मार्थी जी रगमच पर आकर खड़े हुये, और कुछ शान्ति स्थापित होने पर बोले—

"आज मेरे भाइयो ने कार्यक्रम को शान्त भाव से सूना, और देखा, इसके लिये मै उनका धन्यवाद करता हूँ।"

उसी समय उनके पास उपस्थित कविगण आ गये। धर्माथी जी ने प्रत्येक को किराये के लिये दस-दस रुपये दे कर अपना पिंड छुडवाया। उन्हे इस समय नर्तकियो और गायिकाओ के लिये चाय पानी की बहुत चिन्ता थी। वह फिर शीघ्र ही कार्यमुक्त हो उनके पास चले गये।

मजदूरो की टोलिया जब घर लौट रही थी, बात-चीत करती जा रही थी। धर्मार्थी जी का समर्थक कोई कह रहा था—

"सचमुच धर्मार्थी जी ने मिल मे नया जीवन डाल दिया है।"

कुछ कहते हुए जा रहे थे—"सेठ जी भी धर्माथी जी के हाथो में खेलते है।"

एक मन चला युवक कह रहा था—

"लडकियाँ क्या थी, यारो परियाँ थी परियाँ। इनको तो देखने से ही भूख भाग गई है।" एक युवक ने उसकी बात काट दी—

"यह बात नही है भाई। धर्मार्थी जी चरित्र के बहुत अच्छे हैं।

कुछ सोच रहे थे,—यह सब मजदूरो को बुद्धू बनाने का ढकोसला है। कुछ बेचारो को घर पहुंचने की जल्दी थी। जाते ही चार लड्डू जो मिलेगे। दूसरी ओर धर्मार्थी जी ने कमरे मे पहुच कर देखा—खाने पीने की सम्पूर्ण व्यवस्था पूर्ण हो चुकी है। उनके जाते ही पीने का दौर चला और फिर सब भोजन पर जुट गये। उसी समय एक नर्तकी बोली—

"यहाँ पर नृत्य के जानकर तो बहुत ही कम लोग थे।"

धर्मार्थी जी ने उत्तर दिया—

"यह आपको मानना ही होगा कि सब रस मग्न हो गये।"

उसी समय एक गायिका बीच मे ही बोली—

"गाने मे तो विशेष रुचि थी नही श्रोताओ की।"

धर्मार्थी जी ने गायिगा का समर्थन किया—

"गाना तो रेडियो के कारण बहुत ही सस्ता मनोरजन हो गया है।"

भोजन के साथ साथ बात-चीत का कार्यक्रम भी नौ बजे तक समाप्त हो गया। इसके बाद गायिका तो विदा हो गई, और नर्तकियाँ उस रात वही ठहरी।

३६

रजनी अस्पताल से घर जा रही है। वह और उसका बच्चा पूर्ण स्वस्थ है, परन्तु मन रूप मे स्वस्थ नही कही जा सकती। वह आशा और निराशा के झूले मे झूल रही है। वह जब बच्चे को देखती है फूली नही समाती। पुत्र रत्न को पाकर वह समझ रही है, राजेश का वह अन्तिम आर्शीवाद पूर्ण हो गया। विपरीत इसके जब वह सोचती है— आर्शीवाद देने वाला अपने बच्चे को देखना भी नही चाहता। वह निराशा मे डूब जाती है। जब से वृद्ध ने बताया है— "राजेश बुलाने पर भी नही आया।" रजनी की आशा सवेदना मे बदल गई है। उसको विश्वास था—राजेश इस समय अवश्य आयेगा। जब न आया, तो रजनी ने स्वयं को सान्त्वना दी।— कोई बात नही! जब वह नही रहा, तो यह भी नही रहेगा। विधाता जब इतनी दया कर सकते है तो क्या इतनी न करेगे। इस समय मे दो सत्य आत्माओ की छत्र-छाया मे हूँ। मुझे स्नेह का अवलम्बन भी मिल गया है। मेरे जीवन का कुछ लक्ष्य निश्चित हो गया है। मै अपने कर्त्तव्य से विचलित नही हूँगी। हो सकता है कभी राजेश की विवेक दृष्टि सत्य को देखने मे समर्थ हो जाये।"

रजनी दस बजे घर जायेगी। इस समय नौ बजे है। उसकी कुछ नर्स सखियाँ उसके पास एकत्र हो गई है। वह लगभग सभी मैट्रिक पास है रजनी का बी० ए० पास होने से इनमे कुछ विशेष सम्मान है।

इस समय उन्होने सम्मान की बात को भूलकर कुछ छेडछाड करने का मन ही मन निश्चय कर लिया है। वह आते ही मनोविनोद के कार्य-

क्रम मे जुट गई । उनमे से एक ने सबसे पहले घर पर दावत की बात चलाई । वह बोली—

"घर पर दावत मे शुद्ध घी की मिठाई खायेंगे हम तो ।"

दूसरी बोली—"जीजा जी को तो दिखाया ही नही है बहन जी ने ।"

तीसरी बोली—"छिपाकर रखती है कही नजर न लग जाये ।"

चौथी ने हठ की—"हम घर जायेंगे और देखकर ही आयेंगे ।" पाँचवी बेचारी चुपचाप बच्चे से ही खेलती रही ।

उसी समय वृद्ध और वृद्धा वहाँ आ गये ।

उनको देखते ही, एक को छोड सबकी सब वहाँ से खिलखिला कर हँसती हुई वहाँ से चली गई । वृद्धा ने आते ही रजनी को गर्म दूध पिलाया और फिर वह बच्चे के पास बैठ गई । वृद्ध रजनी को तैयार देख टैक्सी लेने चले गये ।

उनके जाते ही उपस्थित नर्स बोली—

"जीजा जो नही आयेंगे क्या ?"

रजनी ने अन्दर की निराशा का गला घोटते हुए उत्तर दिया -

"वह दिल्ली से बाहर गये है ।"

"क्या उनको सूचना नही भेजी गई ?"

"सूचना तो भेज दी । कोई आवश्यक कार्य हो गया होगा ।"

"जब आयेंगे तो हम उनकी खूब खबर लेंगे ।"

वृद्ध उसी समय टैक्सी लेकर आ गये । वृद्धा ने बच्चे को अपनी गोद मे बहुत सम्भाल कर उठाया । रजनी भी उठी और नर्स के साथ धीरे-धीरे चलती हुई टैक्सी तक आई । वृद्ध और वृद्धा को नर्स हाथ जोडकर, लौट गई । और फिर तीनो टैक्सी द्वारा घर आ गये । वहाँ बिस्तर पहले ही तैयार था । रजनी आते ही मुँह ढाँप कर लेट गई । उस समय वृद्धा बोली—

"क्या नाम रखोगे मुन्नू का ?"

"मुन्नू नाम भी रख रही हो, और फिर मुझसे पूँछ भी रही हो ।"

"मुन्नू तो कुछ दिनो के लिये रख लिया है।"

"और यह सदैव चलता रहै तो क्या बुरा है?"

"बड़ा होकर हमे गालियाँ रही देगा। कहेगा नाम भी रखना नही आया आपको।"

"बडा होकर तो बडा आदमी बन जायेगा, देवी जी। मैंने जन्म के नक्षत्र देख लिये है। उस समय तो हजार नाम रखने वाले बन जाते है। इसी मुन्ना का मनी राम बनते देर नही लगती।"

"आप तो हर समय मास्टर जी बने रहते है।"

"जिसकी बेटी बी० ए० पास हो, वह क्या मास्टर भी नही है।"

"अच्छा अब यह बताओ खाना कौन बनायेगा।" हमे भूख ही नही है। रजनी जो कुछ कहे बना देना।"

"रजनी को तो दूध ही पिलाऊँगी।"

"मेरा तो विचार है सवेरे हलवा, दोपहर को दाल, और शाम को दूध दिया करो। फल जब इच्छा हो तब ही दे दिया।

"मै आपसे अधिक जानती हूँ, मुझे क्या बता रहे है।"

"क्यो नही जी, आप तो पूरी मास्टरनी है।"

"मास्टरो की घरवाली मास्टरनी ही तो होती हैं।"

"मुझे तो लगता है बुढापे मे तुम्हारे पर निकल आये है।"

"और आप पूरे हवाई जहाज ही बन गये है।"

अच्छा अब चाय बनाओ। बहस न करो।"

वृद्धा उठी और चाय बनाने लग गई। वृद्ध रजनी से बोले—

"तबियत तो ठीक है बेटी।"

"हाँ पिताजी बिल्कुल ठीक हूँ।"

"मन भारी न करना बेटी! सब ठीक हो जायेगा।"

"आप और माता जी का प्यार पाकर भी यदि मै मन भारी करूँ तो यह मेरी ही दुर्बुद्धि का दोष है।

"देखो बेटी। धर्म मे दृढ और कर्त्तव्य के प्रति सचेत व्यक्ति का

यदि सारा ससार भी दुश्मन बन जाये तो कुछ नही बिगड सकता। एक समय ऐसा अवश्य आता है, जब उसके शत्रु भी उसके चरणो मे आ पडते है। अपनो की तो बात ही छोड दीजिए।"

"ठीक है पिताजी। फिर भी मुझे दुख केवल इस बात का है, जिनकी हम पूजा करते है वही हमको लात लगाते है।"

"देखो बेटी! अच्छा दिल मेघ सूर्य के प्रकाश को वश मे कर लेता है। उसे तो मेघ हटने पर फिर उसी प्रकार चमकना है।"

"बाबा तुलसी ने कृषि के सूखने पर बर्षा के महत्व को स्वीकार किया है, पिता जी दॉत न होने पर चने स्वाद नही सिर दर्द बन जाते है।"

उसी समय बच्चा रो पडा। वृद्धा चाय छोडकर उसके पास आ गई! रजनी ने मुॅह ढॉप लिया। वृद्ध कुछ गम्भीर स्वर मे बोले—

"देखो रजनी! तुम्हारी सवेदना भरी वाणी हमारे उल्लास को इस समय धूल मे मिला रही है। चाहते है तुम सदैव प्रसन्न दिखाई दो।"

रजाई को मुँख मे हटाकर मुख पर मुस्कान बिखेरती हुई वह बोली—

"आप क्या कह रहे है पिताजी। इस समय तो मेरे जितनी सौभाग्यशाली सन्तान कोई हो ही नही सकती। मै तो भविष्य की कुछ व्यर्थ आशकाओ मे खो गई थी। सोचती थी—बच्चे को दुनियॉ क्या कहेगी?"

"ससार की बातो पर ध्यान देने वाले ससार मे जी नही सकते रजनी। बडा निर्मोही है यह ससार। इसने कभी किसी को क्षमा नही किया। क्षमा की खैर बात ही दूसरी है यह ससार तो सन्तो को भी लाच्छित कर देता है। दूसरो को जीवन देने वालो का यह ससार रक्त चूस जाता है। ससार का विधान है कोमल को कुचलो और कठोर से बचकर चलो। दुर्बल का ससार अकारण विरोधी है और सबल के असत्य का यह नतमस्तक समर्थन करता है।"

"रजनी को आराम करने दो। चाय बना लो। मै बच्चे के पास बैठी हूँ। उठूँगी तो यह रोने लग जायेगा।" ये शब्द वृद्धा के थे।

"बच्चे को मुझे दे दो, और तुम चाय बनाकर ले आओ।"

"मै बच्चे को आपको नही दूँगी।"

"क्यो ?"

"आपकी नजर लग जाती है।"

"नजर लगे हमारे दुश्मनो को। कैसी बाते कर रही हो।"

"लो फिर सभाल कर लेना। हाथ पाँव इस समय बडे कोमल होते है।"

"अरे ! यह तो बिल्कुल अपनी माँ पर है।"

"इसीलिये मै तुमको दिखाना नही चाहती थी। अभी क्या पता बच्चे का। छोटा बच्चा कई रग बदलता है।"

वृद्धा ने बच्चे को वृद्ध की गोद से लेकर रजनी के पास लिटा दिया। रजनी ने करवट दूसरी ओर बदल ली। वृद्धा बोली—

"करवट न लो बेटी। छोटे बच्चो को छाती से लगा कर सोना चाहिए।"

वृद्धा के कथन से रजनी मन ही मन प्रसन्नता अनुभव कर बोली—

'रात को आप ही सुला लेना। मै एक करवट से सो नही सकती।"

वृद्धा चुपचाप चाय देकर बच्चे के पास बैठ गई और वृद्ध चाय पीकर बाहर चले गये। रजनी मुँह ढाँपे हुए स्वयँ को समझाने लगी—

"अधीर न हो रजनी ! तूने जितना पाया है वह किसी बिरले को ही प्राप्त होता है। छोटी जाति मे जन्म लेकर भी तूने पर्याप्त शिक्षा प्राप्त की है। जीवन के अनेक मोड पाकर तूने कुछ अनुभव भी प्राप्त किया है। यही अनुभव तो जीवन का मूल रहस्य है। पानी बहता हुआ ही शुद्ध रहता है। स्थिर जलाशय का जल शुद्ध हो ही नही सकता। तेरी जीवन सरिता अनेक मोडो से मुड कर ऐसा लक्ष्य पा गई है, जिस को जीवन की शान्ति कहा जा सकता है। चलते पथिक को वृक्ष की

छाया मिली। प्यास लगने पर जल मिला और बताओ वह पथिक अब क्या चाहता है। तेरे सिर पर किसी के स्नेह भरे हाथ है, और तुझे भी स्नेह भरे हाथ रखने का अवलम्बन मिल गया है। जिनका आशीर्वाद तुमने पाया है, उनके प्रति कर्तव्य पालन भी तो तुम्हारा है।"

"मूर्ख रजनी! सयोग की आयु बहुत कम होती है। जो भावनाये तुम्हारे हृदय मे करवट बदल रही है, वह कभी शान्त ही नही हो सकती। हजारो वर्ष जीने पर भी मनुष्य अन्त मे यही कहेगा—कुछ और जीते तो अच्छा था। अरमान कभी किसी के पूर्ण नही हुए। स्मरण रखो, तुम्हारा प्रेम अब प्रेम के लिये नही रहा। वह जीवन की सिद्धि बन गया है। जिसके प्रेम का निष्कर्ष यह बच्चा तेरी करवट की शोभा बढा रहा है। इस समय तो वह भी जीवन की पतझर से गुजर रहा है। फिर तू ही बता उससे क्या चाहती है?

आगे रजनी की विचार शृंखला जुड़ती ही चली गई।

"भोली रजनी! जिस मुस्कान को तूने पाया है, उसके लिए तो एक युवती ने दूसरी के प्राण ले लिए है। और अब स्वयं भी मृत्यु का ग्रास बनने जा रही है। फिर बता और क्या चाहती है? तू एक समय हँसी है और खिल खिलाकर हँसी है। और अब तुझे वह खिलौना मिल गया है जिससे आदमी जीवन भर खेल कर भी सन्तुष्ट नही होता। यौवन का ज्वार भाटा जीवन सागर मे एक ही बार आता है, वह अब आ चुका है अब उसकी स्मृतियो को लेकर भी तू जीवन मे सहर्ष आगे बढ सकती है।

"अबोध रजनी! सरस सवेदनाओ की साधना का नाम ही तो प्रेम है। अब साधना कर। अपनी भूल, अब दुनियाँ को देख। उस दिन पिताजी ने कहा था— देश प्यार से बडा धर्म कोई नही है। तू क्या उसको भूल गई? वह हमारा है, जहाँ यह ठीक है वही पर इससे भी बड़ा सत्य है कि सब ही हमारे है। यदि दार्शनिक दृष्टि से देखे तो यह शरीर भी हमारा नही है। यदि तू भावना की आँखो से ही इस जीवन को देखना चाहती है तो समझ ले जिसको तू अपना मानती है अपना

ही मानती चल । लक्ष्य-विहीन पक्षी एक दिन अपने नीड मे अवश्य आता है ।

उसी समय बच्चा रो पडा । रजनी की चेतना का सूत्र टूट गया । उसने बच्चे को वक्ष से लगा लिया । वृद्धा ने देखा — इस समय रजनी के मुख हर हल्की मुस्कान खेल रही थी । यह देखकर वृद्धा के मुख की झुर्रियो मे भी चमक उत्पन्न हो गई ।

३७

अवधि का मरहम पाकर वियोग के घाव कुछ भरने लगते है । राजेश के जीवन मे यह कथन चरितार्थ नही हुआ । राजेश्वरी की मृत्यु के पश्चात् दिन जैसे बीतते जा रहे है । अभाव जन्य अनुभूतियाँ वैसे ही बढती जा रही है । दिन-रात की निकटता से व्यक्ति का मूल्य कम हो जाता है । उसके दूर होने पर ही जान पडता है, वह क्या था । अतल सागर मे मुक्ता यदि मुट्ठी मे आ जाये तो उसका मूल्य आधा रह जाता है । राजेश्वरी के हृदय से निकले शब्द क्रियाये, चेष्टाएँ और हाव भाव अब राजेश के लिए जीवन की धडकन बनकर रह गये है । इस जीवन मे उनकी पुनरावृत्ति सम्भव नही है । निरन्तर प्रताड़ना पाकर भी जो कभी कर्तव्य से विचलित नही हुई । कहाँ मिल सकती है इस युग मे ऐसी नारी । कितनी महान थी वह जिसके पास भावो को व्यक्त करने के लिए शब्द ही न थे । नेत्रो को पढकर जिसके भावो को जाना जाता था । अब वह भगवान की प्यारी बन चुकी है । एक नागिन उसे निगल गई ।

राजेश को अब जान पडा है—नारी के बिना मनुष्य पगु ही नहीं नेत्र विहीन भी है । पुरुष की गति और अगति सब कुछ नारी ही है ।

दिन मे दो बार राजेश घर आता और जब जाता नवीन बनकर जाता। बारह घटे काम करके भी कभी थकान नही हुई। और अब काम करने की इच्छा ही नही होती। किसी कार्य मे मन नही लगता। कई दिन से राजेश मिल जाने की सोच रहा है। उसके पास कुछ मजदूर भी कई बार आ चुके है। वह सबको झूठ-सच बोलकर टाल देता है। सूका से कई बार उसने कहा—"कल आऊँगा।" और वह कल आज तक नही हुई। गॉव से कई बुलावे आ चुके है। वह सब सुनकर भी अनसुनी कर देता है।

विवाह के विषय मे राजेश निश्चय कर चुका है— अब विवाह नही करेगा। आकाश को छूकर गिरने वाला व्यक्ति पेड़ो की चोटियो पर बैठकर शाति नही पा सकता। रजनी निकट आई और कुछ मेरी भूलो से ही विकट पहेली बन गई। राजेश्वरी को पहचानने मे समय लगा। और जब पहचान हुई तो फन पीटती हुई एक नागिन ने उसे डस लिया। वह अब इस जीवन से इतनी दूर चली गई, जहॉ से लौटकर कभी कोई नही आया। रजनी ने जो माग की थी, उमे मिल गई। अब उसे मेरी आवश्यकता ही नही है। सन्तान को पाकर स्त्री पुरुष से प्यार नही करती। भावी सम्बन्ध केवल व्यवहार पर स्थिर रहता है। वह पास रहे या दूर कोई विशेष अन्तर नही पडता। उसको स्नेह का अवलम्बन मिल गया है।

अपने वर्तमान से भी अधिक राजेश भविष्य के प्रति चिन्तित रहता है। उसका अतीत जितना सरस और सुखदाई था, वर्तमान उतना ही नीरस, कटु और दुखदाई है। भविष्य क्या होगा ? स्मरण कर राजेश दुखद कल्पनाओ मे खो जाता है। अभी तक उसका कोई निश्चित कार्य क्षेत्र नही है। जिस मिल मे वह हजारो मजदूरो के कल्याण की बात सोचता है, क्या वह कर पायेगा। वह सोचता है— जब मै अपना ही जीवन-पथ अभी तक नही खोज पाया तो फिर इन बेचारे हजारो मज-दूरो को पथ क्या दिखाऊँगा ? अन्धा डाक्टर और ऑखो का विशेषज्ञ, भला यह कैसे सम्भव है। मजदूरो के अधिकार को पूँजीपतियो की

तिजोरियो से निकालना उस समय तक सम्भव नही है जब तक उन्हे राजनैतिक शरण प्राप्त है। शक्ति के बिना धनिक कभी नही झुकते।

हडताल कराने की बात को राजेश ने उठाकर एक ओर रख दिया है। वह जानता है—यदि कुछ सुविधाएँ मजदूरो को दिलाई जाये तो वे धर्मार्थी जी से मिलकर दिलाना ही उचित हैं।

राजेश यह सब सध्या के सात बजे कमरे मे पडा हुआ सोच रहा था। उसी समय उसने देखा—राधा के माता-पिता उसी ओर आ रहे है। उनको देखते ही राजेश ने दृष्टि नीचे झुका ली। वे दोनो चुपचाप राजेश के पास आकर खडे हो गये। राजेश कुछ न बोला। राधा के पिता कुछ देर उसे देखते ही रहे। वे फिर बोले—"क्या हमको देखना भी पाप है, राजेश बेटा।"

"ऐसी तो कोई बात नही है। मै कुछ सोच रहा था। बैठिए।"

"आप बैठायेंगे तो अवश्य बैठेंगे।"

राजेश चारपाई से खडा होकर बोला—

"मैंने यही तो कहा है। कहिए क्या बात है?"

"हम एक प्रार्थना लेकर आये है तुम्हारे पास। यदि हम दो दुखिया प्राणियो पर आप दया कर सके तो निवेदन करे।"

"आप मुझसे अधिक दुखिया नही है। मान्यवर! भला बताइये जो स्वयँ डूब रहा है वह दूसरो को सहारा क्या दे सकेगा?"

"आप सब कुछ तो जानते है, राजेश। हम दोनो के जीवन का आधार केवल राधा ही थी। और अब वह अपने पापो से मृत्यु के द्वार पर खडी है। कितना अच्छा हो आप हम पापियो को क्षमा कर दे। राधा के वृद्ध पिता का इस कथन के साथ गला भर आया। राजेश उसकी ओर देखकर क्षण भर के लिए द्रवित सा हो गया। वह बोला—

"आप बैठ जाएँ। खडे-खडे बाते करना शोभा नही देता।"

"क्या बैठे बेटा! हम तो दोनो अब अन्धे हो गये है।"

"ठीक है आपकी बात। परन्तु मै कर ही क्या सकता हूँ इस समय। अब तो आपको न्यायालय की शरण मे जाना ही उचित है।"

"मैं जानता हूँ बेटा। राधा ने जो कुछ किया है वह पाप ही नही महापाप है। उसे दण्ड मिलना ही चाहिए। इसके साथ ही मै यह अवश्य कहूँगा, उसने जो कुछ किया है अन्धी भावना से प्रेरित होकर ही किया है। इसका प्रमाण है वह अगले दिन ही पागल हो गई। मुझे पूर्ण विश्वास है, यदि उसका मस्तिष्क ठीक हो गया, तो वह जब तक जियेगी पश्चात्ताप ही करती रहेगी। अच्छा हो आप थोडी उदारता का परिचय दे दे।"

"वह खुशियाँ मनायेगी, या पश्चात्ताप करेगी, इससे मेरी न हानि है और न ही लाभ। मेरे जीवन का उसने विनाश कर दिया है। मैं तो केवल अब यही जानता हूँ कि उदारता की अपनी इस प्रार्थना के लिए आपको न्याय का द्वार खटखटाना चाहिए।"

"ठीक है बेटा। फिर भी हम केवल इतना चाहते है आप अपनी ओर से राधा को क्षमा कर दें।"

"आप यह व्यर्थ की बातें कर रहे है। मैं जानता हूँ, राजेश्वरी अब मुझे नही मिलेगी। अब मेरी ओर से न्यायालय राधा को क्षमा करे या दंड दे। मुझे किसी प्रकार की कोई आपत्ति नही है।"

"क्या करे बेटा ? एक सन्तान थी, सो वह भी ऐसी निकली जिस ने दो घर धूल मे मिला दिये।"

"क्षमा करना ! इसमे कुछ दोष आपका भी है।"

"वह कैसे बेटा ?"

"यह भी बताने की बात है। आपको राधा के विवाह की कोई व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए थी। इस आयु मे इतनी स्वतत्रता का ही तो यह दुखद परिणाम है जो आज हमको भोगना पड रहा है।"

"विवाह करना तो हमारी विवशता थी बेटा।"

"यह मै नही मान सकता। थोडा हृदय पर हाथ रखकर देखिये। वह भी व्यक्ति है, जो आज भी बेटी के घर का पानी नही पीते। विपरीत इसके आप की तो जीविका ही उसकी कमाई पर चल रही

थी। उसने जो आज तक कमाया है यदि वह सब आप एकत्र करते रहते तो भली प्रकार उसका विवाह कर सकते थे।"

"ठीक है राजेश ! तब नही तो अब अवश्य करना पडेगा।"

"करना पडेगा, यह एक बात है और करना चाहिए था यह दूसरी बात।"

"कुछ पता नही राजेश ! विवशता आदमी को कहाँ तक झुका ले जाये।"

"विवशता के साथ ही आपने कुछ विश्राम को भी समय से पहले ही, जीवन का अभिन्न अग बना लिया था। आप सत्य से आँखें न चुराये। जब तक आदमी के हाथ पाँव चलें, उसे कुछ करना ही चाहिए।"

राधा की माता अब तक शान्त रही थी। इस कथन को सुनकर अब राजेश के पॉवो मे पड गई। भर्राये कठ से वह बोली—

"बेटा राजेश ! हम जानते है हमने कितनी बडी भूल की है। और यह भी जानते है, हमारी भूल ही आपके हरे भरे जीवन को जला कर राख बना गई है। फिर भी आपसे हाथ जोडकर प्रार्थना है, किसी प्रकार भी उस दुष्ट के प्राणो को बचाकर आप पुण्य कमा ले। समझ लीजिए वह आपकी छोटी बहन है।"

राजेश ने बृद्धा का हाथ पकडकर ऊपर उठाया वह बोला—"यह आप क्या कह रही है माता जी ! मैं तो आपका बच्चा हूँ। मेरा कोई दोष हो तो मुझे ही माफ कर दीजिए। आपका यह भ्रम है, कि राधा को मैंने दोषी ठहराया है। सत्य है कि राधा हत्यारी है। और यह सत्य अब प्रकट हो गया है।"

"यह तो ठीक है बेटा मैं भी उसे दोषी मानती हूँ।"

"तो फिर बताइये, मै आपकी क्या सेवा करूँ।"

"हम केवल इतना चाहते है कि आप उसकी प्राण रक्षा का कोई उपाय बता दे। यह तो तुम्हे मानना ही होगा कि उसने तुमको पाने के लिए ही यह नीच कर्म किया है। हमे अब इस बात का पता चल गया है।"

इस कथन को सुनते ही राजेश ने कुछ भार सा अनुभव कर दृष्टि नीचे झुका ली। वह धीमे स्वर मे बोला—

"हो सकता है आपकी यह बात सत्य हो।'

"सत्य नही बेटा! पूर्ण सत्य है।"

"ठीक है माता जी! फिर भी इसका यह अर्थ नही कि अपने तुच्छ स्वार्थ के लिए किसी के प्राणो से ही होली खेली जाये।"

"नारी की इस दुर्बलता से तुम परिचित नही हो बेटा। भावना के वशीभूत नारी क्या कर बैठे यह तो अन्तर्यामी भी नही जानता। तुम तो जानते ही हो नदी मे जब बाढ आती है, वह अपने किनारो को तोड कर ही इधर-उधर बह जाती है। यही दशा नारी की है। जिस स्थिति में राधा ने यह नीच कर्म किया है, इस दिशा मे नारी के लिए अपने प्राण देना और दूसरे के लेना तिनका तोडने से बढकर और कुछ भी नही।"

वृद्धा के ये शब्द राजेश को प्रभावित किए बिना न रह सके, कथन की सत्यता को अनुभव कर वह बोला—

"इसके लिये आप कोई अच्छा वकील कर लेना माताजी।" यदि उचित समझो, तो जहाँ राधा नौकरी करती थी, वहाँ के मैनेजर से कुछ सहयोग प्राप्त कर लो। आप जानती हो मै दिल्ली मे नया हूँ। पैसे की दृष्टि से मेरे पास अपने निर्वाह का भी साधन नही है। फिर आप ही बतायें मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ।"

"आपको बेटा कहकर भी मन हल्का हो गया है राजेश। हम तो उसी दिन तुम्हारे पास आने वाले थे। क्या करे पाँव ही नही पडा। इच्छा हो रही है, दिन मे तुम्हारे एक दो बार दर्शन अवश्य किया करे।"

"आप अवश्य आया करे।"

दोनो फिर वहाँ से कुछ मन हल्का करके चले गये।

३८

धर्मार्थी जी यूँ तो वाणी के मधुर है परन्तु जब अपने कार्यालय में व्यवस्थापक बन कर बैठते है, उनके स्वभाव मे आमूल परिवर्तन हो जाता है। विशेषकर जब वे मिल के बडे अधिकारियो से मिलते हैं, हिंसक से दिखाई देते है। उनका विश्वास है, इस कुर्सी पर बैठकर बड़ों के साथ कठोर व्यवहार करना ही चाहिए। उनके पास जाते हुए बडे अधिकारी इसीलिये भयभीत से रहते है। वह कोई न कोई बहाना खोजकर डॉट अवश्य लगाते है। उनके स्वभाव मे आजकल कुछ और भी कठोरता आ गई है। राधा का कार्यालय मे न होना कार्यक्रम की दृष्टि से कोई हानिकारक सिद्ध नही हुआ। उसका कोई विशेष उत्तर दायित्व भी न था। हाँ, जब धर्मार्थी जी का सिर कुछ भारीपन अनुभव करता, वह राधा को अपने पास बातचीत के लिये बुल लिया करते थे। उससे वह खूलकर बातें करते थे। यही उनकी कार्यक्षमता की सजीवनी थी। इसीलिये वह अब झुझलाये से रहते है।

रजनी जितने दिन मिल मे रही, धर्मार्थी जी राधा को भूले से रहे। और फिर जब वह चली गई, तो उन्होने फिर अपनी पुस्तक के पन्ने खोल लिये। अब वह सोचते है, मिल मे और दो चार लडकियो की नियुक्ति करूँ उनमे से कोई तो हमको समझेगी ही। वह डरते भी है—लडकियाँ भी कभी व्यर्थ का सिर दर्द बन जाती है। ये जिस रोग का उपचार करती है उसी को जन्म भी देती है। सब दृष्टि से विचार कर अन्त मे उन्होने यही निश्चय किया—कार्यालय मे कुछ लड़कियाँ

होनी ही चाहिएँ। इसके लिए विज्ञापन देना उचित होगा। पॉच रिक्त स्थानो के विज्ञापन के लिए पॉच सौ लडकियो का आना कोई आश्चर्य की बात नही। उनमे से एक दो जो मनोनुकूल होगी उन्ही की नियुक्ति कर ली जायेगी।

आज जब धर्मार्थी जी अपने कमरे से पैदल ही कार्यालय जा रहे थे, लडकियो की नियुक्ति के विषय मे ही सोच रहे थे। जब वह दस बजे कार्यालय के द्वार पर आये, तो उन्होने देखा वहॉ राजेश खडा हुआ है। राजेश की मुद्रा कुछ गम्भीर थी। धर्मार्थी जी एक ही दृष्ठि मे उसको पढकर, सीधे कार्यालय के अन्दर चले गए। राजेश बाहर खडा सोचता रहा—धर्मार्थी जी ने मिल में मजदूरो मे अपना रग खूब जमा लिया है। सवेरे सात बजे से मै अब तक जितने मजदूरो से मिला, एक दो को छोडकर किसी ने मुँह उठाकर बातें नही की। जैसे मै कोई चोर हूँ। अपने अभाव को बालू की दीवार जानकर ही मुझे यहॉ आना पडा है। सचमुच ये मजदूर अपने रक्षक और भक्षक की तिल बराबर भी पहचान नही कर सकते।

राजेश जब खडा हुआ सोच रहा था—उसी समय चपरासी आया और उसे अन्दर बुला कर ले गया। उसने जाते ही धर्मार्थी जी को प्रणाम किया। धर्मार्थी जी प्रणाम का उत्तर देकर बोले—

"बैठो राजेश! कहो कैसे कष्ट किया है आने का ?"

राजेश धर्मार्थी जी के व्यग को समझकर चुपचाप कुर्सी पर बैठ गया। धर्मार्थी जी कुछ देर तक आवश्यक पत्रो को उलटते पलटते रहे। कुछ देर वह जानकर कुछ नही बोले। उनको शान्त देखकर राजेश बोला—

"क्या इस समय आपके पास कुछ अवकाश नही है ?"

"व्यर्थ की बातो के लिए तो हमारे पास कभी भी समय नही है। हॉं यदि कोई काम की बात हो तो अवश्य कहो।"

"तो फिर आपने अन्दर ही क्यो बुलाया था।"

"कहा तो है, कहो क्या बात है ?"

"आपके, यहाँ काम करने वाली राधा के पिता शायद आपके पास आये होगे। हो सके तो उस विषय मे विचार करके देख लीजिए।"

"देखो मास्टर राजेश! यदि हम किसी विषय मे विचार करेंगे तो आपकी सम्मति के बिना भी कर लेगे। व्यर्थ की बातो पर विचार करने के लिये हमारे पास समय नही है।"

"एक दिन आपने कहा था कि हमारा जन्म ही परोपकार के लिये हुआ है, इसीलिये कुछ निवेदन करने आया हूँ।"

"ऐसे परोपकार तो आपको ही शोभा देते है राजेश। हम तो ऐसे व्यक्तियो को कान पकड कर निकाल देते हैं।"

"परन्तु वह तो आपके कार्यालय मे काम करती थी।"

आपको जो कुछ कहना है साफ-साफ कहो। व्यर्थ मे समय नष्ट न करो।"

इस उपेक्षा को पाकर भी राजेश वहाँ से खड़ा नही हुआ। वह बोला—

"मजदूरो की कठिनाइयो के विषय मे क्या सोचा है आपने ?'

धर्मार्थी जी को स्मरण हुआ—एक दिन हमने राजेश को प्रलोभन से वश मे करने का निश्चय किया था। और अब यह स्वयँ ही वश मे हो गया है। इसीलिये प्रलोभन का प्रश्न ही नही उठता। वह बोले—

"मजदूर हमारे और हम मजदूरो के। फिर बताइये इस विषय मे आप कौन है बातें करने वाले कहना हो तो कुछ अपनी कहो।"

"बहुत रूखी बाते कर रहे है इस समय आप।"

हमने तो कभी मीठी बातें भी की थी। हम क्या करे, तुमने उस समय सुना ही नही। उस समय शायद आप हवा के घोडे पर सवार थे।"

"और इस समय आप उसी घोडे पर सवार है।"

"देखो राजेश! तुम अभी हमे नही जानते।"

तुम्हारी वर्ष की कमाई हमारे एक घन्टे के खर्च के बराबर है।

ढ़ाई अक्षर पढकर स्वयँ नेता न समझो। अभी कुछ दुन्नियाँ मे करके दिखाओ फिर कुछ बनने की बात सोचना। मजदूरो को उल्लू बनाकर अपना उल्लू सीधा न करो।

राजेश इस कथन को सुनकर तिलमिला गया। फिर भी समय की नाडी को पहचान स्वयँ को सन्तुलित रख वह बोला—

"कथन आपका सत्य हो सकता है। फिर भी मेरी दृष्टि मे धन के आधार पर मनुष्य के व्यक्तित्व की नाप नही होनी चाहिए।"

"विचित्र है तुम्हारे आर्दश ! एक ओर मजदूरो की अर्थ सिद्धि के प्रश्न को उठाते हो। दूसरी ओर उनकी आड मे अपनी भी अर्थ सिद्धि चाहते हो। और फिर कहते हो अर्थ का कोई महत्व ही नही है।"

"देखिये आप इस समय मानवता की सीमा को लाँघ रहे है।

"तो फिर तुमने यह अवसर ही क्यो दिया है।"

इस कथन को सुनकर राजेश का क्रोध चरम सीमा पर पहुँच गया। स्वयँ को कठिनाई से सन्तुलित कर वह बोला—

"तो मेरे यहाँ आने का आप मेरी दुर्बतला समझ रहे है।"

और मैने तुम्हे कभी सबल समझा ही नही है। मै तो यहाँ आने से पहले ही तुम्हारी दुर्बलता को जानता हूँ। दुर्बलता का परिणाम ही है कि पत्नी को मृत्यु की भेंट चढा दिया। दिन-रात लडकियो से खिलवाड करने वाला युवक कभी बलवान हो ही नही सकता। कभी रजनी तो कभी राधा, न जाने कितनी लडकियो का जीवन नष्ट किया है। यही है ना तुम्हारे बलवान होने का प्रमाण।"

इस समय राजेश के सयम का बाध टूट गया। खडा होकर वह बोला—

"ओ नीच, पाजी। चुप हो जा। यदि आगे कुछ कहा तो तेरी जबान निकाल लूंगा। इतनी देर से बकवास करता चला आ रहा है।"

धर्मार्थी भी खडे होकर चीख पडे—

"बाहर निकल जा नीच, कमीने। नही तो साले को कान पकडवा कर मुर्गा बना दूंगा।"

राजेश की आँखो मे रक्त टपकने लगा। उसे पता नही रहा कि वह कहाँ है ? उसके सीधे हाथ का अनायास ही घूंसा बन गया। दायाँ हाथ एक पल मे ही धर्मार्थी जी के कठ पर जम गया। धर्मार्थी जी की चीख घुटकर रह गई। राजेश के सीधे हाथ का घूंसा धर्मार्थी जी की नाक पर कई बार पडा। और फिर वह अचेत से होकर फर्श पर गिर गये। राजेश वहाँ से चल दिया। चपरासी उस समय बाहर नही था। धर्मार्थी जी का कमरा सबमे अलग था, किसी को कुछ भी पता न चला। वह फिर वहाँ से सीधा अपने कमरे पर आ गया।

धर्मार्थी जी की नाक से रक्त बहने लगा। कुछ देर वह अचेत से ही पडे रहे। जब कोई कागज लेकर चपरासी अन्दर आया तो उसको धर्मार्थी जी की यह हालत देखकर असीम आश्चर्य हुआ। उसने सोचा धर्मार्थी जी की नकसीरी छूट गई है। वह दौडकर पानी लाया और बड़े बाबू को खबर दी। धर्मार्थी जी कुछ सचेत हुए। वह फिर मुँह हाथ धोकर अपने कमरे मे आकर आराम करने लगे।

चोर की माँ जैसे मुँह छिपाकर रोती है। यही दशा इस समय धर्मार्थी जी की थी। उन्होने यह जीवन मे प्रथम बार इतनी चोट खाई थी। वह न डाक्टर बुला सके, और न ही किसी से कुछ कह सके। वह केवल इस समय राजेश से प्रतिरोध की वात सोच रहे थे। उन्होंने निश्चय कर लिया कुछ भी हो, इस राजेश को जीवित नही छोडूगा।

धर्मार्थी जी ने आज प्रथमबार स्त्री के अभाव को गम्भीरता से अनुभव किया। वह किससे कहे अपने मन की ब.त। सुनने वाले हजार है और वास्तव मे कोई नही। स्त्री ही जीवन की अभिन्न साथी है। अब तक वे समझते थे—स्त्री एक मदिरा की प्याली है। मदिरा के समान ही उसकी भी अनेक कोटियाँ होती है। जैसी पियो वैसा ही नशा होगा। कुछ का नशा शीघ्र उतर जाता है और कुछ का समय लेता है। रजनी को उन्होने एक दिन ऐसी प्याली समझा था जिसका नशा कभी नही उतरेगा। वह इस समय भी धमार्थी जी की कल्पनाओ मे खेल रही थी। वह सोच रहे थे—कितना अच्छा हो, इस समय रजनी मुझसे

कहे—

"अब कैसी तबियत है आपकी ? क्या आपके सिर को दबाऊँ ?

रजनी के स्मरण पर ही धर्मार्थी जी का राजेश पर क्रोध इतना बढा कि उनके दाँत कटकटाने लगे। इस समय यदि राजेश उनके सम्मुख होता तो वह कच्चा ही चबा जाते। वह सोच रहे थे—

"इस दुराचारी ने ही रजनी को मेरे निकट नही आने दिया। मै उससे विवाह भी कर लेता। आज मै चन्दन का वह वृक्ष हूँ जिसके पास सुगन्ध पाने के लिये दिन मे हजारो सर्प आते है। और यदि वह धन और पद की सुगन्ध समाप्त हो जाये तो मुझे चन्दन मानने वाले ही कल बबूल कहने लग जायेगे। स्वार्थ निरपेक्ष प्रेम यदि कर सकती है तो केवल स्त्री और वह भी पत्नी रूप मे। कितनी उपयुक्त थी इस अभाव की पूर्ति के लिये रजनी।

धर्मार्थी जी जब कम्बल ओढे विचारो मे खोये हुए थे, उसी समय उनके पहाडी नौकर ने उनसे कहा--

"शाब जी ! बाहर कुछ आदमी आया है।"

"उनसे कहो, क्या बात है, देखते नही आराम कर रहा हूँ।"

चपरासी बाहर गया और तुरन्त लौटकर आ गया। वह बोला—

"आपका हाल पूछने के लिए आया है सब लोग।"

'थोडे आदमी हो तो अन्दर बुलाओ। नही तो कहो शाम को मिले।"

आदमी पाँच थे चपरासी इसीलिए अन्दर ले आया। उनमे से एक ने गिडगिडाते हुए स्वर मे पूछा—

"अब आपकी तबियत कैसी है सरकार।"

"ठीक है। कुछ सिर मे दर्द है कुछ सोना चाहता हूँ।"

पाँचो वहाँ से चुपचाप चले गये। धर्मार्थी जी फिर सोचने लगे—

ये आने वाले चाटुकार सब कुत्ते थे। कोई पदोन्नति चाहता है तो कोई वेतन मे वृद्धि। स्वार्थी आदमी न जाने कितने द्वारो पर सिर

टिकाता फिरता है। इस दृष्टि से वह नीच राजेश ही महान् है। लालच के वशीभूत कभी नही हुआ। उसी समय उनके सिर मे जोर का दर्द हुआ। वह फिर राजेश के जीवन का अन्त करने की उक्ति सोचने लगे—एक दिन इस दुष्ट को सडक पर जाते समय कार से कुचल कर ही मुझे शान्ति मिलेगी। कुछ नही तो हाथ पैर टूटने से यहाँ यह आने मे असमर्थ अवश्य हो जायेगा। उसी समय बॉस कटने से वशी का बजना बन्द हो सकेगा और मै भी पूरी नीद सो सकूँगा।

पीडा के कारण उन्हे नीद नही आई। और फिर उन्होने नीद की गोली ही खानी पडी।

३९

कहते है माता बनने के पश्चात् स्त्री का आधा सौन्दर्य स्वयँ ही समाप्त हो जाता है। रजनी इस कथन का अपवाद सिद्ध हुई। अब उसके सौन्दर्य को चार चॉद लग गये है। अत अतीत की अपेक्षा वह अब कुछ स्वस्थ भी है। उसके आकर्षक अगो मे विशेष प्रकार का उभार है। आकृति पर आकर्षण को जन्म देने वाली चमक सी उत्पन्न हो गई है। शरीर मे सुगठन के साथ ही कुछ लचक भी है। विशेषकर जब वह अस्पताल के शुभ्र-वस्त्रो को धारण करती है, देखते ही बनता है। इसकी इस सुन्दरता की वृद्ध और वृद्धा एक ओर सराहना करते हैं तो दूसरी ओर कुछ चिन्तित भी रहते है। वृद्धा को डर है कही नजर न लग जाये। वृद्ध सोचते है—अस्पताल मे ही कोई युवक सिर दर्द न बन जाये। रजनी जब अस्पताल मे जाती है वृद्धा उसे कोई शृगार नही करने देती। दूध पिलाती है, तो उसमे थोडी सी चूल्हे की राख अवश्य डालती है। उसके जाते ही वृद्धा बच्चे को छाती से लगाकर

बैठ जाती है। जब बच्चा सो जाता है, तो कुछ काम करती है।

रजनी आजकल कुछ सन्तुष्ट भी है। उसे यदि कोई चिन्ता है, तो केवल राजेश की है। वह जानना चाहती है उसके जीवन मे अब कौन सा मोड आयेगा। उसे यह पक्का विश्वास है—राजेश को घर वालो की हट पर विवाह तो करना ही होगा। अब देखना यह है कि उसको भावी जीवन सगिनी कैसी मिले। अपनी ओर से यही चाहती है कि कोई राजेश्वरी जैसी स्त्री मिले तो उत्तम है। साधारण स्त्री अब राजेश के मन पर अधिकार नही कर सकती। राजेश्वरी ने तो अपने त्याग और सेवा से राजेश को अपनी मुट्ठी मे बन्द कर लिया था। सब स्त्री ऐसी कहाँ होती है। स्त्री का स्त्रीत्व वही है, जिसके सम्मुख पुरुष की सारी चचलता घुटने टेकती चली आये।

छुट्टी समाप्त कर अस्पताल आने का आज चौथा दिन है। जब वह घर से चली थी, उसने मन मे सोचा था—यदि अवसर मिला तो आज राजेश के पास जाऊँगी। वह मेरी न सुने, परन्तु मेरा तो धर्म है, उसकी पूछना। न जाने कितनी उदासी होगी उसके मुख पर! राजेश प्रथम मेरा है ओर पीछे किसी ओर का। मुझे अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहना चाहिए। रजनी जब अस्पताल मे पहुची, उसे एक विषम स्थिति का सामना करना पडा। एक मनचले डाक्टर ने उसे कुछ सकेत किया। पहले भी कई बार यही डाक्टर अस्पष्ट सी भाषा मे कुछ कह चुका है। रजनी ने पहले इस ओर यिशेष ध्यान नही दिया। आज भी वह डाक्टर के सकेत को दृष्टि मोड कर टालने लगी। डाक्टर था पुराना खिलाडी। उसने सकेत की उपेक्षा देख अन्त मे बातचीत आरम्भ कर दी। वह बोला—

"क्या आपके पास कुछ समय है?"

रजनी ने उपेक्षा भरे स्वर मे उत्तर दिया—

"इस समय तो मेरी ड्यूटी आरम्भ हो गई है।"

"कुछ समय अवश्य निकालो। कोई आवश्यक बात है।"

"कुछ समय तो अभी है। कहिए क्या बात है?

"इस प्रकार भाग दौड मे नही, कुछ शान्ति से बातें करनी हैं।"

"ड्यूटी टाइम मे तो शान्ति से बात सभव नही है, डाक्टर साहब।"

"बडा रुखा व्यवहार है आपका। अब आप हमसे इस प्रकार नाक चढा कर बाते कर रही है, तो फिर रोगियो से आपका कैसा व्यवहार होगा।"

"आप चिन्ता न करे, मैं अपने कर्त्तव्य को अच्छी तरह जानती हूँ।"

"आपको यह पता है कि आप किससे बाते कर रही है।"

"जी हाँ! मै अस्पताल मे एक डाक्टर से बाते कर रही हूँ। साथ मे यह भी जानती हूँ कि डाक्टर साहब अस्पताल के सम्मानित डाक्टर है।"

"देखो रजनी! इस समय आप ट्रेनिंग ले रही है। इन दिनो मे आपको बहुत सभलकर चलना है। अभी आप हमारी मुट्ठी से बाहर नही है।"

"क्षमा करना। मुझे इसका ज्ञान है।"

"तो फिर तुम्हारी यह और भी बडी भूल है। जानकर भी हससे इस प्रकार का रुखा व्यवहार कर रही हो।"

"आखिर आप चाहते क्या है श्रीमान् जी?"

"इसका पता तो आपको होना ही चाहिए। क्या आप पुरुष की दृष्टि को पढना नही जानती?"

"मै अब भी नही समझी आपकी बात।"

"मूर्ख न बनाओ रजनी। सोते को जगाया जाता है जागते को नही। सब कुछ जानकर भी अनजान बनने से काम नही चल सकता।"

रजनी ने पीछा छुडाने के लिए कहा—

"मै आपसे फिर बातें करूँगी। इस समय एक बार रोगियो को देख लूँ।"

"आपकी ड्यूटी आज हमारे पास ही रहेगी आप चिन्तां न करें।"

"इसकी मुझे पूर्व सूचना तो नही मिली।"

"हमने जो कुछ कहा है, क्या वह सूचना नही है। आओ हमारे साथ कमरे मे। वही पर है आपकी ड्यूटी।'

डाक्टर इस कथन के साथ ही चल दिया।

रजनी भी दबे पॉव उसके पीछे चल पडी। वह जानती है डाक्टर अस्पताल मे विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति है। वह इस समय सोच रही थी—सचमुच जहॉ नारी के लिए वरदान है वही पर अभिशाप भी। जिस मार्ग को चुनती हूँ उसमे ही कॉटे बिछ जाते है। यहाँ भी दूसरे धर्मार्थी राह रोककर खडे हो गये है। अब इनसे कैसे पिंड छुडाया जाये ?"

डाक्टर अपने कमरे मे पहुँच कर एक कुर्सी पर जम गए। रजनी उसके सम्मुख शान्त सिर झुकाये अभियुक्ता के समान खडी हो गई। डाक्टर उससे बोला—

"बैठिए, आप तो चपरासी बन कर खडी हो गईं।"

"आपके सम्मुख मेरा अस्तित्व चपरासी का ही है डाक्टर साहब।"

"कैसी बातें करती हो रजनी। हम तो तुम्हे आँखो मे बैठाए हुए है।"

"शायद आपको पता नही मै विवाहित हूँ।"

"यह तो हम जानते हैं। विवाहित के साथ ही आप एक बच्चे की मॉ भी है। फिर भी मन ने जिसको अपना लिया बस वही अपना है। जिस सौन्दर्य की हमे प्यास है, उसका तो आपके पास सागर है।"

"सागर का जल खारा होने से सेवन नही किया जाता डाक्टर साहब।"

"यह सोचना तो हमारा काम है।"

"तो मैं बुद्धिहीन हो जाऊँ ?"

"यही तो हमारा सबसे बडा सुख होगा।"

"और यही बुद्धिहीनता नारी का सबसे बडा अभिशाप है।"

"तुम तो भावुकता के क्षणो मे भी दार्शनिक हो बैठी। कुर्सी पर बैठ जाओ।"

रजनी ने कुर्सी पर बैठ कर धीमे स्वर मे कहना आरम्भ किया—

"कर्तव्य के समय भावुकता को भूलना ही उत्तम है डाक्टर साहब! हम जिस कार्य को कर रहे है वह कितना महत्वपूर्ण है, यह तो आप जानते ही है। भारत के इस अस्पताल मे देश के प्रत्येक कोने से न जाने कितने रोगी हमारे पास कितनी आशाये लेकर आते है। उनके प्रति अपने कर्त्तव्य को भूल कर यदि हम प्रेम लीलाओ मे खो जाये तो फिर बताइये इससे बडा अधर्म और क्या हो सकता है। हमे अपने कर्त्तव्य को पहचानना चाहिए। हम वेतन पाते है। केवल वेतन भोगी होकर जीने से मर जाना कही उत्तम है। अब तक मैं दस रोगियो को देखती। उनका धैर्य बँधाती। और आपने जैसे मुझे यहाँ बन्दी बना कर छोड दिया है। कुछ विचार तो कीजिये।"

"आप यहाँ हमसे कुछ सीखने आई है या हमको पढाने।"

आप डाक्टर है इसीलिए निस्सन्देह मुझसे बडे है। आपका चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान मुझसे बडा है, यह कौन नही जानता। फिर भी मेरे विचार से सच्चा ज्ञान वही है जो मनुष्य को कर्त्तव्य के प्रति सचेत रखे। विषय का पडित होने के साथ ही मनुष्य को जानना चाहिए कि मनुष्यता क्या वस्तु है। हमारे देश मे आज इसी बात का अभाव है। कथनी के रूप मे त्यागी, परोपकारी और समाज सुधारको के दल फिरते है और जब परखते है करनी रूप मे, तो कोई भी खरा नही उतरता। थोडा इस ओर भी ध्यान देकर देख लो।"

डाक्टर को लगा—स्त्री है खेली खाई। मूल विषय को निकट ही नही आने देती। कुछ विचार कर वह बोला—

"आपको तो अध्यापिका होना चाहिए था।"

"किसको क्या होना चाहिए और वह क्या बन जाये, यह सब तो परिस्थितियो पर निर्भर है डाक्टर साहब! जहाँ तक मानव सेवा का

प्रश्न है। वह मनुष्य कहीं भी कर सकता है। मेरी दृष्टि मे मनुष्य केवल पैसा कमाने की मशीन नही है। उसे कुछ और भी होना है। उसे सोचना है—जिस भवन को मै अपने विश्राम के लिए बना रहा हूँ, कही उसकी दीवारो मे अत्याचार का ईट-चूना तो नही लगा है। जैसे भवन निर्माता मनुष्य नही स्वयँ पत्थर है, जो दिन-रात दूसरो का शोषण कर अपने भोग विलास मे खोये रहते है। मेरी दृष्टि मे इससे अच्छी है, मजदूर की वह झोपडी, जिसमे मानवता विश्राम करती है।"

"देखो रजनी, मुझे तुमसे मार्क्सवाद नही पढना है। यदि पढाना ही है तो फ्रायड को पढा दो।"

"मै आपको पढा नही रही हूँ महोदय। मनमाना अर्थ न लगाओ।"

"इन सब बातो का मतलब है, कि तुम नर्स बनना नही चाहती।"

"देखो डाक्टर! चरित्र बेचकर यदि मुझे सृष्टि की कोई सचालिका भी बनाये तो मै बनना स्वीकार नही करूँगी। मेरे मस्तिष्क मे नर्स के कर्तव्य का जो चित्र अकित है, मै उसको कभी नही भुलाऊँगी। एक नर्स का कर्तव्य है—रोगियो की देखभाल भी करे और उन्हे मानसिक सात्वना भी दे। मै अपने इस धर्म का सदैव पालन करूँगी। कृपया आप अनाधिकार माँग को प्रस्तुत न करे। मै जो हूँ मुझे वही समझे।"

डाक्टर को विश्वास हो गया—प्रलोभन या भय से यह युवती वश में नही आ सकती। भाव और वाणी मे परिवर्तन कर वह बोला—

"तो आपने हमारी याचना को अन्तिम रूप मे ठुकरा दिया है।"

"मुझे आपकी याचना की भूख नही है डाक्टर साहब! मै तो चाहती हूँ आप मुझे छोटी बहन समझ कर कोई भी आदेश दें और मै उसको नतमस्तक स्वीकार कर कृतार्थ हो जाऊँ।"

"अच्छा जाओ अपना काम करो। व्यर्थ समय नष्ट करने से क्या लाभ?"

रजनी चुपचाप वहाँ से उठकर अपने वार्ड मे आ गई। उसने एक कोने से रोगियो को देखना आरम्भ कर दिया। चार बजे तक वह

बराबर रोगियो की देखभाल करती रही। वह चार बजे अस्पताल से चली और साढे पाँच घर पहुँच गई। उसने जाते ही बच्चे को दूध पिलाया। वृद्धा ने इतनी देर मे चाय तैयार कर दी। रजनी चाय पीकर खाना बनाने लग गई। और वृद्धा बच्चे को लेकर लेट गई। आठ बजे तक खाना बनाकर वृद्धा और रजनी बातो मे लग गई। नो बजे वृद्ध धर्मशाला से आये। रजनी ने उनके साथ भोजन किया, और फिर दोनो बातो मे जुट गये। वृद्ध बोले—

"आज तुम कुछ उदास हो, बेटी! क्या बात है?"

"कुछ नही पिताजी! सब ठीक है।"

"छुपाओ नही बेटी। कुछ बात अवश्य है।"

"बात कुछ खास तो नही है। आज एक डाक्टर अपनी मूर्खता का परिचय देने लगा। उसी विषय मे कुछ सोच रही थी।"

"देखो बेटी! स्त्री घर से बाहर कोई भी कार्य करे उसे भेडिये अवश्य मिलेगे। इसीलिये प्रत्येक समय बहुत ही सावधानी से चलना है तुम्हे। कार्य क्षेत्र मे नारी को कीचड का कमल बनकर ही अपने अस्तित्व की सुरक्षा करनी चाहिए।"

"कल आप उस डाक्टर को जाकर समझा देना" शब्द वृद्धा के थे।

"तुम मूर्ख तो नही हो। हमे अपने बच्चो को समझाना था, सो समझा दिया। भला ये पके हुये घाघ अब क्या समझेंगे।"

"अच्छा अब तुम सो जाओ बेटी, रात बहुत हो गई है।" रजनी तुरन्त बच्चे के पास सो गई।

४०

सेठ करोडीमल की विवाहित पत्नी का बडा लडका यिदेश से व्याव सायिक अध्ययन करके भारत लौट आया। वह अब मिल का विधिवत् मैनेजन के रूप मे सचालन करता है। धर्मार्थी जी का कार्य अब मजदूरो की गतिविधियो का अध्ययन करना ही शेष रह गया है। वह उनमे सारा समय लगाते है। इसीलिए उन्होने अपने गुप्त साधनो से उन मजदूरो का पता लगा लिया है जो हृदय से राजेश के साथ है। उनमे से अधिकतर पजाबी कारीगर है वे कुछ निर्भीक और दृढ निश्चयी से है। इसीलिए धर्मार्थी जी ने कोई न कोई बहाना खोजकर उनको निकालना आरम्भ कर दिया है। मिल मे इस बात से असन्तोष की लहर सी दौड गई है। धर्मार्थी जी वाणी के जितने पहले से कोमल हो गये है। उनके हृदय की कठोरता उसी अनुपात से बढ गई है सेठ जी के सुपुत्र, और धर्मार्थी जी को लेकर मजदूरो मे उन दोनो के व्यव-हार की चर्चा होने लगी है।

उस दिन छब्बीस जनवरी होने से मिल बन्द था। धर्मार्थी जी ने चार बजे मिल के स्थायी रग मच पर एक नाटक खेलने की व्यवस्था की। नाटक का शीर्षक था 'भारतमाता'। मजदूरो के बच्चो के लिये कुछ मिठाइयाँ बाटने की योजना भी बनाई गई। धर्मार्थी जी ने एक अब प्रचार यह भी किया है—मजदूरो के सब बच्चे मेरे ही बच्चे है। कुछ कारीगर इस कथन की खिल्ली भी उडाते है। वह कहते सुने जाते है—बच्चे तो अब धर्मार्थी जी के हो गये है। स्त्रियाँ भी एक दिन उनकी ही बन जायेगी। हमको तो वह पूरे साधू बनाकर ही दम

लगे। सध्या को चार बजे नाटक देखने विशेष मजदूर नही आये। उन्होने आज भी मजाक बनाया—हम तो भाई साधू है हमे नाटक देखने की क्या आवश्यकता है। मूल बात यह थी सब के सब सवेरे तो झाँकियाँ देखने गये थे। एक बजे तक वहाँ से लौटकर आए, और फिर खाना खाकर अधिकतर मजदूर चादर तानकर सो गये।

धर्मार्थी जी ने कार्यक्रम मे कोई परिवर्तन नही किया। नाटक निश्चित समय पर खेला गया। दर्शको की सख्या सीमित होने से कोई गडबड आज नही हुई। नाटक की समाप्ति पर सदैव के समान ही धर्मार्थी जी ने सक्षिप्त भाषण दिया। वे बोले—

"भाइयो! आज का दिन इतिहास मे विशेष महत्व रखता है। यह दिन हमारा राष्ट्रीय पर्व है। हमारे नेताओ ने इसी दिन कुछ प्रतिज्ञाएँ की और उनको पूर्ण किया। आओ हम भी प्रतिज्ञा करे—देश के विकास मे तन, मन, धन से जुटे रहेगे। जो हमे पथ-भ्रष्ट करेंगे हम उनकी नही सुनेगे। हमे देश मे राम राज्य लाना है। वह दिन-रात काम करके ही लाया जा सकता है।

भाषण के समय ही धर्मार्थी जी की दृष्टि कुछ मजदूरो के मध्य राजेश पर पड गई। वह वैसे तो छिपकर खडा हुआ था, फिर भी भीड कम होने से धर्मार्थी जी को दिखाई दे गया। उन्होने तुरन्त भाषण बन्द कर दिया। मजदूर भी इधर उधर हो गये। धर्मार्थी जी ने वहाँ से जाकर धन्नू को बुलाया। वह उनसे बोले —

"तुमने देखा है? राजेश आज फिर मजदूरो के साथ मिल मे ही है। आज दिखा दो अपनी पहलवानी।"

धन्नू ने सीने मे अपेक्षाकृत उभार लाते हुए कहा —

"अभी लो बाब! आज इसकी ऐसी मरम्मत करेंगे जो नानी याद आ जाये। ये भी याद करेगा किससे पाला पडा है।"

धर्मार्थी जी ने दस का नोट धन्नू के हाथ मे थमा दिया। वह उस को जेब मे रख अपने साथियो को लेकर राजेश के घर लौटने के मार्ग

मे खडा हो गया। राजेश जब आया तो उसको रोक कर धन्नू बोला—

"ठहरो बाबू, कुछ बाते करनी है।"

साइकिल से उतर कर राजेश स्वर मे नम्रता लाकर बोला—

"कहो भाइयो क्या बात है ?"

"क्या आप हमको जानते है ?"

"क्यो नही ! अपने भाइयो को कौन नही जानता।"

"आप मिल मे आना छोडोगे या नही ?"

"मिल मेरी ससुराल नही है भाई धन्नू। आप ऐसा चाहते है तो मै कभी नही आऊँगा। और बोलो क्या आज्ञा है ?"

"अच्छा यह बताओ आप यहाँ आते क्यो है ?"

"आप भाइयो के दर्शन करने के लिए।"

"बेकार की बात छोडकर अब आप यहाँ आना बन्द कर दीजिए।"

"कह तो दिया कल से नही आयेगे। बस एक बात का उत्तर आप दे दे। फिर हमारी आपकी पूरी विदाई हो जायेगी।"

"बोलो—वह क्या बात है।"

"आप सब धर्मार्थी के कहने से मेरी पिटाई करने आये है, यह मै जानता हूँ। अब मै आपसे पूछना चाहता हूँ कि मैने आप भाइयो का क्या बिगाडा है ?"

"हम तो पैसे के लिए पिटाई करते है। आप भी जिसकी चाहे करा ले।"

"देखो भाइयो। यह जीवन और जवानी केवल चार दिनो की है। हमे इस दुनियाँ से अन्त मे जाना ही है। फिर बताइये इसको क्यो बेकार किया जाए। मुझे आप मार सकते है यह ठीक है परन्तु यह वीरता नही है। मेरे विचार मे सबसे बडी वीरता है, दुर्बल पर दया। आप विचार कीजिए उनकी सहायता छोड़कर आप एक धनिक

के हाथ का खिलौना बने हुए है । मै चाहता हूँ आप अपने साथियो को गले से लगा लें । और फिर मुझे जो आज्ञा दोगे मै स्वीकार करूँगा ।"

इस कथन को सुनकर धन्नू कुछ पिघला । वह बोला—

"क्या बताओगे, हमे क्या करना चाहिए ?"

"अपने भाइयो के अधिकार की रक्षा । आपका मिल मे प्रभाव है । आप एक सगठन बना सकते है । मै जानता हूँ, आपको धर्मार्थी जी ने मेरे विरुद्ध कितना कुछ कहा है । अच्छा हो आप मेरे साथ कुछ दिन चलकर देखे । यह ठीक है—मैं अच्छा आदमी नही हूँ । फिर भी उतना बुरा नही हूँ जितना आपको बताया गया हूँ ।"

धन्नू का एक साथी पूर्ण प्रभावित हो गया । उसने पूछा—

"आप दिल्ली मे रहते कहाँ पर है ?"

राजेश ने अपना पता लिखकर दे दिया । वह बोला—

"मेरे पास जब भी आप आये सवेरे ही आये ।"

"कल आप किस समय आयेगे मिल मे ?" शब्द धन्नू के थे ।

"अब मै क्यो आऊँगा ? आपने मेरे काम को सभाल तो लिया ।"

"कल आपको आना ही होगा ।"

"आप बुलायेंगे तो मै अवश्य ही आऊँगा ।"

"हम प्रतिज्ञा करते है कि अब से हम अपने भाइयो के साथी रहेगे । आप हमे रास्ता दिखाये, चलना हमारा काम है ।"

राजेश ने गद्‌गद् होकर सबको छाती से लगाया । सबको लगा—जैसे सचमुच अपना कोई बिछुडा हुआ भाई पाकर गले से लग रहा है । सबसे बिदा होकर राजेश सीधा अपने घर आ गया । उसने देखा—वहाँ रजनी उदासी की जीवित प्रतिमा बनी खडी है । रजनी ने हाथ जोडकर प्रणाम किया । राजेश ने प्रणाम का उत्तर देकर ताला खोला । चारपाई निकाल ली । वह बोला—

"बैठो रजनी । कहो कैसे आई हो ?"

"क्या मुझे यह भी बताना होगा कि मैं क्यो आई हूँ ?"

"अकारण तो कोई क्रिया नही होती ।"

"मै आपके दर्शन करने आई हूँ, तर्क करने नही ।"

"मेरे दर्शनो से तो खिली कली भी मुरझा जाती है रजनी । चाँद को देखूँ तो ग्रहण लग जायेगा । फूल को छू लूँ तो वह भी पत्थर बन जायेगा । क्या करोगी मेरे दर्शन करके । अपनी दुनियाँ को बसाओ । मुझे तो अब भूल ही जाना ठीक है ।"

कटुता के स्थान पर आज रजनी ने प्रथम बार राजेश के स्वर मे कुछ अपनत्त्व की झलक सी देखी । उसने भी हृदय को व्यक्त किया—

"ऐसा न कहो मेरे देवता ! बहन राजेश्वरी को लाना तो अब मेरे लिए सम्भव नही है । हाँ इतना अवश्य है कि यदि कोई सेवा मुझ दासी के योग्य हो तो मै प्रस्तुत हूँ । मेरे तो आप जीवन पर्यन्त ही सिर के स्वामी रहेगे ।"

"नारी की वाणी कितनी कोमल होती है, उतना हृदय नहीं होता रजनी ।"

"दु ख तो यही है अब आपको सब राधा ही दिखाई देती है ।"

"राधा के निकट भी मुझे तुमने ही लाकर खडा किया था ।"

"यही तो भूल है, जिसके लिए मुझे जीवन भर पश्चाताप करना होगा । कितना अच्छा होता मै उसके पास आकर ही न ठहरती ।"

"घावो को हरा न करो । अब यह बताओ किसलिए आई हो ?"

"मेरे देवता का आशीर्वाद मुझ अभागी के लिए वरदान सिद्ध हो गया है । इसी की सूचना देने के लिए मै यहाँ आई हूँ ।"

"यह सूचना तो मुझे उसी दिन मिल चुकी थी । ईश्वर बच्चे सहित आपको प्रसन्न रखे । रही दूसरी बात । आप वैश्या है या सावित्री, इससे अब मेरा कोई सम्बन्ध नही है । बुलबुल के उडने पर चमन बसे, या उजडे, उसे इससे क्या । अपना भला-बुरा आपको स्वयँ ही सोचना है ।"

"एक बार अपने बच्चे को तो देख ही लेते ।"

"सुख और दुख के दोनो पथो के अन्तिम छोरो को देखकर अब

कुछ भी देखने की इच्छा नही है, रजनी ।"

"आपके खाने का क्या प्रवन्ध है आजकल ?"

"यह जानकर तुम क्या करोगी ?"

"यह जानना मेरा धर्म है। खाना बनाकर दे जाया करूँगी।"

"छोडो व्यर्थ की बातो को। इस समय मै सक्रान्ति काल की वेला से गुजर रहा हूँ। अभी मुझे कुछ न कहो तो अच्छा है।"

"एक बात मानेगे आप।"

"निश्चित नही कह सकता। सम्भव हुआ तो अवश्य मानूंगा।"

"आप विवाह कर लीजिए।"

"इस विषय मे आप न सोचे। अभी तो मेरे सोचने वाले मेरे सिर पर बैठे है। आप विश्वास रखे, अविवाहित रहकर मै भविष्य मे आपके पथ का रोडा किसी भी स्थिति मे नही बनूंगा।"

"मुझे दुःख है राजेश, आप मुझे अब भी नही समझे। मै जो भी कहती हूँ आप मनमाना अर्थ लगाकर मेरे कथन की उपेक्षा कर देते है।"

"स्त्री को जितना भी कम समझा जाए, उतना ही अच्छा है रजनी।"

"परन्तु मै आपकी पत्नी हूँ स्त्री नही। मुझे तो आप अतीत मे ही पूर्ण रूप से समझ चुके है। अब यदि न भी समझे तो भी मेरे निश्चय मे कोई परिवर्तन नही हो सकता। रही आपकी बात—वह आपको जानना है।"

"मै वही तो कहता हूँ, जख्मो को हरा न करो।"

"हृदय की आँखो से देखो राजेश। मै घावो को हरा करने वाली नही हूँ, उन पर मरहम लगाने वाली हूँ।"

"उचित समझो तो चारपाई पर ही बैठ जाओ।"

"उठने के लिए बैठकर क्या करूँगी मेरे प्राण।"

राजेश ने चारपाई उठाकर अन्दर डाल दी। वह बोला—

"चलो फिर अन्दर बैठ जाओ।"

रजनी को एक झटका सा लगा और वह उसी के साथ अन्दर चली गई। वह चारपाई पर बैठ गई और राजेश चुपचाप खडा हो गया। उसको देखकर रजनी भी खडी हो गई। दोनो कुछ देर तक एक दूसरे को देखते रहे। भाव विभोर सा हो राजेश बोला—

"खडी क्यो हो गईं बैठ जाओ।"

इस कथन को सुनते ही रजनी अतीत के समान ही राजेश के चरणो मे गिर गई। राजेश उस समय कुछ देर शान्त खडा उसकी पीठ को देखता रहा। आज उसे रजनी अतीत से भी अधिक सुन्दर दिखाई दी। उसके पगो मे कम्पन सी हुई। शरद ऋतु होने पर भी राजेश को पसीना आ गया। उसके हाथ कई बार रजनी की पीठ की ओर बढे। वह पूर्ण शक्ति लगा कर उन्हे रोके रहा। वह विवश हो गया। और उसने दोनो हाथो से रजनी को ऊपर उठा लिया। रजनी ने खडी होकर देखा—राजेश की आँखो मे अतीत कालीन उन्मत्तता उबल रही थी। एक पल के लिए रजनी भी कपित सी हो गई। वह न जाने किस लोक मे भ्रमण के लिए चली गई। वह फिर जैसे सोते से जागी हो। सचेत सी हो, स्थिति से सुरक्षा के लिए वहाँ से तुरन्त चल पडी। राजेश ने चलते ही उसका हाथ पकड कर उसे रोका। वह बोला—

"अभी न जाओ रजनी, बैठो।"

रजनी ने पूर्ण सचेत हो राजेश की दृष्टि को पढा और कहा—

"फिर आऊँगी सध्या को। इस समय चलने दो।"

राजेश को न जाने क्या हुआ, रजनी के हाथ को कस कर पकड लिया। रजनी जैसे शिकजे मे कस गई हो। वह इस समय सोच ही नही पाई कि क्या करूँ। धीमे स्वर मे वह बोली—

"मुझे छोड दो राजेश, बच्चा रोता होगा।"

"आज तुम नही जा सकोगी रजनी।"

उसी समय रजनी ने एक झटका लगा कर हाथ को छुडा लिया। वह फिर द्रुत गति से बाहर आ गई। राजेश का मन इस समय बल्लियो उछल रहा था। उसने रजनी को पकडने की भी चेष्टा की। वह उस समय बाहर सडक पर जा चुकी थी। राजेश हारे जुआरी के समान पाषाण प्रतिमा बन कर खडा हुआ उसे देखता ही रह गया।

४१

राजेश ने उस सध्या को भोजन नही किया । वह आधा सेर दूध पीकर ही सो गया । वह चाहता था – तुरन्त नीद आ जाए । उसे नीद नही आई । रात्री का एक बज गया और वह बराबर विचारो मे डूबता गया । उसने फिर बत्ती जला कर कोई पुस्तक पढना आरम्भ कर दिया । वह दो बजे तक पढता रहा । उसका मस्तिष्क कुछ थकने लगा । वह फिर बत्ती बन्द कर बिस्तर पर मुँह ढाँप कर पड गया । इस बार उसे कुछ नीद सी आ गई । नीद कुछ गहरी न थी । उचटी सी नीद मे उसने स्वप्न देखा—रजनी उससे कह रही है—"मुझे विवेक की दृष्टि से पहचानो राजेश । मै तुम्हारी हूँ केवल तुम्हारी । तुम्हारे लिए कौन सा बलिदान है, जो मै नही कर सकती ।"

राजेश की नीद खुल गई । वह फिर चिन्तन के भार से दब गया । रजनी के विषय मे ही सोचने पर विवश हो गया । अब उसकी आँखो के सम्मुख आठ घन्टे पूर्व की घटना का चित्र खेल रहा था । वह उसी के विषय मे विचार मग्न हो गया—

"मैने यह क्या किया ? सचमुच मै बडा मूर्ख हूँ । एक बार जो मक्खी मुँह से उगल दी उसी को निगलने के लिए उद्यत हो गया । जिस सुन्दरता पर मै मुग्ध हुआ वह मेरे लिए कोई नवीन न थी । ऐसी ही भूलो से मेरे जीवन का विनाश हो गया है । सचमुच मै सयमहीन हूँ । रजनी एक चचल गाय है । वह एक खूटे से बध ही नही सकती । फिर मैंने यह मूर्खता क्यो की ? रजनी को अब मेरी दुर्बलता का पता चल गया है । क्या वास्तव मे नारी की सुन्दरता ही सब कुछ है ? नही

कदापि नही। सुन्दरता और शिक्षा के साथ ही नारी के लिए सचरित्र होना भी बहुत आवश्यक है। इसके बिना तो नारी उस सुगन्धहीन सुमन के समान है जिसमे केवल आकर्षण शक्ति ही है।

विचारो मे डूबे राजेश को क्रोध आ गया। उसके क्रोध का केन्द्र बिन्दू थी, इस समय वही रजनी। उसने अपने आप को भी फटकारा—मैने रजनी का स्वागत ही क्यो किया? उसको यूं ही खडी देखकर मुझे लौट जाना चाहिए था। फिर मैने उसके लिए पलके ही बिछा दी। नीच आखिर नीच है। नाली की ईट भला मन्दिर मे कैसे शोभा पा सकती है। कुत्ते की पूँछ बारह वर्ष नलकी मे रह कर भी सीधी नही हो सकती। फिर भला रजनी क्या बदल सकती है। स्त्री का पाँव एक बार फिसलने पर सभालना उतना ही कठिन है जितना वर्षा ऋतु मे उमडती सरिता के प्रवाह को मोडना।

राजेश रजनी को चारो ओर से परखने लगा—वह अब माता बन कर गर्वीली हो गई है। प्रदर्शन के लिए पावो मे भी पड गई। तन उस का यहाँ था और मन बच्चे के पास। एक भूखे वृद्ध का आश्रय पाकर वह समझती है मै मल्लिका बन गई हूँ। तुच्छ व्यक्ति की यही पहचान है। छोटे नाले वर्षा ऋतु मे अवश्य उमडते है। किन्तु अपनी सीमा मे नही रहते सागर प्रत्येक ऋतु मे एक जैसा ही रहता है। उसकी एक मर्यादा है। नौकरी मिलने से तो रजनी मुझे नही स्वयँ को भी भूल गई है। आखिर इसका अस्तित्व ही क्या है? इधर उधर बन सवर कर भटकती रहती है। इसका सौदर्य एक मरुस्थल के समान है। न जाने कितने प्यासे मृग इसमे भटकते रहते है। कितनी भूल की है मैने उसका हाथ पकड लिया। इससे उसका गर्व सातवे आसमान पर पहुंच गया है। पुरुष के सयम को पाकर नारी मोम बन जाती है। विपरीत उसके पुरुष यदि मोम बन जाये तो नारी को पाषाण बनते देर नही लगती। मैने आज मोम बनने की भयकर भूल की है।

आखिर मैने यह सब किस शक्ति की प्रेरणा से किया है। उसे उत्तर मिला—यह सब उद्दड मन के आदेश का परिणाम था। मन मनुष्य

की प्रतिष्ठा को एक पल मे ही धूल मे मिला देती है। इसीलिए सतो ने इसकी भर्तस्ना की है।

मन निंदा करते हुए राजेश तुरन्त ही मन के वशीभूत हो गया—कितना अच्छा हो रजनी एक बार फिर उसी रूप मे आए। कितना सुहावना था वह दृश्य जब रजनी पाँवो मे पडी थी। प्रदर्शन के लिए ही सही। कुछ था अवश्य, जो आँखो से ओझल ही नही होता। इस समय की झुझलाहट भी तो यही कह रही है। भोग जीवन का जहाँ एक अभिशाप है, वही पर वरदान भी। नारी के समर्पण को ग्रहण करने मे जो सुख है, शायद वह अन्य कही नही।

उस समय पाँच बजे होगे। राजेश को न जाने क्या हुआ। उसने द्वार खोलकर खडे ही खडे निश्चय किया, मुझे अभी रजनी के पास चलना चाहिए। चलना ही नही, क्षमा भी माँगनी चाहिए। समय के अनुसार बच्चा मेरा है। मुझे बच्चे को अपनाना चाहिए। रजनी कही भटकती फिरे। बच्चा निश्चित रूप मे मेरा है।

कमरे के द्वार बन्द कर राजेश सडक पर आ गया। वहाँ कोई सवारी उस समय न थी। खडे-खडे ही उसके विचारो मे नया मोड आ गया। उसने अपने से ही कहा—क्या कर रहे हो राजेश ? एक मूर्खता करके दूसरी भूल न करो। जो तुम्हारा है वह दूर होकर भी तुम्हारा ही रहेगा। धैर्य रखो ! ठडा भोजन ही उचित होता है। गर्म निगलने से मुँह जलने का अदेशा है। एक ओर हजारो मजदूरो को आँखें देना चाहते हो और दूसरी ओर स्वयं ही अन्धे बनकर चल पडे।

राजेश फिर सडक से कमरे पर लौट आया। वह फिर कमरे के द्वार बन्द कर सो गया। उसे इस बार कुछ नीद आ गई। वह दो घण्टे तक सोता रहा। लगभग सात बजे उसे द्वार पर थपकियाँ सुनाई दी। वह फिर आँखे मलता हुआ खडा हो गया। उसे द्वार खोलते ही राधा के पिता सम्मुख खडे हुए दिखाई दिए। वही बात हुई खोदा पहाड़ निकला चूहा। वह अनुमान कर बैठा था—रजनी आई है। कुछ खिन्न

सा होकर राजेश राधा के पिता से बोला—

"कहिए कैसे आए है आप इस समय ?"

"जिस वृक्ष को मेरी सन्तान ने काटकर फेक दिया है मै उसी की छाया मे विश्राम के लिए आया हूँ वेटा ।"

"कहिए ना, मुझसे आप क्या चाहते है ?"

"प्रथम तो यही कहना है राधा की जमानत नही हो सकी ।"

"तो फिर इस विषय मे मै क्या कर सकता हूँ ?"

"करना यही है। राधा का मानसिक सन्तुलन अब ठीक हो गया है। वह चाहती है—इस दुनियाँ से विदा होने से पहले एक बार राजेश के दर्शन और कर ले। क्या तुम मिल सकोगे उससे ?"

"आप व्यर्थ मे मेरा सिर दर्द क्यो कर रहे है। यदि कोई खास बात हो तो शीघ्र बताओ। समय नष्ट करने से क्या लाभ ?"

"देखो राजेश, अब मुझे सारी स्थिति का गहराई से पता चल गया है। राधा ने यह नीच क्रिया तुम्हारी प्राप्ति के लिए ही की है। अब मै चाहता हूँ यदि किसी प्रकार भी उसके प्राणो की रक्षा हो सके, तो मै उसका विवाह तुम्हारे साथ ही कर दूँ। तुम्हारी प्राप्ति के लिए जब वह इतनी अन्धी हो सकती है तो तुम्हारा भी कुछ धर्म अवश्य है। तुम्हे उसकी अन्तिम अभिलाषा पूर्ण करनी ही चाहिए।"

"इसका दूसरा अर्थ यह भी है कि आप उसकी इस नीच क्रिया का समर्थन भी करते है।"

"नही राजेश ऐसा तो कभी हो ही नही सकता।"

"आपके कथन से यह बात स्वयँ सिद्ध हो गई है। यह बात आपने यहाँ कही है। यदि कही और कहते तो कुछ और ही हो जाता।"

"आप क्या उसकी इतनी इच्छा भी पूरी न करोगे ?"

"आप यहाँ से जा सकते है। मुझे इस सम्बन्ध मे कोई बात नही सुननी है।"

राधा के पिता आशा के प्रतिकूल उत्तर पाकर वहाँ से लौट पडे। उनके जाते ही राजेश रजनी को भूलकर राधा के विषय मे सोचने लगा—

"हत्यारी राधा से मिलन और विवाह। कितना विचित्र है यह प्रश्न। अपने कल्पित स्वार्थ के लिए जो दूसरो के प्राण ले सकती है भला उससे पतित स्त्री और कौन होगी। ऐसी को देखना भी पाप है। वह नारी जाति का जीवित कलक है। कलक जितना शीघ्र मिटे उतना ही अच्छा है। विचित्र है यह राधा का पिता, जो पाप की गठरी को सिर पर रखकर दौडना चाहता है।"

राधा के विषय मे सोचता हुआ राजेश कुछ दार्शनिक सा भी बन गया। वह गहराई मे उतर कर सोचने लगा—

राधा ने यह नीचाति नीच क्रिया क्यो की ? उसे स्वयँ से ही उत्तर मिला—देखो राजेश ! तुमने ही उसकी भायनाओ को जगाया था। जाग्रत भावना उसी बाढ के समान है, जो कुछ न कुछ अनिष्ट किये बिना नही रहती। वह अपनी बुरी या भली दुनियाँ से पूर्ण सन्तुष्ट थी। वह सो रही थी, तुमने उसे जगाया। यह सोचा ही नही उसे जाग्रत होने पर क्या करना चाहिए। तुम दोषी अवश्य हो। अन्धा न्याय तुम्हे दोषी नही मान सकता। फिर भी तुम दोषी हो। जिस अग्नि को तुमने अपने चारो ओर जगाया था उसी की लपटो ने तुम्हारी पत्नी को क्षार बना दिया है।"

राधा की अल्पबुद्धि ने अपने कल्पित पथ मे राजेश्वरी को ही सब से बडी बाधा पाया था। उसने उसी को हटाने के लिए ऐसा कुत्सित क्रम किया है। व्यापक दृष्टि से देखो। दुनियाँ का प्रत्येक व्यक्ति ही अपने पथ का निर्माण करते हुए, बाधाओ को दूर करता हुआ आगे बढता है। अपनत्व का पोषण ओर परत्व का हरण, यही है जीवन की वास्तविक गति। बडे-बडे आदर्शवादी भी इस गति को समयानुसार अपनाते हुए पाए जाते है। जहाँ ऐसा नही है, वहाँ प्राणी मनुष्यो की पक्ति से उठकर देवताओ की श्रेणी मे चला जाता है। अपने आँचल मे झाँक कर देखो राजेश, कुछ दोष तुम्हारा भी है।

उसी समय राजेश की भावनाओ ने अगडाई ली। वह चीख पडा—

"देवी राजेश्वरी मुझे क्षमा कर देना। जिस बाघिन ने तुझे मृगी समझ कर निगल लिया है। उसको बढावा देने का कुछ दोषी मै भी हूँ। परन्तु अब क्या हो सकता है। जो तीर हाथ से छूट गया वह लौटकर नही आ सकता। कितना अच्छा होता आज तुम जीवित होती।'

राजेश जब भावो मे डूबा हुआ था उसी समय उसका भाव धन्नू ने भग कर दिया। उसने देखा—

धन्नू अपने अनेक साथियो सहित उसके सम्मुख खडा है। धन्नू ने रात भर मिल मे एक नई चेतना को जन्म दिया और फिर मार्ग दर्शन के लिए वह राजेश के पास आ गया। बडप्पन की तो उसमे पहले से ही इच्छा थी। पहले वह पहलवान कहने से ही फूल जाता था और अब वह सबका नेता बन कर सन्तुष्टि का इच्छुक हो गया है। धन्नू और उसके साथियो के प्रणाम का उत्तर देकर राजेश सड़क पर गया और सबके लिए चाय का आर्डर दे आया।

वह आते ही धन्नू को सम्बोधित कर बोला—

"बैठो भाई, खडे क्यो हो ?"

धन्नू ने सबकी ओर से बोलते हुए उत्तर दिया—

"पहले तो आप हमे माफी दे दे बाबूजी। हम तो अन्धे थे। अब तक फेंके हुए टुकडो पर ही जीते रहे।

"कोई बात नही धन्नू भाई, सुबह का भूला शाम को घर लौट आये तो वह भूला नही होता। आप अब भी बहुत कुछ कर सकते है।"

"आप रास्ता दिखाएँ बस चलना अब हमारा काम है।"

उसी समय चाय आ गई और सबने एक साथ चाय पी। जब राजेश पैसे देने लगा तो धन्नू न माना। उसने पैसे अपने पास से ही दिये।

पैसे देता हुआ वह बोला—

"ये पैसे तो धर्मार्थी के ही है बाबूजी। हमारे घर के नही है।"

इस कथन के साथ ही सब हँसते हुए चल पडे। सबने प्रणाम कर राजेश को मिल मे आने के लिए कहा और राजेश ने उदारता भरे स्वर मे कहा—

"अच्छा भाइयो मै आज अवश्य आऊँगा।"

४२

उस रात रजनी की नीद भी हवा हो गई। वह घर जाकर चुप-चाप बिस्तर पर पड गई। बच्चे को वक्ष से लगाकर उसने सोने का प्रयत्न किया। एक करवट से पडे-पडे उसकी करवट मे दर्द हो गया। रात के एक बजे तक वह बराबर विचारो मे उलझती चली गई। चिन्तन तो वैसे उसका दैनिक कार्य है फिर भी आज वह जैसे किसी महत्त्वपूर्ण निर्णय के निकट पहुँचना चाहती हो। उसके मस्तिष्क मे अनेक प्रश्न उठे, और उनका उत्तर भी स्वयँ ही देती रही। वह सोच रही थी—

आखिर मै राजेश के पास क्यो गई। उसको अपने से ही उत्तर मिला—जब वह तेरे है तो उनके पास जाना कोई पाप नही है। अपनों के पास जाना किस विवेकी ने पाप बताया है। उसने फिर अपने से ही प्रश्न किया—जब वह तुझे ही अपनी नही समझते तो तुझे भी दूर ही रहना चाहिए था। और अगर गई तो उनके निश्चय का विरोध कर क्यों चली आई। जानती हो राजेश के मस्तिष्क मे इसकी कितनी प्रतिकूल प्रतिक्रिया होगी। चली थी कुछ पाने और आई है गाँठ से भी कुछ खोकर। बता तूने यह भूल क्यो की है? महान् से महान् व्यक्ति भी कहीं दुर्बल अवश्य है। विशेषकर इस दृष्टि से मनुष्य की दुर्बलता चिर परिचित है, जिससे तूने राजेश को देखा है।

रजनी ने अपनी भूल का पश्चाताप सा किया—अब क्या हो सकता है। कितना अच्छा अवसर था। राजेश की शकाओ की दीवार एक पल

मे धराशायी हो जाती । नारी के सौन्दर्य की मदिरा के सेवन करने के पश्चात् पुरुष उसके दोष निकालने वाली दृष्टि से अन्धा हो जाता है। यदि मै अतीत की एक प्याली राजेश को पिला देती तो निश्चित ही उसका निश्चय कच्चा धागा बनकर रह जाता ।

काठ को बेधने वाला मनचला मधुकर कमल कोष मे बैठकर सारी चचलता भूल जाता है । इस पर भी राजेश भ्रमर नही है यह मै जानती हूँ । वह मेरा पति है इसीलिये उसने मेरा हाथ पकडा था । यदि कोई और स्त्री होती तो राजेश कभी ऐसा आचरण न करता ।

रजनी ने विचार मन्थन के पश्चात् निश्चय किया - कल मै फिर राजेश के पास जाऊँगी । मुझे अपनी भूल की क्षमा मागनी ही चाहिए। वह क्षमा करे या न करे यह उन पर निर्भर है। मुझे अपने कर्त्तव्य का पालन करना ही होगा । वह क्रुद्ध होगे तो मै समझूँगी वह मेरे है। अपनो की भूलो पर ही अपने क्रोध ही किया करते है । यदि वह तटस्थ से हो गये, उन्होने कुछ नही कहा । मै समझूँगी, वह अब मेरी ओर से विरक्त हो गये है। मै चाहती हूँ वह सीमा से अधिक क्रोध करे । इससे एक ओर उनके प्रेम की परीक्षा होगी और दूसरे उनकी खुमारी भी कुछ मध्यम हो जायेगी । क्रोध की अति इति भी बन सकती है । आज का उनका क्रोध पश्चाताप भी बन सकता है। जिस दिन वह कहेगे 'मैने भूल की है' उस दिन मै स्वयँ को सबसे अधिक सौभाग्यवती समझूँगी ।"

रजनी ने जीवन के भावी निश्चय पर विचार किया—पुरुष नारी को पहेली कहता है, विपरीत इसके मै आज राजेश को पहेली कहूँगी । हाँ इतना अवश्य है कि यह पहेली मधुर बहुत है। मै भी इसको जानकर ही रहूँगी । मदिरा की प्याली पिलाकर उन्मत्त करने की बात मैं सोच रही थी । यह भी ऐसी भूल है। मै कोई वैश्या नही हूँ। मुझे तो कुशल गृहिणी बन कर दिखाना है। पुरुष को भोगान्ध बनाकर जो नारी मुट्ठी मे बन्द करती है, वह अच्छी नारी ही नही है । नारी को राजेश पुरुष के कर्त्तव्य की प्रेरणा मानते है । वह इस समय कर्त्तव्य

के पथ मे जूझ रहे है। धर्मार्थी से सघर्ष पर उनकी विजय होनी ही चाहिए। उनके मन मे हजारो मजदूरो का दर्द समाया हुआ है। इस स्थिति मे मुझे उनकी प्रेरणा बनकर ही चलना है। जिस धर्मार्थी से वह नैतिक सघर्ष कर रहे है वही तो हम दोनो के मध्य शका की दीवार बन कर खडा हुआ है। वह उसे गिरा कर ही दम लेगे। कितना शुभ दिन होगा जब मै धर्मार्थी की उनके द्वारा पराजय देखूँगी।

उस समय दो बजे होगे। रजनी बच्चे को छाती से लगाये विचारो मे डूबी हुई थी।

न जाने क्यो बच्चा रो पडा। वृद्धा तुरन्त बत्ती जलाकर बच्चे के पास आ गई। वह बच्चे को थपकियाँ देने लगी। उसने देखा रजनी भी जाग रही है। वृद्धा को आश्चर्य हुआ पहले कभी रजनी जागती हुई नही पाई। मै तो कई बार बच्चे को देखती हूँ। आज जरूर कोई बात है। शाम रजनी देर से भी आई थी। इस समय वह कुछ विचार कर रही है। वृद्धा ने फिर रजनी से पूछा—

"सो जाओ बेटी। तुम क्यो जाग रही हो?"

रजनी ने करवट बदलते हुए उत्तर दिया—

"आँख खुल गई थी माताजी।"

"रात को तुम आराम से सो जाया करो बेटी! बच्चे को तो मैं आप सभाल ही लेती हूँ।"

"सो रही हूँ माताजी।"

इतना कहकर रजनी शान्त हो गई। कुछ देर मे वृद्धा भी बच्चे को सुलाकर शान्त हो गई। रजनी इस समय चिन्तन के भार से दबकर थक चुकी थी। उसे कुछ नीद की झपकी सी आ गई। स्वप्न मे उसने देखा—

'वह एक टीले पर खडी है। उसकी दृष्टि के सम्मुख कुछ झाडियाँ है। उन्ही झाडियो मे से उसे कुछ खाई सी दिखाई दे रही है। राजेश उसी खाई मे अचेत सा पडा है। वह कुछ सचेत सा हुआ। उसने आँखें

फाड-फाडकर चारो ओर देखा । न जाने उसे क्या हो गया है । वह उठ नही पा रहा है । रजनी से न रहा गया । उसकी भावना उमडी और वह उसी ओर दौड पडी । उसका सारा शरीर झाडियो मे छिल गया । उसे इसका कुछ भी ध्यान नही है । तीर की भाँति वह राजेश के पास दौड गई । उसने देखा—

राजेश पगु सा बना हुआ है । रजनी ने अपने कधे का सहारा देकर उसे उठाया । उसने जैसे ही राजेश को उठाकर गले से लगाया । वह कराह पडा—"तुम कितनी महान् हो रजनी । मुझे क्षमा कर दो देवी ।"

रजनी सचमुच चीख पडी ।

"मुझे ही क्षमा कर दो मेरे देवता ।'

रजनी की चीख सुनकर वृद्धा और वृद्ध दोनो ही जाग गये । वह दोनो ही रजनी की चारपाई के पास आ गये । वृद्धा ने रजनी के सिर पर हाथ रखकर उसे जगाते हुए कहा—

"क्या बात है बेटी ?"

"कुछ नही माताजी, एक स्वप्न सा देखा था ।"

वृद्धा शान्त हो गई और फिर वृद्ध ने पूछा—

"आज तुम कुछ उदास भी दिखाई दे रही हो । क्या बात है ठीक बताओ ?"

रजनी को बताना पडा—

"कल मैं छ. बजे उनसे मिलने गई थी ।"

"तुम्हारी माता ने तो मुझे नही बताया ।"

वृद्धा अपनी ओर पानी ढलता हुआ देख बोली—

"मै क्या बताती । मैंने तो समझा कोई काम गई होगी । कल कुछ झाकियाँ भी तो निकली थी । मुझे लगा--क्या पता वही देखने गई हो ।'

"तो फिर वहाँ कौनसी विशेष बात हो गई ।"

"यह मैं कल माताजी को बता दूँगी ।"

वृद्ध ने इतने से ही कुछ अनुमान लगाकर कहा—"देखो बेटी! आने जाने मे तो कोई हानि नही है। फिर भी मै एक बात अवश्य कहूँगा। जब तक राजेश के मन की शका दूर न हो जाए, तुम्हे उसके पास अकेले नही जाना चाहिए। शका से उत्पन्न क्रोध जहा स्थायी रूप धारण कर जाये, वहाँ बहुत सभल कर चलना चाहिए। शका की निवृत्ति के बिना क्रोध शान्त नही होता। जहाँ तक शका निवारण का प्रश्न है, वह किसी विशेष घटना के बिना सभव नही है। धैर्य रखो, एक दिन वह अवश्य आयेगा, जब राजेश को अपनी भूल के लिए पश्चाताप करना ही होगा। हमारे पथ की ठोकरें हमे सचेत करती है—सभल कर चलो। जो ठोकर खाकर भी सचेत नही होते उन्हे एक दिन अपनी सम्पूर्ण गति से हाथ धोना पडता है। मानव का धर्म है कि वह अपनी ओर से कोई भूल न करे, और जहाँ तक सम्भव हो, दूसरो की भूलो को क्षमा कर दे। अभी राजेश तुम्हारी माँग को जो वास्तव मे उचित है, तुम्हारी दुर्बलता समझता है जब तक तुम दुर्बल हो तुम्हारी बात बालू की रेखा से बढकर और कुछ नही है। और जिस दिन तुम उसकी दृष्टि मे सबल और सचरित्र सिद्ध हो जाओगी, तुम्हारी बात पत्थर की रेखा बन जायेगी।"

वृद्धा से न रहा गया। वृद्ध का लम्बा भाषण सुन वह बोली—

"अब सोने भी दोगे। तुमने तो पोथी ही खोल कर रख दी।"

"तुम्हे नीद आ रही है तो तुम सो जाओ।"

वृद्धा इस कथन के साथ ही चुप हो गई। वृद्ध फिर बोले—

"देखो रजनी! अच्छा होता तुम हमसे पूछ कर जाती। मैं तो जब भी तुम चाहो, तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।

"आपका आदेश मुझे शिरोधार्य है, पिताजी।"

"बस फिर अब सो जाओ।"

वृद्ध इस कथन के साथ ही बाहर चले गये। उनके जाते ही रजनी ने सक्षेप मे वृद्धा को सारी घटना का सक्षिप्त परिचय दे दिया। वह फिर सो गई। इस समय वह मन के भार को कुछ हल्का सा कर चुकी

थी, इसीलिये उसे पडते ही नीद आ गई ।

वृद्ध जब बाहर से लौटकर आये, चार बज चुके थे । उनके आते ही बातो की शृ खला जुड गई ।

"रजनी देर से आई थी तो तुमने मुझे क्यो नही बताया था ।"

"बता तो दिया । मैने समझा कोई काम हो गया होगा ।"

"वहाँ गई तो क्या बाते हुई ।"

"कुछ नही यूँ ही छेड-छाड हो गई थी ।"

"छेड-छाड कैसी ? मुझे ठीक समझाओ । कही कोई ऐसी वैसी बात तो नही हो गई है । तुमने कुछ पूछा भी है ?"

"मैने पूछ लिया । लडके ने हाथ पकड लिया था । रजनी छुडवा कर तुरन्त भाग आई । बस इतनी सी बात हुई है ,"

"वही बात हो गई । अब राजेश और भी क्रुद्ध हो गया होगा ।"

"भगवान ही जाने आदमियो को । एक समय होते है पत्थर से भी कठोर और फिर दूसरे समय बन जाते है पिघल कर मोम से ।"

"तभी तो कह रहा हूँ । इस समय उसके पास नही जाना चाहिए ।"

"हमारी बेटी स्वयँ भी तो समझदार है ।"

"इस आयु मे मनुष्य की समझ ही उसकी सबसे बडी शत्रु होती है देवी जी । कुछ पता भी है यौवन काल मे युवक युवतियो अपने मे समझ मानकर ऐसी भूल कर बैठते है जिनके लिए आयु भर रोना पडता है ।"

"मुझे क्या समझा रहे हो । मै तो अब बुढिया हूँ ।"

"तुम तो बुढिया हो, परन्तु बेटी तो बुढिया नही है ।"

"अच्छा अब सो जाओ । आज तो सिर मे ही दर्द कर दिया ।"

"अब सोने का समय नही है । आज रजनी को नही जगाना है ।"

और फिर दोनो दिन निकलने तक बाते ही करते रहे ।

४३

राजेश ने पढा है—कर्त्तव्य के पथ मे फूल और शूल की समान आवृत्ति होती है। इस समय उसने इसका व्यवहारिक जीवन मे अनुभव भी कर लिया है। उसने निश्चय किया है—मुझे शूलो से लडते हुए आगे बढते जाना है। यौवन के भोग की वह अब निवृत्ति समझ बैठा है। इसीलिए अब उसकी सम्पूर्ण शक्ति कर्त्तव्य पालन मे लग गई। जब से धन्नू की उसने अनुकूलता पाई है, उसका उत्साह और भी बढ गया है। धन्नू को उसने वचन दिया था—"मैं अभी मिल आऊँगा। उसी के पालन के लिए वह तैयार हो दस बजे मिल चल पडा। घर मे निकलते ही उसने देखा—उसके पिता रमानाथ किसी को साथ लिए आ रहे है। वह उनके आने का कारण समझ गया। यह सब विवाह की भूमिका है। उनको कमरे की चाबी देकर वह प्रणाम कर मिल चला गया।

राजेश ने जाते ही मिल मे आशातीत परिवर्तन पाया। वह जहाँ गया उसका वहाँ हृदय से स्वागत हुआ। धन्नू ने बारह घन्टे मे जैसे बारह वर्ष का काम कर दिया हो। धन्नू राजेश को जाते ही मिल गया। दोनो निर्भीक सारे क्वाटरो मे भ्रमण करते रहे। दोनों का गठबन्धन देखकर मजदूर आज अति प्रसन्न थे। उन्हे जैसे चाणक्य और चन्द्रगुप्त की जोडी मिल गई हो। ठीक भी है बुद्धि और वीरता का सयोग होने से सफलता सभव हो जाती है। संसार के शेष मजदूरो को यदि ये दो बल प्राप्त हो जाये तो दुनियाँ मे पूँजीपतियो का निशान भी न रहे।

राजेश और धन्नू की इस मित्रता का किसी गुप्त सूत्र से धर्मार्थी

जी को भी तुरन्त पता चल गया। वे अपने कमरे के उस बरामदे मे कुर्सी डालकर बैठ गये, जहाँ से सारे क्वार्टर दिखाई देते है। दोनो को क्वार्टरो मे भ्रमण करता देख, धर्मार्थी जी की पुतलियाँ फिरने लगी। वे जानते है—धन्नू चाहे वीर नही है फिर भी मिल के मजदूर उससे भय अवश्य खाते है। उसकी एक टोली है। वह उसी का सरदार है। मेरे हाथ का समय या कुसमय मे चलने वाला यह एक शस्त्र था। इसे भी राजेश के बच्चे ने उसकी धार उल्टी कर दी है। अब यह शस्त्र मेरे सिर पर पड सकता है।

भावी आशकाओ मे डूबे धर्मार्थी जी ने उक्ति सोची—

"आज घर लौटते हुए, इस राजेश के बच्चे के कुछ नही तो हाथ पाँव अवश्य तोड दूँगा। यह कार्य मुझे कार द्वारा टकरा कर करना है।"

राजेश अपने पिता को घर छोडकर आया था। इसीलिए धन्नू से विदा होकर वह एक बजे ही मिल से चल पडा। धन्नू ने चलते समय कहा—

"चलिए मै आपको घर छोड आऊँ।"

"ऐसा क्या मै बच्चा हूँ धन्नू भाई। कल फिर मिलूँगा।"

राजेश धन्नू से हाथ मिलाकर साइकिल द्वारा घर को चल दिया। धर्मार्थी जी यह सब बैठे हुए देख रहे थे। थोडी ही देर मे वे भी अपनी कार लेकर चल पडे। उन्होने राजेश को रोहतक रोड पर जाते हुए देखा। वह अपने विचारो मे खोया हुआ साइकिल पर धीरे-धीरे जा रहा था। अवसर पाकर धर्मार्थी जी ने कार को तेज कर दिया और राजेश से टकरा दिया। कार राजेश के पाँव और साइकिल को कुचलती हुई रुक न सकी। कार के टकराते ही धर्मार्थी जी के हाथ पाँव फूल गये। वह एक वृक्ष से टकरा गई। कार के शीशे धर्मार्थी जी से टकरा कर चूर-चूर हो गये। फिर एक क्षण मे ही वे गाडी के इजन मे फसकर अचेत हो गये !

इस भयकर दुर्घटना को देख, वहाँ आने जाने वालो का एक जम-घट लग गया। पुलिस को फोन किया गया और फिर दस मिनट मे ही पुलिस का उडन दस्ता घटना स्थल पर पहुँच गया। उस समय राजेश आहे भर रहा था। उसकी टूटी टाग से रक्त स्रवित हो रहा था। था। धर्मार्थी जी पूर्णतया अचेत इजन मे फसे हुए थे। कार का अगला भाग अन्दर को धस गया था। धर्मार्थी जी का सिर उसी मे फँसा हुआ था। उनका सास रुक-रुक कर चल रहा था। इस दुर्घटना की आस-पास भी खबर हो गई। राजेश को जानने वाले भी एक दो व्यक्ति वहाँ आ गये। दूसरी ओर धर्मार्थी जी के जानकार तो स्वयँ पुलिस वाले ही थे। कुछ देर मे दोनो को अस्पताल ले जाने की व्यवस्था भी हो गई। उस समय राजेश के पिताजी भी वहाँ आ चुके थे। अपने बेटे की ऐसी दशा देखकर वे पीले पड गये। पुलिस जब दोनो को लेकर चली, तो राजेश के पिता भी उनके साथ चल दिये। पुलिस ने अस्पताल मे देखा—धर्मार्थी जी, सदैव की नीद सो चुके है।

सेठ जी ने धर्मार्थी जी की मृत्यु की सूचना पाते ही मिल मे छुट्टी करा दी। वे सपरिवार अस्पताल पहुँचे और उनके साथ ही मिल के कुछ बडे अधिकारी भी वही पहुँच गये। धर्मार्थी जी की शव यात्रा अस्पताल से निगम बोध घाट के लिए ठीक सात बजे आरम्भ हुई।

राजेश अचेत तो नही था, परन्तु सचेत सा भी नही कहा जा सकता। उसके शरीर का रक्त उसी प्रकार रिक्त हो चुका था जैसे गन्ने से रस। उसके लिए तुरन्त रक्त की व्यवस्था की गई। जिस समय राजेश को रक्त दिया जा रहा था, अस्पताल के द्वार पर मजदूरो की भीड़ उसे देखने के लिए उतावली हो रही थी। रजनी भी उसी समय ड्यूटी से निवृत हो घर जाने के लिए अस्पताल से बाहर आई। उसने कुछ परिचित मिल मजदूरो से यूँ ही बातचीत आरम्भ कर दी। उनसे सारी घटना का पता चलते ही वह तुरन्त राजेश के पास पहुँच गई। वहाँ पहुँच रजनी ने देखा—राजेश एक पाँव से पगु बन चुका है। उसे रक्त दिया जा रहा है। जो डाक्टर और नर्स राजेश के पास थे, रजनी को जानते

थे, इसीलिए रजनी राजेश के पास किसी रुकावट के बिना ही पहुँची और देखते ही हत प्रभ हो गई।

नर्स होकर भी न जाने रजनी को क्या हुआ। वह राजेश की इस दशा को देख ही नही पाई। उपस्थित नर्स ने रजनी को धैर्य बधा कर वार्ड से बाहर स्पेशल रूम मे लाकर लिटा दिया। उसके साथ ही राजेश के पिता भी वहाँ आ गये। दोनो वही पर बातो मे खो गये। राजेश के पिता ने रजनी को सान्तवना दी—"धैर्य रखो बेटी। प्राण बच गये यही सब कुछ है।"

अस्पताल मे डाक्टर और नर्सों को पता चल गया—यही रजनी के पति है। फिर क्या—एकदम स्पेशल व्यवस्था हुई। चिकित्सा का विशेष प्रबन्ध हुआ। और फिर रजनी ने अपने बच्चे, वृद्ध और वृद्धा को भी अस्पताल मे बुला लिया। वह जानती थी कि सारी रात उसे उनके पास ही रहना होगा कुछ देर के लिए रजनी बाहर गई और मजदूरो को कृतज्ञता प्रकट करते हुए विदा कर दिया।

अगले दिन प्रात छह बजे राजेश ने सचेत हो आँखे खोल दी। उसने देखा--रजनी उसके सिर पर हाथ रखे उदासी की जीवित मूर्ति बनी खडी है। राजेश ने एक दृष्टि रजनी को देख ऑखे बद कर ली। रजनी ने देखा—राजेश की ऑखे कुछ गीली है और उनमे इतना कुछ लिखा है जिसको पढने मे युग बीत जायेगे। दृष्टि मे नेत्रो की पुस्तक का साराश हृदयागत कर रजनी ने राजेश की ऑखो पर अपने दोनो हाथ धीरे से टिकाते हुए कहा —

"अधीर न हो मेरे प्राण परीक्षा की अवधि समाप्त हो गई।"

धैर्य बधाती हुई रजनी स्वयँ ही अधीर हो गई। उसकी आँखें आँसुओ से भर गई। उसने राजेश के मुँह पर कुछ कहने के लिए जैसे ही गर्दन झुकाई, उसकी ऑखो से ऑसू की दो बूँदे राजेश के गालो पर गिर पड़ी। राजेश कुछ कहना ही चाहता था, रजनी ने तुरन्त उसके मुँह पर हाथ रखकर कहा—

"बातो के लिए भविष्य बहुत पडा है। अभी शाँत रहो।"

रजनी ने जैसे ही हाथ उठाया, राजेश के मुख से फूट पडा—

"मुझे क्षमा कर दो देवी। मेरा बच्चा कहाँ है ?"

राजेश की आँखें इस कथन के साथ ही पुन गीली हो गई। रजनी ने रूमाल से आँखे पोछकर बच्चे को उसे दे दिया और वह उसे देखते ही गद्गद् हो गया। जैसे उसकी सारी पीडा शून्य मे विलीन हो गई हो।

उसी समय वह डाक्टर भी वही आ गया, जो कुछ दिन पूर्व से रजनी को आँखो मे बसाकर चल रहा था। वह बोला—

"ये तुम्हारे पति हैं रजनी ?"

रजनी ने सर झुकाकर धीमे स्वर मे उत्तर दिया—"जी हाँ।" डाक्टर फिर राजेश से बोला—

"तुम्हारी पत्नी स्त्री नही, देवी है, राजेश"

इन कथन को सुनकर राजेश स्वर्गीय कल्पनाओ मे खो गया। बोला वह कुछ नही। उसने दृष्टि मोड दूसरी ओर देखा—वृद्धा बच्चे को गोद मे लिए खडी थी। वह भावमग्न हो बच्चे को टकटकी लगा-कर पुन देखने लगा। राजेश के पिता ने बच्चे को वृद्धा की गोद से अपनी गोद मे लेकर राजेश के बिलकुल पास बैठा दिया। राजेश ने एक अगुली बच्चे के कपोल पर टिका कर, एक आशा भरी लम्बी सी सास ली। रजनी उस समय एक ओर खडी सुखद कल्पनाओ मे खोई हुई थी।

रजनी को वही छोड फिर सब वहाँ से विदा हो गये। सबके जाते ही राजेश रजनी से धीमे स्वर मे बोला—

"अब मुझे सडक पर बैठना पडेगा रजनी।"

"क्या कह रहे है आप। अभी मैं जीवित हूँ मेरे स्वामी आजीवन मेरे सिर पर स्थान पायेंगे।"

"शरीर का एक अग तो भग हो ही गया है देवी।"

"शरीर के अग तो होते ही भग होने के लिए है, मेरे देवता। इस सम्बन्ध में तो मन का भग होना दुखदायी होता है और हमारे मन अब

सदैव के लिए एकाकार हो चुके है।

"तुम कितनी मूर्ख हो रजनी।"

"क्यो?"

"मेरे सारे अपराधो को एक पल मे ही भूल गई।

"स्वस्थ होने पर दण्ड भी दूँगी।"

यह कहते हुए रजनी के मुख पर धीमी सी मुस्कान फैल गई। उसका ध्यान तुरन्त अपने बच्चे की ओर मुड गया।

बच्चा अपने पिता के वक्षस्थल पर अचल शाति से लेटा हुआ उनकी आँखो मे आये आँसुओ को अपने नन्हे हाथो से हटाकर इस तरह से देख रहा था जैसे उसे जीवन पर्यन्त के लिए कोई अतुल निधि प्राप्त हो गई है।